॥ ओ३म् ॥

चौदहवीं का चाँद

लेखक

स्मृतिशेष पं० श्री चमूपतिजी एम० ए०

अनुवादक

स्व० पं० शिवराजसिंहजी मौलवी फ़ाज़िल

सम्पादक

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

[दो सौ से ऊपर पुस्तकों के प्रणेता]

प्रकाशक :

श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास

ब्यानिया पाड़ा, हिण्डौन सिटी (राज०)-३२२ २३०

प्रकाशक : **श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास**
ब्यानिया पाड़ा, हिण्डौन सिटी, (राज०)- ३२२ २३०
दूरभाष : ०९३५२६७०४४८
चलभाष : ०९२१४०३४३८८, ०९८८७४५२९५९

संस्करण : २००८ (ऋषि दयानन्द के बलिदान का १२५वाँ वर्ष)

मूल्य : ९०.०० रुपये

प्राप्ति-स्थान :
१. हरिकिशन ओम्प्रकाश, ३९९, गली मन्दिरवाली, नया बाँस, दिल्ली-६, चलभाष : ०९३५०९९३४५५
२. श्री राजेन्द्रकुमार, १८, विक्रमादित्य पुरी, स्टेट बैंक कॉलोनी, बरेली (उ०प्र०) चल० : ०९८९७८८०९३०
३. श्री वैदिकानन्द, श्री स्वामी दयानन्द ब्रह्मज्ञान आश्रम न्यास, वैदिक सदन, भँवरकुँआ, इन्दौर-४५२ ००१, चलभाष: ०९३०२३६७२००
४. गणेशदास-गरिमा गोयल, २७०४, प्रेममणि-निवास, नया बाजार दिल्ली-६, चलभाष : ०९८९९७५९००२
५. पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, प्रकाशन मन्दिर, वेदसदन, अबोहर-१५२ ११६

लेजर टाईपसेटिंग : आर्य लेजर प्रिंट्स, हिण्डौन सिटी, राजस्थान

मुद्रक : अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-११० ०३४

समर्पण

देश, जाति व धर्म की सेवा व रक्षा के लिये सर्वस्व निछावर करनेवाले धर्मवीर पं० लेखराम की परम्परा के एक निर्भीक विद्वान्, शास्त्रार्थ महारथी, स्वतन्त्रता सेनानी

व

यशस्वी आर्य पत्रकार साहित्यकार स्वर्गीय श्री पं० धर्मभिक्षु जी लखनवी की पावन स्मृति

में

सादर समर्पित

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

विषय-सूची

प्रकाशकीय

हमारे देश में मुसलमानों के आक्रमण ७१२ ई० से होते रहे, परन्तु १०२६ ई० से पूर्व उनका भारत में शासन स्थापित नहीं हो पाया था। भारत में शासन स्थापना के बाद उन्होंने यहाँ की सभ्यता, संस्कृति एवं धर्म पर निरन्तर प्रहार किये।

१९वीं शताब्दी में भारत के अहोभाग्य से महर्षि दयानन्द का आविर्भाव हुआ। महर्षि ने सत्य का प्रतिपादन करने के लिए सत्यार्थप्रकाश की रचना की। इसके १४वें समुल्लास में कुरान की आयतों के मुसलमान विद्वानों द्वारा किये गये अर्थों की समालोचना की। इससे रुष्ट होकर मुस्लिम विद्वानों ने समय-समय पर सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध कई पुस्तकें लिखीं, इनमें मौलवी सनाउल्ला खाँ की पुस्तक 'हक प्रकाश' भी शामिल है। इसमें महर्षि के दृष्टिकोण को न समझकर दुराग्रहों से ग्रसित होकर सत्यार्थप्रकाश पर अनर्गल आक्षेप किये गये।

उसी के जवाब में वैदिक विद्वान् श्री चमूपतिजी एम० ए० ने 'चौदहवीं का चाँद' नामक पुस्तक लिखी। इसमें मौलवी सनाउल्ला खाँ साहब के सभी आक्षेपों के उत्तर दिये और साथ-साथ यह भी दर्शाया कि सत्यार्थप्रकाश में जो भी लिखा गया है वह यथार्थ है।

यह पुस्तक काफी समय से अनुपलब्ध थी। साथ ही इसमें अरबी-फारसी के बड़े बोझिल शब्द थे जो सामान्य व्यक्ति के लिए दुरूह थे। उन सबको प्रा० राजेन्द्रजी 'जिज्ञासु' ने सरल किया ताकि यह पुस्तक सर्वसाधारण को सुगम्य हो सके। इससे सर्वसाधरण लाभान्वित हो यही प्रकाशन का उद्देश्य है।

—आर्यमुनि 'वानप्रस्थी'

प्राक्कथन

लेखक—**श्रीमान् पं० पद्मसिंहजी शर्मा** (प्रोफ़ेसर गुरुकुल काङ्गड़ी, अध्यक्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन)

हिन्दुओं के पारस्परिक गृह युद्ध के पश्चात् भारत में मुसलमानों का शासन युग आया। उस समय से यहाँ धर्म युद्ध व इस्लामी प्रचार के द्वारा इस्लाम के प्रसार का कार्य निरन्तर चला आ रहा है। लालच, पुरस्कार, भय प्रेरणा में आकर करोड़ों हिन्दू अपने पवित्र धर्म से पतित होकर इस्लाम के बन्दे बन गए। जब तक इस्लामी शासन रहा, इस्लामी धर्म युद्ध और अमुस्लिमों पर दण्ड कर (जज़िया) को इस्लाम के प्रसार का हथियार बनाया गया। तत्पश्चात् लेखनी, वाणी से काम लिया गया। हिन्दू जाति कुछ तो शताब्दियों के निरन्तर संकटों और कुछ अपने स्वभाव से विवश होकर इन धार्मिक आक्रमणों को विवेक शून्य बनकर सहन करती रही। महर्षि दयानन्द के अभ्युदय ने हिन्दुओं की आँखें खोलीं। महर्षि ने विधर्मियों के अत्याचारियों का निशाना बनी हुई जाति को ललकार कर पूछा—

कौम ए पैकरे बे हिस[१] तेरे पत्थर दिल में
कतराए खूं[२] न सही कोई शरर[३] है कि नहीं

महर्षि के सिंहनाद को सुनकर विरोधियों से अपना लोहा मनवाने के लिए लेखनी रूपी तलवार लेकर जो वीर सबसे पहले मैदान में उतरा वह श्रीमान् मुन्शी इन्द्रमणि साहब मुरादावादी है। उस समय एक नव-मुस्लिम अब्दुल्ला नामक (जो बनत, ज़िला मुज़फ्फर नगर वासी क्षत्रिय था) हिन्दुओं के विरुद्ध अनर्गल उत्तेजनात्मक वातावरण बना रहा था। हिन्दुओं के विरुद्ध दर्जनों पुस्तकें वह घोर घृणास्पद व अपमानजनक भाषा में गद्य व पद्य में लिख चुका था। मुन्शी इन्द्रमणि ने उसकी एक-एक पुस्तक का मुँहतोड़ उत्तर देकर उसे निरुत्तर बना दिया। मुन्शी इन्द्रमणिजी

१. पैकरे बे हिस (निर्जीव मूर्ति)। २. कतराए खूं (रक्त कण)। (३) शरर (चिनगारी)।

अरबी, फ़ारसी के उद्भट विद्वान् व महान् लेखक थे। इस्लामी साहित्य पर उन्हें अधिकार प्राप्त था। मियाँ अब्दुल्ला और दूसरे मुस्लमानों से जब मुन्शीजी की पुस्तकों का कोई उत्तर न बन पड़ा तो खिसियानी बिल्ली खम्बा नोचे के अनुसार मुन्शी इन्द्रमणि के विरुद्ध न्यायालय का द्वार खटखटाया। वाद प्रस्तुत किया गया। निचले न्यायालय में विरोधी अपनी बुद्धि चातुर्य से विजय प्राप्त कर प्रसन्न हो गए। महर्षि दयानन्द ने मुन्शीजी की सहायता के लिए सार्वजनिक अपील करके वाद उच्च न्यायालय में प्रस्तुत करा दिया। जहाँ से मुन्शीजी सभी आक्षेपों से मुक्त हो गए। अर्थ दण्ड से भी मुक्ति मिली और मुन्शीजी की पुस्तकों की ज़ब्ती का आदेश भी वापिस ले लिया गया। मुन्शीजी की मृत्यु के पश्चात् उनकी पुस्तकें अनुपलब्ध हो गयीं, परन्तु वे अपना उद्देश्य पूरा कर गयीं। हिन्दुओं को जीवित व विरोधियों को सावधान कर गयीं, अर्थात् उन्हें पता लग गया कि वे कितने पानी में हैं?

इसके कुछ समय पश्चात् मिर्ज़ा गुलाम अहमद कादियानी ने हिन्दू धर्म पर और विशेषतया आर्यसमाज पर नये सिरे से आक्रमण प्रारम्भ कर दिए। कादियानी साहब का उपयुक्त उत्तर पं० लेखरामजी, आर्य मुसाफ़िर ने दिया और ऐसा दिया कि कोई और क्या देगा? मिर्ज़ा साहब से जब कोई उत्तर न बन पड़ा तो पं० लेखरामजी की हत्या की भविष्यवाणी की गई और निःसन्देह उन्हें इसमें सफलता प्राप्त हुई, अर्थात् आर्य मुसाफ़िर बलिदान कर दिए गए। पं० लेखरामजी मरते-मरते अन्तिम आदेश दे गए थे कि **आर्यसमाज से लेखनी का कार्य बन्द नहीं होना चाहिए**। इस मृत्यु पत्र के अनुसार **आर्य मुसाफ़िर पत्रिका प्रकाशित की गई। लाला वज़ीरचन्द विद्यार्थीजी** के प्रबन्ध से यह कई वर्ष तक बड़े सुन्दर रूप में प्रकाशित होती रही[१]। आर्य मुसाफ़िर की अन्तिम इच्छा को पूरा करने के लिए **पं० भोजदत्तजी** ने भी काम किया और अच्छा किया। **आर्यसमाज ने विरोधियों पर आक्रमण करने में कभी पहल नहीं की**। और जो कुछ भी किया स्वात्म रक्षा से विवश होकर किया। परन्तु प्रसिद्ध

१. यशस्वी साहित्यकार श्री सन्तराम बी० ए०, पं० विष्णुदत्तजी एडवोकेट व महाशय चिरञ्जीलालजी प्रेम भी इसके सम्पादक रहे। —'जिज्ञासु'

सदा यह किया गया कि आर्यसमाज आक्रमणात्मक ढंग से कठोर आक्रमण करता है—कैसा निरर्थक व मिथ्या दोष है!

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम,
वह कत्ल भी करते हैं तो चर्चा नहीं होता।

अन्त में मौन भंग हुआ। आर्यजनता को श्रीमान् पं० चमूपतिजी का आभारी होना चाहिए कि उन्होंने "**जवाहिरे जावेद**" जैसी सत्यालोचनात्मक और विद्वत्तापूर्ण कृति के द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि—

अभी कुछ लोग, बाकी हैं जहाँ में।

पण्डित लेखरामजी के पश्चात् इतनी गौरवपूर्ण यह एक ही पुस्तक निकली है, जिस पर आर्यसमाज गर्व कर सकता है। आर्यसमाज के साहित्य में निःसन्देह यह सम्मान योग्य वृद्धि है।

सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास के विरुद्ध जितना बड़ा तूफ़ान विगत कुछ वर्षों से चल रहा है वह जनता की दृष्टि से ओझल नहीं है। इस सम्बन्ध में आर्यसमाज की ओर से उत्तर की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। मौन से भ्राँति फैल रही थी। कुछ लोगों का विचार बन चला था कि, चूँकि महर्षि दयानन्द अरबी-फ़ारसी के विद्वान् नहीं थे इसलिए सम्भव है उन्होंने कुरान मजीद पर सुने-सुनाए आक्षेप जड़ दिए होंगे। यद्यपि जानने वाले जानते थे कि जिस समय महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश लिखा है मुन्शी इन्द्रमणि और पण्डित उमराव सिंह जैसे अरबी-फ़ारसी के उद्भट विद्वान् उनके शिष्यों की शृंखला में आ चुके थे। ऐसे ज्ञानी शिष्यों की उपस्थिति में यह कैसे हो सकता था कि महर्षि जैसा सत्य शोधक पूर्ण सन्तोष किए बिना यूँ ही आक्षेप कर देता। धन्यवाद है कि पं० चमूपतिजी ने कुरान मजीद के सम्बन्ध में महर्षि के आक्षेपों को नितान्त सत्य सिद्ध कर दिया है। पण्डिजी के 'चौदहवीं के चाँद' को देखकर अनायास कहना पड़ता है—

ईं कार अज़ तो आयद व मरदां चुनीं कुनन्द[१]

१. यह एक फ़ारसी सूक्ति है। इसका अर्थ है कि यह कार्य जैसा आपने कर दिखाया है वीर पुरुष ऐसे ही किया करते हैं। —'जिज्ञासु'

'चौदहवीं का चाँद' आदि से अन्त तक मैंने स्वयं लेखक के मुँह से सुना है और पर्याप्त आलोचनात्मक ढंग से सुना है। मैं निर्विरोधरूप से कह सकता हूँ कि पुस्तक अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण, सत्य शोधक पद्धति से तर्कपूर्ण और सभ्यता पूर्ण भाषा में लिखी गई है। **'हक प्रकाश'** जैसी घिनौनी पुस्तक के उत्तर में सुयोग्य लेखक ने गम्भीरता व विवेक को नहीं छोड़ा है। ऐसे अवसरों पर वास्तव में बड़े संयम से काम लिया है, जो प्रशंसनीय है। इस पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ से इस बात का प्रमाण मिलता है कि लेखक ने अत्यन्त मनोयोग पूर्वक अनुसंधान किया है। प्रत्येक समस्या के लिए कुरान व कुरान के भाष्यों से प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं। पुस्तक में एक अध्याय भी बिना प्रमाण व युक्ति के नहीं लिखा गया। भाषा सरल व दार्शनिक है। भाषाशैली आकर्षक व पवित्र है। पढ़ने और सुनने में आनन्द आता है। **समाप्त किए बिना पुस्तक छोड़ने को मन नहीं करता।**

महर्षि ने कुरान की जिस उर्दू व्याख्या से अपनी पुस्तक में प्रमाण दिए हैं पण्डित चमूपतिजी ने उस व्याख्या को स्थान-स्थान पर उद्धृत करके महर्षि के आक्षेपों की सत्यता को पुष्ट व प्रमाणित कर दिया है।

इस 'चौदहवीं के चाँद' के प्रकाश में इस्लाम मत की सभी मान्यताओं व विश्वासों की वास्तविकता प्रकट हो जाती है। कोई विशेष और महत्त्व का सिद्धान्त बचा नहीं है, जिस पर इसमें तर्कपूर्ण व विस्तार से विचार न किया गया हो। सारांश चौदहवीं-का-चाँद एक ऐसी पुस्तक है जिसकी पर्याप्त समय से आवश्यकता अनुभव की जा रही थी और प्रत्येक सत्यान्वेषक के लिये इसका पढ़ना अनिवार्य कर्त्तव्य है।

भूमिका

गत शताब्दी में धार्मिक जगत् में जितनी पुस्तकें लिखी गई हैं उनमें सत्यार्थप्रकाश को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है (यह अब तक संसार भर की अनेक भाषाओं में लाखों की संख्या में छपकर मानव मात्र का पथ-प्रदर्शक बन चुका है)।[1] इसके द्वारा धार्मिक प्रजा के विचारों में एक विचित्र क्रान्ति उत्पन्न हुई है। जिन मतों की आधारशिला केवल अपने आचार्यों की प्रतिलिपि पर थी उन्होंने उसे बुद्धि का सहारा लेकर विचार करना प्रारम्भ कर दिया है। बुद्धि की सहमति व बुद्धि द्वारा चिन्तन प्रारम्भ कर दिया है। और जो लोग केवल अपनी बुद्धि के सहारे चल रहे थे उन्होंने प्राचीन जातियों के धर्म एवं ग्रन्थों में किसी श्रेष्ठतर चिन्तन का दर्शन करना प्रारम्भ कर दिया है।

ऐतिहासिक सम्प्रदायों का स्तर अपने से पूर्ववर्ती सम्प्रदायों के निरस्तीकरण और एक नए युग की आवश्यकतानुसार भवन निर्माण के रूप में उभरा था। आश्चर्य की बात यह थी कि प्रत्येक नया सम्प्रदाय यह घोषणा भी साथ ही करता था कि मेरे पश्चात् और सब घोषणाएँ सुनने से पूर्व ही निरस्त समझी जाएँगी। **प्राचीनों को अर्वाचीनों** पर आपत्ति थी कि उन्होंने हमारे शताब्दियों के सफल सामाजिक व धार्मिक परिश्रम पर पानी फेर दिया है। हमने उनके लिए युद्धरत सेना के अग्रिम दस्ते का कार्य किया। अब ये हमें मौन रहकर जीवन व्यतीत करने की आज्ञा भी नहीं देते **(प्रमाण के लिए पूर्व व पश्चिम के रक्तरंजित भीषण धार्मिक युग इतिहास में भरे पड़े हैं[2])**। नवीन सम्प्रदाय पुरानों का रोना रोते हैं कि यह जर्जरित विचारधाराओं के ठेकेदार स्वयं सुधार व नवीनीकरण की प्रक्रिया को स्वीकार करने को तो उद्यत नहीं हैं, अपने हीन क्षीण विश्वासों के कारण नई पीढ़ियों को भी नए साँचे में ढलने से रोकते हैं। दोनों अपने-अपने ईश्वर का द्वार सहायता के लिए खटखटा रहे थे और

---

१. कोष्ठक में दिये गये शब्द अनुवादक के हैं। पं० चमूपतिजी के नहीं। —'जिज्ञासु'

२. देखें—History of Assassins by Swami Shradhananda.

विरोधी पक्षों के लिए मनमाने आरोप लगाकर ईश्वरीय दण्ड की याचना कर रहे थे।

महर्षि दयानन्द ने अपनी प्रखरतम तर्क शक्ति से, जिसका आधार महर्षि की अप्रतिम आध्यात्मिक प्रतिभा व शक्ति थी, इस विचार मन्थन की प्रवाहधारा को ही बदल दिया। **यदि ईश्वरीय ज्ञान बुद्धि व तर्क संगत है तो वह जितना प्राचीन होगा उतना ही स्वीकार्य व सम्मान्य होगा**। यदि प्रत्येक कथित ईश्वरीय ज्ञान केवल युग विशेष के ही मार्गदर्शन का काम करता है तो प्रत्येक पश्चात्वर्ती कथित ईश्वरीय ज्ञान भी केवल तत्कालीन युग की ही आवश्यकताएँ पूरी करेगा और तत्पश्चात् उसके निरस्त होने की आवश्यकता बनी रहेगी। **अपने पूर्ववर्ती ईश्वरीय ज्ञान का निरस्तीकरण भी करो व स्वयं निरस्तीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव में न आओ। ये दोनों सिद्धान्त परस्पर विरोधी ही होंगे।[1] आज यदि कोई किसी नियम सिद्धान्त (मत) को निरस्त करने की कोई प्रक्रिया खड़ी होती है तो कल वह भी स्वयं निरस्त होने का पात्र है। जिसे नष्ट न होना हो वह दूसरों को नष्ट करने से बचे।** (अन्यथा:)

[जो शाख़े नाज़ुक पै आशियाना बनेगा नापायदार होगा[2]।]
कमज़ोर डाली पर घोंसला तो नष्ट ही होगा॥

ईश्वरीय वाणी को स्वीकार करनेवाले सम्प्रदायों का काम लिखित वाणी के बिना चल ही नहीं सकता। **उन्हें यह स्वीकार करना होता है कि अनादि काल से या सृष्टि के प्रारम्भ से परमात्मा अपने सर्वोत्तम सर्वश्रेष्ठ ज्ञान की किरणें अपने निर्वाचित ऋषियों के हृदय व बुद्धि में डालता रहा है। इन्हीं ज्ञान रश्मियों का प्रतिबिम्ब मानवीय ज्ञान का रूप बन जाता है**। मनुष्य ने परमात्मा द्वारा प्रदत ज्ञान के कई नियमों को अपने स्थानीय व युगीन आचार संहिता का रूप प्रदान किया है।

आर्य साहित्य में परमात्मा के अनादि व अनन्त ज्ञान को

१. मूल में पं० चमूपतिजी ने लिखा है, ''ये दोनों बातें एक साथ नहीं चलेंगी।'' —'जिज्ञासु'

२. यह पंक्ति मूल में नहीं है। अनुवादकजी ने व्याख्या के लिये दी है। —'जिज्ञासु'

श्रुति और मानवीय आचार संहिता को स्मृति कहते हैं। कुरान में श्रुति को उम्मुल किताब (पुस्तकों की जननी) व किताब को केवल पुस्तक का नाम दिया है। ऋषि इस ज्ञान परम्परा को वेदों तक ले गए हैं। वर्तमान काल की सारी साहित्यिक खोज इस सत्य को स्वीकार करती है कि मानव जाति के पुस्तकालय में वेद सब से प्राचीन पुस्तक है। इस पुस्तक को पुस्तकों की जननी जिसे **अथर्ववेद में वेद माता** कहा गया है। यह कहना कितना तर्क संगत व बुद्धिपूर्वक है।

कुरान में हज़रत आदम को प्रभु का ज्ञान (इल्हाम) प्राप्त होने की चर्चा है और वहाँ कहा गया है—

इल्लमा आदमल असमाआ कुल्लहा

और आदम को संसार की सभी वस्तुओं के नाम सिखाए गए।

अर्थात् सारे ज्ञान सृष्टि के प्रारम्भ में मनुष्य को दे दिए गए। जो लोग इस प्राचीन ईश्वरीय ज्ञान पर विश्वास करते हैं, वे ईश्वरीय ज्ञान की प्राचीन परम्परा के सबसे पहले संरक्षक हैं। **इस सम्पूर्ण ज्ञान के निरस्तीकरण का कोई युक्ति संगत कारण व आवश्यकता मनुष्य की कल्पना से बाहर है। ईश्वरीय ज्ञान की सर्वोत्कृष्टता व आध्यात्मिकता प्रभु की सत्ता को अद्वितीय स्वीकार करना ही सर्वसम्मत सिद्धान्त है**। और यह सत्य जैसा कि हम कुरान के अवतरण के प्रसंग में स्वयं कुरान के प्रमाणों से सिद्ध करेंगे, प्रत्येक ईश्वरीय दूत की वाणी की जान रहा है। और जो लोग ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता केवल आध्यात्मिक अनुभूति मानते हैं उनके लिये सर्वप्रथम दिया हुआ ईश्वरीय ज्ञान ही अन्तिम ज्ञान होना चाहिए।

इल्हाम के निरस्तीकरण का विश्वास जहाँ परमात्मा के निर्दोष पूर्ण ज्ञान में कमी के भय को उत्पन्न करता है, वहाँ सामाजिक व राजनीतिक विवादों की भी आधारशिला बनता है। कुरान इस सत्य को स्वीकार करता है, इसीलिए कहा है—

माकानन्नास इल्ला उम्मतन वाहिदतन अख़्तफ़ू[1]

१. द्रष्टव्य कुर्आन २-२१३। Saheeh international द्वारा प्रकाशित अंग्रेज़ी अनुवाद में भी इसके यही अर्थ दिये हैं, "Man kind was [of] one religion (before their Deviation);" page 41 —'जिज्ञासु'

संसार के सभी लोग एक ही धर्म विचारधारा मानने वाले थे। उनमें मतभेद तो बाद में उत्पन्न हुए। **सम्पूर्ण ज्ञान के पश्चात् ईश्वर के नाम से आने वाले प्रत्येक ज्ञान से मानव जाति का दो भागों में विभक्त हो जाना अनिवार्य है। एक पश्चात्वर्ती ज्ञान को स्वीकार करने वाले, दूसरे उसे अपराध समझकर उसे दूर से ही नमस्कार करने वाले बने**। सम्प्रदायों की रचना करने वालों की इस बुद्धिमत्ता की प्रशंसा करनी चाहिए कि उन्होंने अपने से पूर्ववर्ती का पुनरुद्धार करने का दावा किया है वे उसे निरस्त करने के उद्घोषक नहीं हुए। परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि उपरोक्त दोनों समुदायों में परस्पर वैर, वैमनस्य व विवाद का सम्बन्ध स्थापित हो जाता रहा है। **यदि सुधारक सुधार ही करना चाहते हैं तो उन्हें इस सुधार प्रणाली को बलपूर्वक स्वीकार कराने का क्या प्रयोजन? और यदि प्राचीनतावादी का इन सुधार प्रिय लोगों के पूर्वज ही होने का विश्वास है तो उन्हें सुधारों का गला घोंटने की क्या आवश्यकता?** भूल उस समय होती है जब नवीनतावादी प्राचीनता के मार्ग को सर्वथा मिथ्या बताने लगते हैं। और प्राचीनतावादी नई पीढ़ी के नवीनीकरण को सर्वथा मिथ्या कहने लगते हैं और सुधार को सर्वथा धोखा व मिथ्याचार की उपाधि देने लगते हैं। इसीलिए महर्षि दयानन्द कहते हैं—

जो दूसरे सम्प्रदायों को जिनके हज़ारों करोड़ों विश्वास रखने वाले हों झूठा बताए और स्वयं को सत्यवादी प्रकट करे उससे बढ़कर झूठा और सम्प्रदायवादी कौन हो सकता है? सत्यार्थप्रकाश १४वाँ समुल्लास में एक स्थान पर लिखते हैं—

''मैं पुराण, जैनियों की पुस्तकों, बाइबिल व कुरान को पहले ही से कुदृष्टि से न देखकर उनके सद्‌गुणों को स्वीकार व दुर्गुणों का परित्याग करता हूँ।'' —सत्यार्थप्रकाश (भूमिका)

वास्तव में सत्य किसी भी धर्म में हो वह प्रत्येक धर्म व सम्प्रदाय की सामूहिक सम्पत्ति है। **महर्षि का यह कथन स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है—**

''मेरी किसी नूतन विचार या मत को प्रवर्तन करने की तनिक भी इच्छा नहीं है। अपितु जो सत्य है उसको मानना व मनवाना और

जो झूठ है उसको छोड़ना व छुड़वाना मेरा उद्देश्य है।''

—स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश की (भूमिका)

इस सामूहिक सत्य का आदि स्रोत व उत्पत्ति स्थान वेद हैं। समय-समय पर धार्मिक ढाँचों के नवीनीकरण व सुधार की आवश्यकता रहती है। **प्रत्येक प्राचीन प्रथा एक समय निर्जीव हो जाती है। नया ऋषि या ईश्वरीय ज्ञानदाता आता है और प्राचीनता के कारण जर्जरित पिंजर में नवजीवन का संचार करता है। इसे आर्य साहित्य में स्मृति कहते हैं। स्मृति का प्रयोग किसी विशेष देश पर किसी युग विशेष के लिए होता है अतएव सत्यार्थप्रकाश इसी प्रकार का स्मृति ग्रन्थ है।** स्मृति अपने युग में सफलतापूर्वक काम कर जाती है। और उसके पश्चात् नए ऋषि-मुनि उसके स्थान पर नई स्मृति का निर्माण करते हैं। **जहाँ श्रुति परमात्मा की ओर से और निर्दोष पूर्ण ज्ञान वाली होती है वहीं स्मृति मनुष्यों की वह रचना होती है जिसमें परमात्मा की शिक्षा मौलिक सिद्धान्तों के रूप में काम करती है**। श्रुति पुस्तकों की जननी है और वह परमात्मा के शाश्वत ज्ञान कोष में रहती है, अर्थात् उसे निरस्त नहीं किया जा सकता, परन्तु स्मृति केवल पुस्तक है। **वह कुरान के अनुसार ''व लइन शइनालनज़हबन्ना बिल्लज़ी औहेना इलैक'' (सूरत बनी इसराईल आयत ९) यदि हम चाहें तो हमने मुहम्मद को जो ज्ञान दिया है उसे निरस्त भी कर सकते हैं।**

कैसा सुनहरी नियम है—सम्प्रदायों में मतभेद भी है व कुछ अंशों में सहमति भी है। अब यह सहमति व मतभेद दोनों परमात्मा की ओर से नहीं हो सकते। **सर्वसम्मत अंश ही परमात्मा की ओर से हो सकते हैं**। उनका आदर प्रतिष्ठ करो व शेषांश का खुला खण्डन करो।

यही कार्यशैली महर्षि ने अपनाई है। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम दस समुल्लासों में सत्य का मण्डन किया है। यह सत्य सर्वसम्मत व सार्वभौम है। अन्तिम चार समुल्लासों में परस्पर विरोधी अंशों का खण्डन किया है।

ग्यारहवें समुल्लास में पुराण, बारहवें समुल्लास में चार्वाक व बौद्धों की मान्यताएँ, तेरहवें में ईसाइयत और चौदहवें में कुरान

पंथियों की मान्यताओं पर समीक्षात्मक दृष्टिकोण अपनाया है। ये आलोचनात्मक समुल्लास पुस्तक के अन्त में आए हैं। **कारण कि महर्षि के शब्दों में ''जब तक मनुष्य सत्य-असत्य के विचार में कुछ भी सामर्थ्य नहीं बढ़ाते तब तक स्थूल और सूक्ष्म** खण्डनों के अभिप्राय को नहीं समझ सकते।''

—सत्यार्थप्रकाश उपसंहार १ ला भाग

इस आलोचना के मध्य भी स्थान-स्थान पर आलोच्य विषय की गुणवत्ता को स्वीकार करते गये हैं, उदाहरण के लिए चौदहवें समुल्लास में कुरान की इस शिक्षा पर कि माता-पिता की सेवा व आज्ञा पालन होना चाहिए विपरीत इसके कि वे ईश्वरेतर उपासना की शिक्षा दें। महर्षि लिखते हैं—माता-पिता की सेवा करना तो उत्तम ही है, परन्तु वे यदि परमात्मा के साथ अन्य किसी को उपास्य देव मानें तो माता-पिता की आज्ञा को न माने यह शिक्षा भी ठीक है।

—(वाक्य १२२)

रजस्वला को स्पर्श न करने के सम्बन्ध में लिखा है—

यह जो रजस्वला को न छूने को लिखा है यह उत्तम शिक्षा है।

—(वाक्य ३३)

यह सब समालोचना किस उद्देश्य से की गई है? इसका स्पष्टीकरण महर्षि ने अपनी जादू भरी लेखनी से यह किया है—

जो विभिन्न मत-मतान्तरों के परस्पर विरोधी विवाद हैं उनको मैं पसन्द नहीं करता, क्योंकि इन्हीं मतवादियों ने अपने मतों का प्रचार करके व लोगों को उनमें फँसाकर एक दूसरे का शत्रु बना दिया है। इस बात का खण्डन करके एवं सम्पूर्ण सत्य के प्रकाशन से सबको एकता के मार्ग पर लाकर परस्पर की शत्रुता छुड़वाकर परस्पर दृढ़ प्रेम प्रीति का सम्बन्ध स्थापित करके सबमें परस्पर आनन्द व सुख पहुँचाने के लिए मेरा परिश्रम व मेरा उद्देश्य है।

—सत्यार्थप्रकाश (स्वमंतव्यामंतव्य प्रकाश का समाप्ति अंश)

संसार में सत्य व असत्य, सन्मार्ग व कुमार्ग, बुराई व अच्छाई दोनों वर्तमान हैं। जहाँ सत्य सद्गुणों को स्वीकार करना मनुष्य का कर्त्तव्य है वहाँ असत्य, मिथ्या एवं अवगुणों से बचना और संसार के मानवों को बचाना भी उतना ही आवश्यक कर्त्तव्य है। ऋषि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास के अन्त में लिखते हैं—

ऐसे ही अपने-अपने मत-मतान्तरों के सम्बन्ध में सब कहते हैं कि हमारा ही मत सच्चा है, शेष सब बुरे हैं। हमारे मत द्वारा ही मुक्ति मिल सकती है। अन्यों के द्वारा नहीं हो सकती...... हम तो यही मानते हैं कि सत्यभाषण, अहिंसा, दया आदि शुभगुण सब मतों में अच्छे हैं और शेष झगड़ा बखेड़ा ईर्ष्या, घृणा, मिथ्याभाषणादि कर्म सभी मतों में बुरे हैं। यदि तुमको सत्य धर्म स्वीकार करने की इच्छा हो तो वैदिक धर्म को ग्रहण करो।[१]

—(सत्यार्थप्रकाश १४वाँ समुल्लास उपसंहार)

हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं कि धर्म का एक तो भीतर अथवा आत्मा है वह सार्वभौमिक सत्य हैं जो सदैव सर्वत्र सत्य रहते हैं। उनके अतिरिक्त धर्म का बाह्य शरीर होता है, जो देश व काल की आवश्यकताओं के आधार पर बनता है। उदाहरणस्वरूप प्रत्येक धर्म के सामाजिक रीति-रिवाज, अंग-स्पर्श व स्नान के ढंग, शिष्टाचार के प्रकार, हज व यात्रा, ज़कात व दान की मात्रा, व्रत उपवास के नियम आदि-आदि। जहाँ धर्म का पूर्व कथित भाग मनुष्यों की विभिन्न जातियों को स्थानीयता व समसामयिकता के अन्तर के अतिरिक्त भी एक बनाता है वहाँ पश्चात्वर्ती भाग मानव जाति को उनके स्थानीय व युगीन परिस्थितियों के अनुसार भिन्न-भिन्न भागों में विभाजित करता है। जो सम्प्रदाय किसी विशेष युग में आया हो उसे धर्म के दूसरे भाग की एक प्रक्रिया मानना चाहिए। जैसा कि कुरान शरीफ़ में अपने सम्बन्ध में वर्णन है—

लितुन्जिरा उम्मुलकुरा व मन हौलहा

अर्थात्—ए मुहम्मद तू डरा दे मक्कावासियों व मक्का के पास पड़ौस के लोगों को।

लिकुल्ले उम्मतिन जअलना मन्सकन।

—(सूरत हज रकूअ ५)

प्रत्येक समुदाय के लिए हमने उसकी पूजा पद्धति बनाई है।

---

१. अनुवादकजी ने सत्यार्थप्रकाश के अवतरणों का मिलान मूल ग्रन्थ से करने का कष्ट नहीं उठाया। हम भी नये सिरे से इनमें विशेष अदल-बदल नहीं कर रहे। पाठक प्रमाण देते समय इनका मूल ग्रन्थ से मिलान अवश्य कर लें। —'जिज्ञासु'

यही दशा भारत की स्मृतियों, पुराणों व अन्य ऐतिहासिक मत–मतान्तरों के ग्रन्थों की है। उनकी सच्चाई उन सार्वभौमिक शिक्षाओं के कारण है जो सभी मत–मतान्तरों की अन्तरात्मा है। **वह पुस्तकों की जननी (उम्मुल किताब) के आदेश हैं वे काल एवं देश की सीमाओं से ऊपर हैं उन्हें मिटाया नहीं जा सकता। वह परमात्मा के शाश्वत ज्ञान में स्थिर हैं।**

जब तक धर्म परमात्मा के प्यारों के हाथों में रहता है वे अनादि व अनन्त धर्म के प्रकाशन पर अपनी पूरी शक्ति लगाते हैं। वे आचार, रीति–रिवाज, व्यवस्था व नियमों पर अवश्य बल तो देते हैं, क्योंकि आत्मा की स्थिति शरीर के बिना इस सृष्टि क्रम में कठिन है पर उन्हें वे साधन समझते हैं न कि साध्य, यही कारण है कि उनके आदेश कभी–कभी एक दूसरे को निरस्त भी कर जाते हैं। इसी नियम को दृष्टिगत रखते हुए कुरान ने कहा है—

मानन्सख़ो मिन आयातिहीओ नन्साह,
नाते विखैरिम्मिनहा व मिसलहा।

जो आयतें (आदेश) हम निरस्त कर देते या भुला देते हैं, हम पुनः लाते हैं उससे उत्तम या उसके समान।

कठिनाई तब उपस्थित होती है जब सम्प्रदाय अपने प्रवर्तक के हाथों से निकलकर विधान कर्त्ताओं (मुफ़्तिओं) के हाथ में आ जाता है। **ये लोग सम्प्रदाय के बाह्य आवरण को ही जिसका नाम वह आचार संहिता (शरअ) रखते हैं सम्प्रदाय** की आत्मा मान लेते हैं। उनकी दृष्टि धर्म के सार्वभौमिक स्वरूप पर नहीं पड़ती। **उनका सारा ध्यान बाह्य आचार शास्त्र के अनुशासन पर ही रह जाता है।** वे सम्प्रदाय की पुलिस हैं जो विधान के वास्तविक उद्देश्य को जानकार नहीं, उन्हें तो धर–पकड़ के अवसर हाथ आने चाहिए। **कुफ्र के फ़तवे (विधर्मी सिद्ध करने के आदेश) उनसे** जितने चाहो लिखवा लो। प्रारम्भ में तो ये आदेश सदाशयता से लिखे जाते हैं। धर्म की विपरीत व्याख्या करने में दोष अनुशासक (मुफ़्ती) के हृदय का नहीं उसकी बुद्धि का होता है। उसका आशय दोषरहित होता है, परन्तु पक्षपात सत्य शोधन व सत्य परीक्षण में बाधक बन जाता है। जैसे–जैसे समय बीतता जाता है **धर्म के क्षेत्र में लालच, अत्याचार, अहंकार आदि वासनात्मक भावनाएँ** प्रविष्ट होती जाती हैं और वे लोग धर्म को वकील या ऐजेण्ट का दफ़्तर बना छोड़ते हैं।

ऋषि दयानन्द धर्म के इस स्वरूप को मत कहते हैं। धर्म के भावात्मक, वासनात्मक पक्ष का ऋषि ने कड़ा खण्डन किया है। महर्षि का सारा आग्रह वेद की सार्वभौम शिक्षाओं पर है। इन श्रेष्ठ शिक्षाओं को भारत वर्ष में क्रियात्मक रूप देने के लिए व उन्हें स्थायी बनाए रखने के लिए ही महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश व संस्कार–विधि आदि पुस्तकों में आचार संहिता व कर्मकाण्ड का स्वरूप निर्धारित किया है। यह आचार संहिता अन्य देशों में जाकर कहीं–कहीं परिवर्तित हो जाए तो कुछ आश्चर्य नहीं। **ऋषि के मन्तव्यानुसार वेद की निन्दा करने वाला नास्तिक माना गया है, परन्तु इस नास्तिक के लिए महर्षि ने न कहीं नरक की व्यवस्था की है, न परमात्मा की दया व कृपा का द्वार सदा के लिए बन्द किया है।** महर्षि ने एक अत्यन्त बुद्धि संगत नियम बनाया है जिसे सत्याभिलाषियों को अपने हृदय पटल पर अंकित कर लेना चाहिए। विभिन्न मत–मतान्तरों के निरर्थक वाद–विवाद का वर्णन करते हुए महर्षि लिखते हैं—

अपने–अपने वचनों के अनुसार दोनों (पुराण व कुरान मतावलम्बी) अपने को स्वर्ग के पात्र और अन्यों के मतानुसार दोनों नरक के अधिकारी हैं। अतः इन सबका झगड़ा झूठा है, परन्तु जो धार्मिक श्रेष्ठ पुरुष हैं वह सुख और जो पापी हैं वह सभी धर्मावलम्बी दुःख पाएँगे। —(सत्यार्थप्रकाश १४वाँ समुल्लास)

वेद की ऋचाओं पर श्रद्धा रखने व उनके उपदेशों का अर्थ समझने का अपना पुण्य है। परन्तु मौखिक विश्वास और ज्ञान के अतिरिक्त इन आज्ञाओं का जीवन में उतारना स्वयंमेव एक सर्वश्रेष्ठ पुण्य है जिसका फल परमात्मा की ओर से सुख व प्रभु के अनन्त प्रसाद स्वरूप मनुष्य को मिलता है और **मौखिक व मानसिक विश्वास के होने पर भी यदि हमारे कर्म उसके विपरीत हैं, तो उसका दण्ड दुःख है।**

आस्थाओं की विपरीतता का दण्ड प्रत्येक सम्प्रदाय नरक निर्धारित करता है। नरकवासी एक गाली है जो मतवादियों के संसार में हार्दिक घृणा का शाब्दिक रूप है। **मौलाना मुहम्मद अली महात्मा**

गाँधी के स्वभाव को अपने गुरु व अपनी पूज्या माता के स्वभाव से उत्तम व श्रेष्ठ स्वीकार करते हैं, परन्तु चूँकि महात्मा गाँधी ने कल्मा (इस्लामी ईमान की निशानी) नहीं पढ़ा, अतः उनका स्थान नरक में ही रहना निर्धारित करते हैं[1]।

ऋषि की ऐतिहासिक घोषणा—यह अत्यन्त निकृष्ट कोटि का पक्षपात है जिसके प्रवर्तक प्रत्येक सम्प्रदाय के प्रचारक बनते हैं। ऋषिवर ने एक तो नरक के विश्वास को ही धर्म—संसार से हटा दिया है फिर शाब्दिक और मानसिक ईमान (आस्था) को न उन्होंने धर्म का पर्यायवाची माना है, न उसके अधिकांश रूप को स्वीकार ही किया है। **सुख व दुःख तो संसार में प्राप्त होते ही रहते हैं। यहीं स्वर्ग है, यहीं नरक है। इस नरक में पड़ा कोई भी व्यक्ति घृणा का पात्र नहीं, अपितु सहानुभूति का पात्र है। इस एक क्रान्तिकारी विचारधारा से मत-मतान्तरों के पारस्परिक कलह व विवादों की आधारशिला ही समाप्त हो गई है**। हमारे सुख व दुःख के कारण हमारे कर्म हैं, जो **मौखिक**, **मानसिक** व **शारीरिक** तीनों रूपों में प्रकट होते हैं। इन सब में सुधार करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। आध्यात्मिक उन्नति का, जिसका प्रारम्भ सुसभ्यता व सदाचार से होता है, उसका अन्तिम लक्ष्य मुक्ति अर्थात् जन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा है। जो किसी की संस्तुति से नहीं अपने प्रयत्न और उसमें सम्मिलित परमात्मा की कृपा से होती है। इस विश्वास के पश्चात् परस्पर लड़ाई-झगड़े की आवश्यकता व सम्भावना ही कहाँ रह जाती है ?

महर्षि दयानन्द साक्षात् प्रेम के भण्डार थे। वे सबको एकता का मार्ग दिखाकर सबसे परस्पर वैर-वैमनस्य छुड़वाकर परस्पर दृढ़ प्रेम का सम्बन्ध स्थापित कर सबके द्वारा सबको सुख पहुँचाने के अभिलाषी थे। परन्तु ऐसे व्यक्ति भी हैं जो ऋषि के इस महान् उद्देश्य को भी नहीं

---

१. काँग्रेस के पूज्य नेता मुहम्मद अली जी ने यह भाषण अलीगढ़ में १९२३ ई० में दिया था। १९२५ में जामा मस्जिद देहली में कहा था कि मैंने हज करते समय मक्का में अल्लाह से दुआ की थी कि गाँधी को मुसलमान बनने की वह प्रेरणा दें नहीं तो गाँधी नरक की आग में ही सड़ता रहेगा। कितने भाग्यशाली थे गाँधीजी जिनके लिये मक्का में दुआ की गई! —'जिज्ञासु'

समझ सके और ऐसा मान बैठे कि सत्यार्थप्रकाश के समालोचनात्मक समुल्लासों से विवाद बढ़ता है। डॉक्टर की शल्यक्रिया से रोगी का रोग निवारण होगा, परन्तु रोगी का अज्ञान इसे रक्तपात का अपराध मानता है तो, परमात्मा आर्यों व अनार्यों दोनों को लड़ाई-झगड़े के पाशविक विचार से उनकी रक्षा करे।

यह पुस्तक सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास की मानो प्रस्तावना है। हमारा विचार पहले इस समुल्लास का भाष्य लिखने का था। परन्तु उसके लिए अधिक समय व परिश्रम की आवश्यकता है।[1] यह समुल्लास सत्यार्थप्रकाश का अन्तिम अध्याय है। ग्रन्थकार की आशा न्याय संगत है कि इस अध्याय तक पहुँचने तक पाठक लेखक की आस्थाओं, लेखनशैली, तर्कशैली, खण्डन पद्धति और मण्डन के स्वरूप आदि से पूर्णतया परिचित हो जाएगा।

अतः अपनी समालोचना के इस भाग में उचित संक्षेप से काम लेता है। जहाँ अन्य स्थानों पर दो-दो, चार-चार वाक्यों में अपना आशय समझाता है, वहाँ इस अध्याय में केवल एक वाक्य या उसका भी एक अल्प भाग लिखना पर्याप्त समझता है। हमने इस अध्याय की तुलना जहाँ कुरान शरीफ़ व उसके अनुवादों से की वहाँ कुछ भाष्य भी साथ-साथ अध्ययन करते गए। हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। जब हमने देखा कि ऋषि की आलोचना कुरान के शब्दों के बाह्य रूप तक ही नहीं रह जाती, अपितु कुरान के भाष्यकारों की लम्बे-चौड़े पृष्ठों में अंकित उनके रहस्यों और उनके आशय की गहरी से गहरी तह तक पहुँचती है। ऋषि ने प्रत्येक समुल्लास की भाँति इस समुल्लास के प्रारम्भ में भी प्रस्तावना लिखी है जिसे हम ऋषि के उद्देश्य को समझने के लिए शब्दशः आगे उद्धृत कर रहे हैं। इस प्रस्तावना को पढ़े बिना समुल्लास के पृष्ठों में प्रविष्ट होने से ऋषि के मनोभावों से पूरा न्याय न होने की सम्भावना है। पाठक को पहले इन पंक्तियों का वाचन व मनन करना चाहिए, जिसमें ऋषिवर का आत्मा समाधिस्थ होकर अपने पवित्र उद्देश्य का, दिग्दर्शन करा रही है, जो ऋषि अपने समय का जगत् गुरु (World Teacher)

---

१. यदि पं० चमूपति सत्यार्थप्रकाश का भाष्य लिख जाते तो यह एक कालजयी ग्रन्थ होता, परन्तु **'कारे दुनिया कसे तमाम न करद'**। संसार के सब कार्य तो कोई कर नसका। —'जिज्ञासु'

संसार का पथ-प्रदर्शक होने के रूप में, उनके कड़े-कन्धों पर आ पड़ा था। ऋषि लिखते हैं—

यह चौदहवाँ समुल्लास इस्लाम धर्म के मानने वालों के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में केवल कुरान के अर्थों को ध्यान में रखते हुए लिखा है। अन्य पुस्तकों के आशय व आस्थाओं के अनुसार नहीं। क्योंकि मुसलमान कुरान पर ही विश्वास करते हैं। यद्यपि विभिन्न समुदायों में शब्दों के अर्थ आदि के सम्बन्ध में मतभेद है फिर भी कुरान पर सब एकमत हैं। **अरबी कुरान का जो अनुवाद मौलवी लोगों ने उर्दू में किया है उसे देवनागरी अक्षरों और आर्यभाषा में रूपान्तरित करके अरबी के बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा उसकी संशुद्धि करा ली गई है तब वह अनुवाद यहाँ उद्धृत किया गया है। यदि कोई कहे कि यह अर्थ ठीक नहीं तो उसे चाहिए कि वह पहले मौलवी लोगों के अनुवादों का खण्डन करे**। उसके पश्चात् ही इस विषय में लेखनी उठाए। इस लेख का उद्देश्य मानवजाति का विकास है। सत्य-असत्य का अन्तर समझने के लिए सभी धर्मों का कुछ ज्ञान होना आवश्यक है। जिससे परस्पर तुलना करने का अवसर प्राप्त हो और लोग एक दूसरे के दोषों का खण्डन करके उनके सद्गुणों को स्वीकार करें। **हमें न किसी और धर्म पर न इस धर्म पर झूठमूठ आरोप लगाना अभीष्ट है, अपितु जो अच्छा है वही अच्छा और जो बुरा है वही सब लोग बुरा समझें**। न कोई किसी पर झूठ (का जादू) चला सके न सत्य के ग्रहण करने का द्वार बन्द कर सके। सत्य-असत्य के सभी पर प्रकट हो जाने पर भी जिसकी इच्छा हो माने जिसकी इच्छा न हो न माने। किसी पर मिथ्याग्रह नहीं, **यही श्रेष्ठ पुरुषों का मार्ग है कि चाहे अपने हों चाहे पराए दोषों को दोष और गुणों को गुण समझकर गुणों को ग्रहण व दोषों का परित्याग करें और हठधर्मियों की हठ का ह्रास और व्यर्थ का वैर-विरोध कम करें और कराएँ**। पक्षपात से संसार में क्या-क्या अन्धेर नहीं मचा और क्या-क्या अन्धेर नहीं मच रहा।

सच्च यह है कि इस नश्वर संसार में नाशवान् जीवन से पराई हानि करना और स्वयं भी लाभ से वंचित रहना दूसरों को वंचित रखना मानवता से परे हैं।

इस समुल्लास में जो कुछ असत्य लिखा गया हो, वे सज्जन

लोग लेखक पर प्रकट कर दें। सत्य होगा तो स्वीकार कर लिया जाएगा।

यह लेख हठ, पक्षपात, आग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, दोषदर्शन, वाद-विवाद और वैर-विरोध को दूर करने के लिए लिखा गया है न कि उन (पाशविक भावों) को बढ़ावा देने के लिए। एक दूसरे को हानि पहुँचाने से पृथक् रहकर एक दूसरे को लाभ पहुँचाना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है।

अब चौदहवें समुल्लास में मुसलमानों के सिद्धान्तों की आलोचना सज्जनों के सन्मुख प्रस्तुत करता हूँ जो रुचिकर लगे उसे स्वीकार और जो अरुचिकर लगे उसका त्याग कीजिए। बुद्धिमानों को संकेत ही पर्याप्त है।

क्या निष्पक्ष लेख है। पक्षपात व असत्य लांछन लगाने की तो इस लेख से छाया तक नहीं छू गई है। यहाँ साम्प्रदायिकता का कहीं कोई लेश मात्र भाव नहीं। पक्ष पोषकता का चिह्न तक नहीं। **बुराई को बुराई के रूप में पराया मानकर त्याज्य समझा गया है और गुणों को गुण रूप में अपना मानकर स्वीकार्य समझा गया है। इससे अधिक सत्यप्रियता व सत्य शोधन और क्या हो सकता है!**

हमारा सौभाग्य है कि कुरान का वह उर्दू अनुवाद वर्तमान है जिसे आर्यभाषा में रूपान्तरित करवाकर व इस्लामी विद्वानों से संशोधन कराने के पश्चात् महर्षि ने उसे आलोचना का विषय बनाया वह अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन जी का है। पाठक यह जानकर आश्चर्यचकित होंगे कि आर्यभाषा के सत्यार्थप्रकाश में उद्धृत किया कुरान की आयतों का अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन की रचना के अधिक निकट है। अपेक्षाकृत उर्दू सत्यार्थप्रकाश में उद्धृत उस आर्यभाषा के अनुवाद से अनुवाद की तुलना में। **उर्दू सत्यार्थप्रकाश के आगामी संस्करणों में अन्य अनुवादों के स्थान पर शाह रफ़ीउद्दीन की भाषा को ही आर्यभाषा के कुरानी भाग के स्थान पर उद्धृत किया जावे तो यह उत्तम होगा।**[१] शाह रफ़ीउद्दीन की उर्दू शब्दावली आर्यभाषा के

१. पं० चमूपति जी सत्यार्थप्रकाश के पूर्वार्द्ध का ही उर्दू अनुवाद कर पाए थे कि उनका निधन हो गया यदि वे इसे पूरा कर पाते तो चौदहवें समुल्लास में आयतों का शाह जी का अनुवाद ही वे देते। यह एक अत्युत्तम सुझाव था। —'जिज्ञासु'

कोषों के अधिक निकट है। उदाहरणतया कुरान के शब्द '**नफ़्स**' का अनुवाद उसमें प्रत्येक स्थान पर '**जी**' किया गया है। आर्यभाषा में इसे 'जीव' लिखा गया है। उर्दू अनुवादकों ने इसे रूह कर दिया है। 'रीह' का अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन बाव करते हैं। सत्यार्थप्रकाश में भी इसे बाव लिखा गया है (वाक्य १२३) उर्दू अनुवादक इसे हवा लिखता है। भाषा शास्त्र के मर्मज्ञ इस कोष के सूक्ष्म अन्तर का आनन्द लेंगे[१]।

शाह रफ़ीउद्दीन साहब के अनुवाद के टिप्पणी स्थल पर **शाह अब्दुल कादिर के मौज़िहे-उल-कुरान से 'फ़ाइदे' (विशेष विवरण) उद्धृत किए गए हैं**। ऋषि ने अपनी आलोचना में इन टिप्पणियों का भी प्रयोग किया है। जैसा कि सूरते फ़ातिहा (कुरान की पहली सूरत) की आलोचना करते हुए निम्न वाक्य मौज़िह-उल-कुरान से उद्धृत किया गया है—

''यह सूरत अल्ला साहब ने मनुष्यों की वाणी से कहलवाई है कि इस प्रकार कहा करें।''

हज़रत मुहम्मद साहब की ईला की घटना जो सूरत तहरीम में आई है उसके सम्बन्ध में दो जनश्रुतियाँ हैं—एक मारिया नाम की नौकरानी की और दूसरी शहद पीने की। **कुरान के प्रमाणित भाष्य तफ़सीरे जलालैन में पहली जनश्रुति उद्धृत है। तफ़सीरे हुसैनी में अन्तिम**। ऋषि दयानन्द दोनों का वर्णन करते हैं। इससे विदित होता है कि ऋषि ने दोनों की जनश्रुतियाँ सुनी थीं। **सूरते बरुज में बरुज के अर्थ तफ़सीरे हुसैनी में मंजिलें (श्रेणियाँ) और दुर्गों के द्वार किए गए हैं**। ऋषि ने दोनों की ओर संकेत किया है। कुरान में स्थान-स्थान पर परमात्मा द्वारा प्रदत्त पुस्तक के आदेश पवित्र आत्माओं के लिए विशेषतया किए गए हैं। **कुरान के भाष्यों में परहेज़गार के अर्थ इस प्रकार किए गए हैं, ऐसा व्यक्ति जो परमात्मा द्वारा प्रारम्भ से पवित्रात्मा बनाया गया है। ऋषि को आपत्ति है ऐसे पवित्रात्मा को उपदेश की आवश्यकता ही क्या है**? इस पुस्तक के अध्ययन में पाठक को स्थान-स्थान पर ऐसी

१. इस विषय पर हमने 'परोपकारी' में कभी कई खोजपूर्ण लेख दिये थे।
—'जिज्ञासु'

बारीकी मिलेंगी जो कुरानी अनुवाद व भाष्यों के साथ-साथ पढ़ने से ही आलोचना की पात्र बनती हैं। ज्ञात यह होता है कि ऋषि ने कुरान का अनुवाद अनायास ही उठाकर लगे हाथ उसकी आलोचना नहीं कर डाली अपितु इस्लामी विद्वानों के सन्मुख बैठकर वार्तालाप कर और कुरान के अनुवादों व भाष्यों द्वारा इस्लाम के मन्तव्यों का गम्भीर ज्ञान प्राप्त किया है, फिर उसे सत्य की कसौटी पर रखा है।

जो पारखी सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर सत्यालोचन की दृष्टि डालना चाहें उन्हें उपरोक्त पुस्तकों का एक साथ अध्ययन करना चाहिए। फिर वे ऋषि की मेहनत और महर्षि के सत्य संशोधन की प्रशंसा किए बिना न रह सकेंगे।

इस सम्पूर्ण अध्ययन के पश्चात् हमने मौलाना सनाउल्ला साहब की पुस्तक ''हक प्रकाश'' पढ़ी। यह इसलिए कि एक मुसलमान विद्वान् के दृष्टिकोण से महर्षि की लेखनी पर आलोचनात्मक दृष्टि डालने का अवसर प्राप्त हो जाए। **महर्षि द्वारा इस्लाम के प्रचलित सिद्धान्तों की कमज़ोरियों और उन पर किए गये युक्ति संगत आक्षेपों को स्पष्ट स्वीकार करने के स्थान पर स्वयं इस्लाम के नए सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिए हैं जो हज़रत मौलाना के अपने स्वयं मनघड़न्त है। यह तो दूसरे शब्दों में कुरान की मान्यताओं को आक्षेपकर्त्ता के रंग में रंग देना है। आपने वर्तमान संसार के दुःखों को कर्मों का फल स्वीकार किया है**। यह और बात है इस स्वीकृति के तार्किक परिणामस्वरूप पुनर्जन्म के स्वीकृत सिद्धान्त की अनिवार्य आवश्यकता आपके मस्तिष्क में नहीं आ सकी और इस लेख के **कुछ पृष्ठों के तत्काल पश्चात् ही यह भी लिख दिया है कि वर्तमान सुख-दुःख किसी मानवीय कर्म का फल नहीं है**। जिहाद (इस्लामी धर्मयुद्ध) को आप **आत्मरक्षा का युद्ध मानते हैं और इसके समर्थन में वेद और मनुस्मृति को उद्धृत करते हैं। जो इस बात की स्पष्ट स्वीकृति है कि इस्लामी धर्मशास्त्र आपका साथ नहीं देता**। ग़िलमाउन (स्वर्ग में मिलने वाले सुन्दर लड़के) को स्वर्गवासियों की सन्तान स्वीकार करते हैं। जन्नत में मिलने वाली शराब को आपने संसार में मिलने वाला दूध माना है। **सूअर के मांस को विशेषतया गरम देशवासियों के लिए अस्वास्थकर कहकर उसके निषेध के लिए विचित्र ही इस्लामी आचार संहिता गढ़नी**

चाही है? इस्लाम द्वारा अनुमोदित भाग्यवाद को दूर से ही प्रणाम कर गए हैं। फ़रिश्तों को वैदिक मान्यतानुसार माने गए तैंतीस देवताओं के रूप में स्वीकार किया है और यह श्रीमानजी को ज्ञात नहीं कि यहाँ **यह देवता शतपथ ब्राह्मण और सत्यार्थप्रकाश के सिद्धान्त अनुसार ऋतुओं के प्रवर्तक और प्राकृतिक वायुमण्डल के संचालक मनुष्य के अनुभव में नित्य प्रति आने वाले तत्त्व ही हैं।**

मौलाना यदि हमारी पुस्तक को एक बार पढ़ जाएँ तो आशा है इस्लाम और वैदिक धर्म दोनों के सम्बन्ध में अपनी भ्रान्तिओं (भूलों को जो हम मौलाना पर आरोपित नहीं करना चाहते) के निराकरण की पूरी सामग्री उन्हें प्राप्त हो जाएगी। एक पृथक् अध्याय भी हमने मौलाना की पुस्तक के बारे में इसमें सम्मिलित किया है जो पाठकों को रुचिकर लगेगा। उसमें मौलाना की पुस्तक के प्रमाण भी दिए गए हैं।

मौलाना की पुस्तक के अध्ययन का विशेष लाभ हमें यह हुआ कि महर्षि के उद्धरणों के सत्यापन की एक मुसलमान मौलवी की लेखनी से सम्पुष्टि हो गई। मौलाना ने सत्यार्थप्रकाश आदि पुस्तकों से स्वयं उद्धरण दिए हैं और वे उद्धरण उन पुस्तकों के पहले से तैयार और प्रकाशित उर्दू अनुवादों की केवल प्रतिलिपि हैं। परन्तु प्रतिलिपि करने में भी श्रीमान ने उनके प्रति जो व्यवहार किया है कि पाठक आश्चर्य ग्रस्त है। उसके दो-चार उदाहरण हमने उस अध्याय में निवेदन किए हैं। पाठक अवलोकन करें। ऋषि की प्रस्तावना पूरी ही लोप कर गए हैं और शेष भी कहाँ-कहाँ और क्या फेरफार किया है, देखने योग्य है। मौलाना का सत्यार्थ का उत्तर क्या है, गालियों की बौछार है। हमने उदाहरण के रूप में कुछ-कुछ वे भी उद्धृत कर दी है। **उन गालियों को श्रीमान् तक वापिस लौटाने की धृष्टता तो हम कहेंगे नहीं।** हाँ पाठकों के मनोरंजन की सामग्री वह सदा रहेंगी। फिर मौलाना की घोषणा यह है कि हम उनके गुरु को सम्मानपूर्वक ही याद करेंगे। क्योंकि इस्लाम का हमको यही आदेश है।

मौलाना ने ऋषि के १५९ सन्दर्भों में केवल ९ स्थान ऐसे दिखाए हैं जहाँ उन्हें कुरान का **अनुवाद या तो अशुद्ध या इधर-उधर के वाक्यों से असम्बद्ध होने की शिकायत है।** सो एक स्थान पर तो कुरान शरीफ़ का एक शब्द हज़रत की निगाह से चूक गया है।

मालूम होता है कि एक स्थान पर तो एक वचन व बहुवचन के समान अर्थों के तात्पर्य को न जानकर मौलाना अकारण गरम हुए हैं। एक स्थान पर कुरान की वाणी को अकारण नरक वासियों की प्रार्थना बता दिया है। २ स्थान पर अर्बी भाषा का असम्बद्ध वाक्य प्रयोग और उसका उर्दू में सन्देहास्पद अनुवाद शाब्दिक भ्राँति का कारण हुआ है। एक स्थान पर कुरान की भाषा का अनुवाद उर्दू अनुवादक ने इस प्रकार कर रखा था कि शब्द इधर से उधर हो गए थे। शुद्ध अनुवाद करो तो वाक्य सन्देहपूर्ण था इसे ऋषि ने थोड़े से फेरफार से सार्थक बना दिया है। हमने परामर्श दिया है कि अहले कुरान स्वयं कुरान के हित में यह परिवर्तन स्वीकार करलें तो ठीक है। हमें खोज किसी ऐसे परिवर्तन की थी जिसके संशोधन के पश्चात् ऋषि के आक्षेप की बुद्धिमत्तापूर्वक स्वीकृति मान्य न रहती हो। हमने मौलाना से निवेदन किया है कि सत्यार्थप्रकाश के उद्धरण के स्थान पर आप अपना अनुवाद रख लें और फिर देखें शंका वैसी की वैसी बनी रहती है।

कुरान में विषय क्रम नहीं—ऋषि की आलोचना का क्रम आयतों के क्रम में है, चूँकि स्वयं कुरान में विषयों की कोई क्रमबद्धता नहीं, पुनरुक्ति दोष लगातार हुआ है। इसीलिए ऋषि की शंकाओं में पुनरुक्ति भी अवश्यम्भावी है और विषयों की क्रमबद्धता नहीं हो सकी। हमने इस पुस्तक में आलोचना के कुछ विषय निश्चित किए हैं। प्रत्येक विषय पर एक-एक अध्याय में वाद-विवाद किया है। आयतें सामान्यतया वही प्रस्तुत की हैं जो ऋषि की आलोचना की पात्र बनी हैं। कहीं-कहीं स्पष्टीकरण के लिए कोई-कोई आयत नई भी बढ़ा दी है। इस क्रम से जहाँ यह लाभ हुआ है कि एक-एक विषय की आयतों की समालोचना एकत्रित हो गई है और वाद-विवाद के प्रसंगों में थकान लाने वाला बारम्बार की पुनरुक्ति व उन प्रसंगों के पृथक्-पृथक् स्पष्टीकरण में अधूरापन नहीं रहा। वहाँ महर्षि की आलोचना विषयों के आधार पर एक क्रम में आ गई है और यह आश्चर्यजनक सत्य भी पाठकों के सन्मुख आ जाने की सम्भावना है कि ऋषि के कुरानालोचन में कितनी गम्भीरता है। क्षुद्र प्रश्नों को छोड़कर शेष सभी मोटे-मोटे इस्लामी सिद्धान्तों पर ऋषि ने आलोचना की है व तर्कशास्त्र व दर्शनशास्त्र के प्रत्येक नियमानुसार

आलोचना की है। इस क्रमहीनता के वातावरण में इतनी पूर्ण त्रुटिरहित व आधार सहित आलोचना ऋषि की बुद्धि की पकड़ का चमत्कार है। हमारे लेख का मौलिक आधार ऋषि की लेखनी से ही ग्रहण किया गया है।

अन्तिम अध्याय में सर **सैयद अहमद खाँ की तफ़सीरे अहमदी और मौलाना मुहम्मद अली की तफ़सीर होली कुरान (अंग्रेज़ी)** के आधार पर यह सिद्ध किया गया है कि **ऋषि दयानन्द का परिश्रम व्यर्थ नहीं चला गया। अहले इस्लाम ने ऋषि के आक्षेपों को अपने हृदय में स्थान दिया है** और कुरान की सामयिक व्याख्याओं में ऋषि के मन्तव्यों को अपने वर्णित अर्थों की शुद्धि का जैसे आदर्श बनाया है। **इससे अधिक विजय व सफलता किसी वादी को किसी भी न्यायालय में क्या प्राप्त होगी कि प्रतिवादी उसके वाद के सर्वथा अनुकूल अपना उत्तर बना ले ?**

यदि मुसलमान भाई महर्षि की इस तर्क प्रणाली के इतने समर्थक हुए हैं कि उन्होंने महर्षि के बताए मार्ग पर कुरान को समझना प्रारम्भ कर दिया है तो हम भी क्यों न इन अहले इस्लाम के सहयात्री बनकर उस मार्ग को इतना विस्तृत कर दें कि कुरान में स्पष्ट वेद के दर्शन होने लगें। **हमने कुरान पढ़ा है और हमें इस्लाम व कुरान में पूर्व तथा पश्चिम की दूरी दिखाई देती है**[१]। ऋषि का लक्ष्य इस्लामी कुरान था। हमारे सन्मुख महर्षि का यह वाक्य है—

और जो थोड़ा बहुत सत्य इसमें है वह वेद आदि सत्य पुस्तकों के अनुकूल होने से मुझे स्वीकार है।

—सत्यार्थप्रकाश १४वाँ समुल्लास समाप्ति

हमें कुरान के मूल पाठ में अभाव से वर्तमान संसार के उत्पन्न होने की न केवल अस्वीकृति अपितु स्पष्ट विरोध मिला है। पुनर्जन्म की न केवल स्वीकृति मिली है, अपितु उसके आधार पर सज़ा व पुरस्कार का भवन तैयार किया गया है और कुरान को नित्य ईश्वरीय ज्ञान नहीं, अपितु एक विशेष काल व विशेष जाति के लिए तैयार की

१. इस्लामी विद्वान् डॉ० जेलानी भी पं० चमूपतिजी का यह मत स्वीकार करते हैं। आपकी एक पुस्तक का नाम है 'दो इस्लाम' और एक का नाम है 'दो कुरान'। —'जिज्ञासु'

गई स्मृति कहा गया है। प्रलय (कयामत) दो प्रकार की बताई गई है। एक प्रलय दूसरी क्षण-क्षण में प्रकट होने वाली हिसाब की घड़ी। सारांश कई बातें हैं जिनमें वेद के मन्तव्यों का अर्बी शब्दों में पुनरावर्तन किया गया है। हम इन विषयों पर एक और पुस्तक लिखने का विचार रखते हैं और हमारा विचार है कि आर्यों और मुसलमानों में बौद्धिक एकता की वह दृढ़ आधारशिला बनेगी[१]। अन्त में उपनिषद् के शब्दों में परमात्मा से प्रार्थना है—

या रब हमें तहकीक की तौफ़ीक अता कर
दे ज़ौके सदाकत हज़े बातिल को मिटाकर
इस कल्बाय तारीक में हो जलवाय ख़ुरशीद
कर शाम फ़ना महव अयाँ सुबहे बका कर

हे नाथ हमें सत्य की शक्ति प्रदान कर
दे सत्य का प्रसाद असत्य भाव मिटाकर
इस अन्धकार युग में जला सच्चाई का सूरज
मृत्यु की सायं मिट सके जीवन को बनाकर

—चमूपति

१. इस विषय पर पण्डितजी की लेखमाला खोजकर हमने अनूदित करके 'कुर्आन वेद की ठण्डी छाओं में' नाम से प्रकाशित कर दी थी। —'जिज्ञासु'

सद्ज्ञान-धारा—कुछ तर्क फुल झड़ियाँ
सम्पादकीय

श्री पण्डित चमूपति जी ने सन् १९३७ में देहत्याग किया। 'चौदहवीं का चाँद' पुस्तक उनके अन्तिम वर्षों में लिखी गई एक उत्तम पुस्तक है। यह पुस्तक अत्यन्त मौलिक, रोचक, प्रेरक व खोजपूर्ण है। इसके भाषा सौष्ठव के विषय में जितना भी लिखा जावे थोड़ा है। एक बार हमने अपने कृपालु मित्र माननीय डॉ० शम्सी जी को यह पुस्तक पढ़ने को दी। वह अपनी पत्नी श्रीमति नजमा जी के साथ इसे लौटाने आये। दोनों ने इसे पढ़ा था। मान्या नजमा जी ने तब पण्डित जी के उर्दू भाषा पर असाधारण अधिकार की जी भर कर प्रशंसा करते हुए कहा, ''पंजाब में कभी ऐसे-ऐसे लौह लेखक थे!''

हमने सिंध में सत्यार्थप्रकाश पर प्रतिबन्ध के दिनों में अपने एक विद्यार्थी मित्र श्री राम के मुख से सन् १९४६ में स्यालकोट में इस पुस्तक की बहुत प्रशंसा सुनी तो इसे पढ़ने की उत्सुकता जगी। १९५२ ई० में स्वर्गीय पं० मदनमोहन जी विद्यासागर के श्वसुर श्री डॉ० ज्ञानचन्द्र जी की प्रेरणा से इस पुस्तक को क्रय करके इसका स्वाध्याय किया। तब से लेकर आज तक इसे कितनी बार पढ़ा है, यह बता पाना सम्भव नहीं। यह पुस्तक मेरी प्रियतम पुस्तकों में से एक है।

इस पुस्तक के साथ आर्यसमाज ने घोर अन्याय किया है। यह पुस्तक विभिन्न भाषाओं में लाखों की संख्या में प्रकाशित होनी चाहिए थी। आर्यसमाज के लोग संस्थावाद के कीच-बीच ऐसे फँसे कि इसका महत्त्व न तो स्वयं समझ पाये न ही दूसरों को इससे लाभान्वित किया। समझा यह गया कि यह तो एक मौलाना के उत्तर में लिखी गई इस्लाम के बारे पुस्तक है। जिसकी इस्लाम में अथवा शास्त्रार्थों में रुचि है यह उसी के लिए उपयोगी है। यही भ्रान्ति पण्डित जी की पुस्तक 'जवाहिरे जावेद' के बारे में प्रचारित रही।

इससे आर्यसमाज की बहुत क्षति हुई है।

धर्मवीर पं० लेखराम जी के पश्चात् आर्य सिद्धान्तों के प्रचारार्थ विरोधियों के उत्तर में स्थायी महत्त्व की सर्वोत्तम यही दो पुस्तकें लिखी गईं। यह हमारा ही मत नहीं है। भारत प्रसिद्ध विद्वान् व साहित्यकार माननीय पं० पद्मसिंह जी शर्मा का भी यही दृढ़ मत था। पूज्यपाद पं० चमूपति जी के श्रीमुख से 'चौदहवीं का चाँद' की पाण्डुलिपि को सुनकर शर्मा जी के मुख से अनायास ही यह फ़ारसी सूक्ति निकल आई—

'ईं कार अज़ तो आयद व मरदां चुनीं कुनन्द'

अर्थात् यह कार्य जो आपने किया है, शूरवीर ऐसे ही किया करते हैं। एक ही वाक्य में पं० पद्मसिंह जी की कोटि के समीक्षक ने गागर में सागर भर दिया।

इस्लाम के बारे में प्रामाणिक व खोजपूर्ण जानकारी देने वाली एक उत्तम पुस्तक तो यह है ही, हमारा यह भी सुनिश्चित व दृढ़ मत है कि वैदिक धर्म की दार्शनिक मान्यताओं पर भी अत्यन्त रोचक शैली में बड़ी मौलिक रीति से प्रकाश डाला गया है। यथा भाषा की उत्पत्ति, ईश्वरीय ज्ञान के आविर्भाव, ईश्वर, जीव व प्रकृति का अनादित्व, विकासवाद की निस्सारता, ईश्वरीय ज्ञान का अनादित्व व नित्यता, पुनर्जन्म, कर्मफल सिद्धान्त। ईश्वर का वेदोक्त स्वरूप, ईश्वर की दया व न्याय, मुक्ति, जीव दया, जीव की कर्म करने की स्वतन्त्रता, सृष्टि नियमों की अटलता आदि पर जिस ढंग से पं० चमूपति जी ने लिखा है, इस शैली से और इतनी योग्यता से कोई विरला विद्वान् ही लिख सकता है।

हमारा मत है कि यदि इस पुस्तक का अच्छा हिन्दी अनुवाद करके इसका कुशलता से सटिप्पणीक सम्पादन करके इसका प्रचार किया जाता, व्याख्याता इसके आधार पर व्याख्यान देते, समाजों में इसकी कथा होती तो वेद-प्रचार के आन्दोलन को विशेष बल मिलता। प्रमाण स्वरूप हम यहाँ एक घटना को देने का लोभ सँवरण नहीं कर सकते। सन् १९६३ के दूसरे सप्ताह सोलापूर जाते हुए हम मुम्बई में रुके। श्री ओंकारनाथ जी ने माटुंगा में हमारा भाषण करवाया। हमने वैदिक धर्म की मूलभूत मान्यताओं पर एक ओजस्वी भाषण उस दिन

माटुंगा समाज के सत्संग में विश्व प्रसिद्ध कहानीकार पण्डित सुदर्शन जी की उपस्थिति में दिया। व्याख्यान की समाप्ति पर एक श्रोता ने सुदर्शन जी की ओर संकेत करते हुए मुझे कहा, ''पण्डित जी आपका व्याख्यान सुनकर आपको बधाई भेंट करते हैं।''

मैंने तब तक पण्डित जी के कभी दर्शन नहीं किये थे। मैंने पण्डित जी का परिचय प्राप्त करना चाहा। 'सुदर्शन' सुनते ही शीश उनके चरणों में धरकर आशीर्वाद माँगा। हम दोनों का जन्म वीर हकीकत की धरती स्यालकोट ज़िले का है। पण्डित जी ने तब कहा, ''लाहौर के पश्चात् आर्यसमाज में व्याख्यान तो आज ही सुनने को मिला। बड़ा आनन्द आया।''

मेरे व्याख्यान का मुख्य स्रोत अथवा आधार पं० चमूपति जी का चौदहवीं का चाँद था। उस व्याख्यान की अकाट्य युक्तियाँ अब भी मुझे भली-भाँति स्मरण हैं। मुसलमान प्रायः कहते हैं कि कुरान से पूर्व जो ईश्वरीय पुस्तकें नाज़िल (उतरीं) हुईं, उनमें हेर-फेर हो गया, परन्तु कुरान की सुरक्षा की अल्लाह मियाँ ने गारण्टी दे रखी है। स्वयं अल्लाह ने इसकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व लिया है। इस पर पं० चमूपति जी के शब्दों में मैंने कहा था—

१. पूर्वकाल के इल्हामों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व अल्लाह ने क्यों न निभाया?

२. समय पाकर अल्लाह का स्वभाव क्या बदल गया अथवा जीवों का स्वभाव बदल गया?

ईश्वर को सृष्टि रचना का एकदम कैसे विचार आ गया। इस पर मैंने तर्क दिया—

(क) अल्लाह का ज्ञान पहले होता है अथवा कर्म पहले होता है?

(ख) यदि सृष्टि रचना का उसे पहले से ही ज्ञान था तो इतने समय तक वह ज्ञान किसी काम में क्यों न आया?

३. वैदिक धर्मानुसार ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव सब अनादि व नित्य हैं।

मुसलमान कहते हैं कि जैसे बच्चा ज्यों-ज्यों अगली कक्षाओं में जाता है उसका पाठ्यक्रम व पुस्तकें भी बदलती जाती हैं। अब ऊँची

कक्षा में आ जाने पर, उन्नति या विकास होने के कारण वेद व बाइबिल आदि की उपयोगिता नहीं अब इस युग के लिए तो कुरान है। वे सब निरस्त हो गये नियम हैं।

इस पर मैंने कहा था—

१. पुस्तकें व पाठ्यक्रम अगली कक्षा में जाने वाले विद्यार्थियों के बदले जाते हैं। क्या वर्तमान युग के जीव पूर्व कक्षाओं को उत्तीर्ण कर चुके हैं?

२. क्या यह वही जीव है जो सृष्टि के आदि में थे जिनको वेद का ज्ञान दिया गया?

३. क्या इन्हीं जीवों को मूसा व ईसा की पुस्तकें दी गई थीं?

४. फिर तो इस्लाम ने जीव का अनादित्व भी मान लिया।

५. फिर पुनर्जन्म भी स्वीकार कर लिया।

६. साथ ही यह प्रश्न उठाया, क्या सृष्टि के किसी अन्य नियम को भी परमात्मा ने निरस्त किया है?

ऐसी कई मौलिक युक्तियाँ दी थीं। ये तर्क अधिकांश पण्डित जी के इसी ग्रन्थ से थे। पं० सुदर्शन जी सरीखा विश्व प्रसिद्ध विचारक जिन विचारों को सुनकर झूम उठा उनका मूल्याङ्कन सहज में किया जा सकता है।

एक बार स्वामी दीक्षानन्द जी ने बहुत आग्रह करके मुझे पण्डित जी की दार्शनिक फुलझड़ियाँ संग्रहीत करके देने को कहा। किसी कारण से वह उस संग्रह को प्रकाशित न कर सके। इस पुस्तक की चुटकियों व फुलझड़ियों की अनुपमता को वही जानते हैं जिन्होंने दस-बीस बार इसका स्वाध्याय किया है। पाँच-सात पंक्तियों के एक ही पैरा में पण्डित जी ने चार-चार, पाँच-पाँच मौलिक प्रश्न उठाकर अपनी प्रतिभा के चमत्कार दिखाये हैं। ऐसी विलक्षणता सत्यार्थप्रकाश व 'जवाहिर जावेद' के अतिरिक्त सम्भवतः किसी और आर्यसामाजिक ग्रन्थ में नहीं मिलेगी। इस ग्रन्थ के पृष्ठ २२९ के अन्तिम पैरा के प्रश्नों की गिनती करके देखिये तो।

इस पुस्तक की सौ पचास फुलझड़ियाँ व चुटकियाँ कण्ठाग्र करके कोई भी योग्य युवक बहुत अच्छा व लोकप्रिय वक्ता बन सकता है। फिर किसी को बीरबल की, जाट की, लाला जी की,

चक्की वाली माई की व नमाज़ की सच्ची-झूठी हँसाने वाली कहानियाँ सुनाकर श्रोताओं को बाँधने की आवश्यकता नहीं रहेगी। श्रोताओं का सैद्धान्तिक ज्ञान बढ़ेगा। स्वाध्याय की रुचि बढ़ेगी और वक्ता का स्तर ऊँचा होता जावेगा।

इससे पहले के हम यहाँ ऐसी कुछ फुलझड़ियाँ देवें यह बताना बहुत उपयोगी रहेगा कि सत्यार्थप्रकाश, 'कुल्लियात आर्य मुसाफ़िर' व स्वामी दर्शनानन्द साहित्य के पश्चात् मुसलमान विद्वानों पर 'चौदहवीं का चाँद' पुस्तक ने ही गहरी व अमिट छाप छोड़ी है। इस बात को आर्यसमाजी वक्ता व विद्वान् जानते ही नहीं। यह मेरा ही मत नहीं है। हमारे मान्य मित्र श्री निशात जी भोपाल व उदीयमान आर्य गवेषक श्री राजवीरसिंह आर्य का भी यही मत है।

डॉ० ग़ुलाम जैलानी बर्क की मौलिक पुस्तक 'अल्लाह की आदत' का नाम ही पण्डित चमूपति की देन है। ईश्वरीय ज्ञान अनादि व नित्य ही होता है। उसमें अदल-बदल नहीं हो सकती। ईश्वर एक ही दिन (कयामत को) न्याय नहीं करता वह प्रतिक्षण न्याय देता है। ईश्वरीय ज्ञान व विकासवाद परस्पर विरोधी विचार हैं। पैग़म्बरों ने कोई चमत्कार नहीं दिखाये। पाप क्षमा नहीं होते। ये सब विचार सुयोग्य लेखक पर इस ग्रन्थ के प्रभाव की छाप का ज्वलन्त प्रमाण हैं। कहीं-कहीं तो भाषा भी मिलती-जुलती है। चुटकियों की रंगत भी चौदहवीं का चाँद सरीखी है।

डॉ० जैलानी ने चमत्कारों के खण्डन में बाइबिल व कुरान के जो प्रमाण दिये हैं वे भी वही हैं जो पण्डित चमूपति जी देते हैं। पण्डित जी ने इस ग्रन्थ में पचास से घटाकर पाँच नमाज़ें करने वाली हदीस देकर उसका विवेचन किया है। डॉ० जेलानी जी ने भी अपने 'दो इस्लाम' में इसे दिया है और इस पर अपनी टिप्पणी देते हुए पं० चमूपति जी की शैली में अच्छी चुटकियाँ ली है। 'तकदीर' पर डॉ० जेलानी ने भी लिखा है और पं० चमूपति जी ने भी इस पुस्तक में इस विषय पर एक पठनीय अध्याय दिया है। दोनों का मिलान करके देखिये। इस्लाम पर पण्डित चमूपति की पुस्तक की गहरी छाप का स्पष्ट पता चल जावेगा।

जब तकदीर (भाग्य लेख) पूर्व निश्चित था तो पैग़म्बर क्यों

भेजे गये? यह प्रश्न डॉ० जेलानी ने भी प्रबल शब्दों में उठाया है। दबे शब्दों में जीव का अनादित्व व पुनर्जन्म भी स्वीकार किया गया है। सृष्टि नियमों का उदाहरण देकर चमत्कार क्या होते हैं, यह 'चौदहवीं का चाँद' सातवें अध्याय में विचार किया गया है। ठीक इसी शैली में डॉ० जेलानी ने मौजिज़ों पर विचार किया है।

ईश्वरीय ज्ञान का आविर्भाव कैसे होता है? इस्लाम अब चुपचाप आर्य मान्यता को स्वीकार कर रहा है। दो इस्लाम पुस्तक पढ़कर तो देखें। धर्म अनादि काल से एक है और एक ही रहेगा। युग-युग में धर्म या इल्हाम नया नहीं आता। यह 'अल्लाह की आदत' में दिया गया है। फ़रिशते की परिभाषा भी 'चौदहवीं का चाँद' ने समझा दी। मुफ़्त की जन्नत, चार सहस्र पाप क्षमा होने, 'रोज़ा व चुम्बन' विषय पर 'दो इस्लाम' के विचार पढ़कर 'चौदहवीं का चाँद' के ऐसे प्रसंगों को निकालकर मिलान कीजिये। हज़रत मुहम्मद के मधुपान की घटना मुस्लिम ग्रन्थों के आधार पर पण्डित जी ने दी है। डॉ० जेलानी जी ने भी 'दो इस्लाम' में यह हदीसें दी हैं। उन पर डॉ० जेलानी जी की टिप्पणियाँ भी पढ़ लीजिये।

हम इस सम्पादकीय में इस विषय पर अधिक विस्तार में नहीं जाना चाहते। कभी समय मिला तो कुछ और लिख देंगे। अब हम 'चौदहवीं का चाँद' से पण्डित जी की कुछ गिनी-चुनी चुटकियों व युक्तियों को यहाँ देंगे। यदि ज्ञान-पिपासु जिज्ञासु इनको दस-बीस बार पढ़ेंगे तो उनके विचारों में परिपक्वता व दृढ़ता आयेगी।

१. इस्लाम के निरस्तीकरण के विचार पर पण्डितजी लिखते हैं—"अपने पूर्ववर्ती ईश्वरीय ज्ञान का निरस्तीकरण भी करो व स्वयं निरस्तीकरण की प्रक्रिया के प्रभाव में न आओ। ये दोनों सिद्धान्त परस्पर विरोधी ही होंगे।"

२. "ऋषि के मन्तव्यानुसार वेद की निन्दा करने वाला नास्तिक माना गया है, परन्तु इस नास्तिक के लिए महर्षि ने न कहीं नरक की व्यवस्था की है, न परमात्मा की दया व कृपा का द्वार सदा के लिए बन्द किया है।"

३. "सुख व दु:ख तो संसार में प्राप्त होते ही रहते हैं। यहीं स्वर्ग है, यहीं नरक है। इस नरक में पड़ा व्यक्ति घृणा का पात्र नहीं, अपितु

सहानुभूति का पात्र है।''

४. ''कुरान के भाष्यों में परहेज़गार के अर्थ इस प्रकार किए गए हैं, ऐसा व्यक्ति जो परमात्मा द्वारा प्रारम्भ से पवित्रत्मा बनाया गया है। ऋषि की आपत्ति है ऐसे पवित्रात्मा को उपदेश की क्या आवश्यकता है?''

५. ''जिहाद को आत्मा रक्षा का युद्ध मानते हैं और इसके समर्थन में वेद तथा मनुस्मृति को उद्धृत करते हैं। जो इस बात की स्पष्ट स्वीकृति है कि इस्लामी कर्मशास्त्र आपका साथ नहीं देता।''

६. ''सुअर के मांस को विशेषतया गर्म देशवासियों के लिए अस्वास्थकर कहकर उसके निषेध के लिए विचित्र ही इस्लामी आचार संहिता गढ़ना चाही है।''

७. ''ऋषि की आलोचना का क्रम आयतों के क्रम में है, क्योंकि स्वयं कुरान में विषयों की कोई क्रमबद्धता नहीं, पुनरुक्ति दोष हुआ है।''

८. ''वेद का ईश्वरीय सन्देश आध्यात्मिक, मानसिक है, मौखिक नहीं।''

९. ''जिसे (अल्लाह) आठ व्यक्ति उठाएँगे उसके साकार होने में क्या सन्देह रहा?''

१०. ''रसूल ने परदे में ख़ुदा से बातचीत की तो खुदा भी तो उसी परदे में होगा।''

११. ''जब अर्श का दायाँ-बायाँ है तो स्पष्ट ही वह शारीरिक ही हुआ।''

१२. ''यदि इस संसार में दुःख-सुख बिना पूर्ववर्ती कर्मों के दिए जाते हैं तो न्याय के दिन के स्वर्ग व नरक भी बिना कर्मों के क्यों न मिलेंगे?''

१३. ''अल्लाह पूर्ण है, पवित्र है, नेक है तो उसकी रचना में दोष, पाप व कमज़ोरियाँ प्रवेश कैसे पा गईं।''

१४. ''प्रश्न यह है कि जब शैतान भी अल्लाह ताला की ही रचना है और अल्लाह उसे जैसा चाहता बना सकता था तो उसे काफ़िर क्यों बनाया?''

१५. ''कोई पूछे कि किन कर्मों के पुरस्कार स्वरूप?'' [अल्लाह

मियाँ ने आदम व उसकी पत्नी को स्वर्ग में डाला था।]

१६. ''प्रलयकाल तक लोगों को, मनुष्यों के पथ-भ्रष्ट करने की! भला मनुष्य पर यह कृपा क्यों की? घमण्ड करे शैतान उसका दण्ड मिले मनुष्य को? विचित्र कृपालुता है!''

१७. ''परन्तु एक बात अवश्य कहेंगे कि बलात् कराए गए कर्मों का फल दण्ड व पुरस्कार नहीं होता। दोज़ख़ को दण्ड और स्वर्ग को पुरस्कार कहना भूल है, हाँ! अल्लाह की शक्ति और इच्छा के आगे नतमस्तक हैं।''

१८. ''तो एकाएक उससे यह सृष्टि उत्पन्न कैसे हो गई? अल्लाह का अपना इसमें कोई लाभ नहीं।''

१९. ''अल्लाह मियाँ के ज्ञान व कर्म में से पहले कौन था और पीछे कौन?''

२०. ''अल्लाह मियाँ का कौन-सा गुण पहले आता है? ज्ञान गुण कि कर्म का गुण? दर्शन शास्त्र का यह गम्भीर प्रश्न है जिसका समाधान केवल नित्य कर्म के विश्वासकर्ताओं पास ही है।''

२१. ''एक दाने के लाखों व करोड़ों दाने हो जाते हैं। परमात्मा ही तो इन्हें बढ़ाता है। हम उससे लाभ उठा लेते हैं। इसमें यदि नियम व व्यवस्था न हो तो कोई किस भरोसे पर बीज बोए। उसे पानी के और फ़सल काटे?''

२२. ''चमत्कार वास्तव में प्रभु की सत्ता की स्वीकृति नहीं इन्कार हैं। परमात्मा नित्य है, अनादि है तो उसकी शक्ति का प्रदर्शन भी नित्य है, शाश्वत है, क्षण-क्षण में होता है।''

२३. ''परमात्मा के नियम व कार्य में परिवर्तन होना असम्भव है।''

२४. ''वेद की दृष्टि में परमात्मा के नियम परमात्मा की पवित्र आज्ञाएँ हैं।''

२५. ''परमात्मा के प्यारे वे हैं............जिनका सदाचार ही उनकी महानता है।''

२६. ''स्वयं कुरान में मस्जिद हराम मस्जिदे अकसा तक एक रात में जाना वर्णन किया है। वह उस समय चमत्कार था, परन्तु आज गुब्बारों व विमानों का युग है। इस समय इसे कौन चमत्कार मान सकता है?''

२७. ''परमात्मा ने अपने नियमों का प्रदर्शन समस्त कार्यों में कर रखा है।''

२८. ''मनुष्य के स्वभाव की विशेषता यह है कि विद्या उसे सिखाने से आती है।''

२९. ''वास्तव में ज्ञान के आरम्भ और भाषा के आरम्भ का प्रश्न सम्मिलित है।''

३०. ''मानव के ज्ञान का जो आरम्भिक स्रोत होगा वही भाषा का भी स्रोत माना जाएगा।''

३१. ''यह भी एक पृथक् प्रश्न है कि आदम को श्रेष्ठता प्रदान करने का क्या कारण था?''

३२. ''कुरान में इस्लाम का अस्तित्व सृष्टि के आरम्भ से माना है।''

३३. ''हज़रत आदम का इल्हाम ठीक व पूर्ण था तो उसके पश्चात् दूसरे इल्हामों की क्या आवश्यकता पैदा हो गई?''

३४. ''हज़रत मूसा व हज़रत ईसा की पुस्तकें आजकल भी मिलती हैं, उन्हीं से हज़रत मुहम्मद ने काम क्यों न चला लिया?''

३५. ''वास्तव में यह विकास का प्रश्न ही मुसलमानों का प्रारम्भिक विचार नहीं। यह विचार उन्हें अब सूझा है।''

३६. ''इल्हाम एक ही हो सकता है। वह पूर्ण होगा जैसा कि परमात्मा पूर्ण है। कुरान को भी अन्तिम इल्हाम स्वीकार न करो।''

३७. ''**क्योंकि यदि मानवीय विकास ठीक है तो उसकी हज़रत मुहम्मद के काल या उसके पश्चात् आज तक भी समाप्ति तो हो नहीं गई।**''

३८. ''कुरान की मान्यता तो यह भी प्रतीत होती है कि धर्म प्रत्येक जाति का पृथक्-पृथक् है।''

३९. ''हज़रत मुहम्मद मुसलमानों की दृष्टि में निष्पाप व्यक्तित्व हैं। परन्तु आपके पुत्र हज़रत इब्राहिम की मृत्यु हुई जिससे हज़रत को दु:ख था। हज़रत ने आँसू भी बहाये। हज़रत स्वयं मृत्यु से पूर्व बीमार रहे। इसका कारण?''

४०. ''यदि वर्तमान जीवन के सुख-दु:ख अकारण प्राप्त हुए हैं तो भविष्य में भी, अर्थात् न्याय के दिन दोज़ख़ जन्नत पर कर्म के

बंधन का सिद्धान्त दार्शनिक दृष्टि से कहाँ तक युक्तियुक्त है?''

४१. ''या फिर यह मानना होगा कि संसार में तो प्रभु बिना न्याय के काम चलाता है, परन्तु न्याय के दिन अपनी कार्य पद्धति बदल लेगा।''

४२. ''**पण्डित जी ने इसी प्रसंग में एक गम्भीर प्रश्न उठाया है। ईश्वर में न्याय के गुण को अनादि मानने से कर्त्ता जीवों को भी अनादि मानना होगा।**''

४३. ''समझ में नहीं आता कि मुसलमान कर्मों के बिना भी संकट आने को तो ईश्वरेच्छा स्वीकार करते हैं और कर्मों के रहते उसके दण्ड को ईश्वरेच्छा स्वीकार नहीं करते।''

४४. ''यदि पाप के बिना कष्ट देने में संकोच नहीं तो पाप के होते कष्ट क्यों न दिया जाएगा?''

४५. ''भाग्य लेख (तकदीर) तो हमारा प्रारम्भ से ही निश्चित है फिर इस दिन (कयामत वाले दिन) नूतन क्या होगा?''

४६. ''प्रारम्भ से ही अभाव से भाव में लाने की क्या आवश्यकता?''

४७. ''**(बहिश्त में) केवल सांसारिक भोग-विलास की पराकाष्ठा है। हाँ! वर्तमान काल के विज्ञान द्वारा आविष्कृत कोई वस्तु वहाँ नहीं रखी गई।**''

४८. ''परिश्रम व उद्यम वैभवीय दोषों के सुधारक होते हैं।''

४९. ''बहिश्त में प्रविष्ट होते ही (शराब की नहरें) क्या पुण्य बन जाएंगी?''

५०. ''अल्लाह मियाँ ने अपने पुरस्कार मुसलमानों के लिए विशेष सुरक्षित किये नहीं हैं आगे भविष्य में ईश्वरीय गुणों के इतिहास में नये अध्याय का आरम्भ हो तो और बात है।''

५१. ''कुरान में एक नहीं बीसियों स्थानों पर परमात्मा की आज्ञापालन के साथ ही रसूल की आज्ञापालन का बराबर वर्णन है। यही नहीं उनकी आज्ञा न पालने पर दण्ड है।''

५२. ''कुरान में अल्लाह व रसूलों में भेदभाव न करने की आज्ञा है (देखें सूरते निसा आयत १५०-१५१)।''

५३. ''युद्धों का तो अहले इस्लाम को बाद में भी सामना करना पड़ा, परन्तु यह फ़रिशतों की सेना कहीं और भी आई हो ऐसी

प्रामाणिक चर्चा और कहीं नहीं आई।''

५४. ''आसमानों पर बैठे हुए को इसकी (बिचौलिये) की आवश्यकता हो सकती है। सर्वव्यापक को नहीं।''

५५. ''संसार की सारी कार्यशाला परमात्मा के ज्ञान की प्रयोगशाला ही तो है।''

५६. ''वर्तमान सृष्टि से पूर्व वह विद्यमान तो था, परन्तु कोई कार्य नहीं करता था तो उस समय उसकी (अल्लाह मियाँ की) क्या अवस्था थी और जो दशा एक बार आ चुकी क्या वह फिर दोबारा नहीं आयेगी?''

५७. ''सारा कुरान एक ही समय में तो उतरा नहीं, कभी यह आयत कभी वह आयत, फिर यह क्यों कि उतरने के इन सभी कालों में से लैलतुलकदर को विशेषतया पुण्याई के लिए चुन लिया गया है।''

५८. ''क्या लैलतुलकदर में उतरे कुरान के अंशविशेषतया अन्य अंशों की तुलना में अधिक महत्त्व के हैं?''

५९. ''इतना ही अच्छा है कि एक हदीस में फ़रमाया है कि ख़ुदा किसी बात से इतना रुष्ट नहीं होता जितना तलाक से।''

६०. ''क्या यह ईश्वरीय सन्देश की कमी नहीं है कि इनमें निषिद्ध वस्तुओं की सूची अत्यन्त अपूर्ण दी है। जिसे कुरान के पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान होने का विश्वास हो वह क्या इन निषिद्ध वस्तुओं के अतिरिक्त और सब वस्तुयें वैद्य समझे?''

६१. ''मौलाना! ऋषि या उनके चेलों ने कभी कुरान की सभी शिक्षाओं को झूठा नहीं कहा।''

६२. ''**कुछ सङ्कट ऐसे हैं जो जन्म के साथ ही उतर आते हैं वे किस कर्म के फल हैं?**''

६३. मौलाना सनाउल्ला जी के इस कथन पर कि कभी-कभी खुदाई कानून पालन करने से प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती, श्री पण्डित जी ने यह चुटकी ली है—''तो आपको प्रसन्नता किससे होती है?''

६४. मौलाना ने जन्नतियों के बच्चों को ही ग़िलमान माना है। इस पर पण्डित जी ने लिखा है, ''परन्तु इनके सुपुर्द सेवा तो है प्याले लिए फिरना। अपने पुत्रों से यही काम लिया जाता है?''

६५. ''उनके जन्म लेने तक यह सेवा कौन करेगा?''

पाठक यह न भूलें कि 'चौदहवीं का चाँद' पुस्तक मौलाना सनाउल्ला जी की पुस्तक 'हक प्रकाश' के उत्तर में लिखी गई थी। सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन के पश्चात् एक लम्बे समय तक मुसलमान चुप रहे। किसी ने भी सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास में कुरान की आयतों की समीक्षाओं पर कुछ नहीं लिखा। मौलाना जी ने इसे उर्दू अनुवाद छपने से बहुत पहले हिन्दी में ही पढ़ा था। अपने मित्रों के दबाव पर मौलाना ने सन् १९०० में इसके खण्डन में 'हक प्रकाश' लिखा।[१]

यद्यपि इस पुस्तक की भाषा कहीं-कहीं अत्यन्त आपत्तिजनक थी तथापि आर्यसमाज ने इसके विरुद्ध 'हाय तौबा' न मचाई। श्री स्वामी योगेन्द्रपाल जी ने कुछ लेख लिखकर इसके मुख्य-मुख्य आक्षेपों का उत्तर दिया। उन लेखों की कुछ सामग्री लघु पुस्तिकाओं के रूप में भी कभी छपी थी। फिर स्वामी दर्शनानन्द जी ने भी इसके खण्डन में 'तकज़ीबे हक प्रकाश' नाम से एक पुस्तिका निकाली। जब मुसलमानों ने 'हक प्रकाश' का बार-बार प्रकाशन किया तो आर्य बन्धुओं ने इसके एक-एक बिन्दु की विवेचना करते हुए प्रत्युत्तर में एक प्रामाणिक पुस्तक लिखने को कहा।

मौलाना की पुस्तक की शैली व स्तर कैसा था यह इस ग्रन्थ के अवलोकन से विचारशील पाठक जान ही जायेंगे। हम यहाँ इसके केवल दो ही उदाहरण देकर आगे चलेंगे। मौलाना ने महर्षि दयानन्द को लक्ष्य करके एक उर्दू पद्य कुछ अदल-बदल कर दिया है।

सम्भल कर पाँव रखना मैकदा में सरस्ती साहब
यहाँ पगड़ी उछलती है इसे मैख़ाना कहते हैं[२]

अर्थात् अय स्वामी दयानन्द सरस्वती! मदिरालय में सोच समझकर पग धरना। यहाँ पगड़ी उछलती है। इसे मधुशाला कहा जाता है।

ऋषिवर मदिरालय के बारे क्या जानें। मौलाना को मदिरालय का कोई खट्टा, मीठा व कटु अनुभव हुआ होगा। अपना-अपना

---

१. देखिये भूमिका 'हक प्रकाश' पृष्ठ १।

२. देखिये 'हक प्रकाश' पृष्ठ १००।

भाग्य है।

एक दूसरा उदाहरण लीजिये। मौलाना ने एक नहीं दो बार ऋषि पर फ़ारसी का यह पद्य चरितार्थ किया है—

न मुहक्किक बूद न दानिशमन्द।
चारपाय बर ऊ किताबे चन्द॥[१]

अर्थात् न तो वह गवेषक था और न ही बुद्धिमान्। एक चौपाया था जिस पर कुछ पुस्तकें लदी हुई थीं।

यहाँ पाठकों को यह बताना रुचिकर होगा कि बद्दोमल्ली ज़िला स्यालकोट में ठाकुर अमरसिंह जी आर्यपथिक से शास्त्रार्थ करते हुए इन्हीं मौलाना ने अपने भाषण में कहा था, ''जब मैं आर्यसमाज में बोलता हूँ तो मुझे ऐसे अनुभव होता है कि मैं किसी युनिवर्सिटी में बोल रहा हूँ।''

'चौदहवीं का चाँद' का अवलोकन करते हुए पाठक जान जायेंगे कि सत्यार्थप्रकाश का खण्डन करने बैठे मौलाना हड़बड़ा गये। सत्यार्थप्रकाश व ऋषि को कोसते गये और इस्लाम की कुटाई व कटाई करके रख दी। प्रचलित इस्लाम को सलाम करके इस्लाम की नई-नई व्याख्यायें घड़ते गये। एक स्थान पर तो 'काफ़िर' बनने या कहलवाने पर भी गौरव अनुभव करते हैं। कहीं-कहीं वेद के रंग में भी अच्छे रंगे गये। पण्डित चमूपति जी ने बात-बात पर अच्छा पकड़ा, झकझोरा व चिताया।

आप देखें तो मौलाना ने तो अल्लाह ताला को भी नहीं छोड़ा। अपनी पुस्तक में एक स्थान पर तो यह लिखा है, ''जन्नत उन लोगों के लिए है जो कुफ्र शिरक में न मरे हों।''[२]

और दूसरे स्थान पर जब ऋषि के इस प्रश्न का उत्तर देना पड़ा कि बहिश्त में खाने-पीने की सामग्री होगी तो मल-मूत्र भी बहिश्ती करेंगे फिर जन्नत की गन्दगी कौन उठायेगा? इस पर मौलाना खीज कर लिखते हैं, ''परन्तु काफ़िरों ही से यदि यह कार्य ख़ुदा ले ले तो कोई हरज की बात नहीं। **उन्हीं को इस बेगार में फँसाये**।''[३]

---

१. द्रष्टव्य 'हक प्रकाश' पृष्ठ ४४।
२. द्रष्टव्य वही पृष्ठ २२७।
३. द्रष्टव्य 'हक प्रकाश' पृष्ठ २१६।

इस्लामी बहिश्त को नरक बनने से बचाने के लिए हम काफ़िरों से भले ही बेगार ले लो। अल्लाह पर बेगार (Bonded Labour) लेने का दोष मढ़ दो, परन्तु यह सोच लिया होता कि अल्लाह ने तो अपने कलाम में बार-बार जन्नत में हमारा प्रवेश निषिद्ध कर रखा है।

पण्डित चमूपति जी ने तो इसके साथ ही यह भी प्रश्न पूछ लिया है कि जब काफ़िर गन्दगी उठाने बहिश्त में प्रविष्ट होंगे तो क्या दोज़ख़ के सब सामान यथा गर्म पानी लू आदि सब सामग्री उनके साथ जन्नत में जायेगी? कितना सूक्ष्म प्रश्न है!

चलो! हम आर्यों को मौलाना ने ठीक-ठीक पहचाना तो। हमारे बिना इस्लामी जन्नत में प्रदूषण और न जाने क्या-क्या होगा!

महर्षि की समीक्षाओं ने मुसलमानों पर सर्वाधिक उपकार किया है। कर्मफल व पुनर्जन्म का नाम ही सुनकर बिदकने वाले मौलाना लिखते हैं, ''जो कुछ तुम को दुःख विपदा प्राप्त होती है तुम्हारे कुकर्मों का ही फल है।''[१]

'चौदहवीं का चाँद' का यह हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने पर हम प्रकाशक को हार्दिक बधाई देते हैं। इनका यह कार्य ऐतिहासिक सिद्ध होगा। इसकी इस समय बहुत आवश्यकता थी। मान्य श्री सत्येन्द्रसिंह जी आर्य व आर्यजगत के उदीयमान गवेषक व विद्वान् श्री राजवीरजी आर्य का आग्रह था कि हम इस मौलिक पुस्तक का हिन्दी अनुवाद करें। हम भी यही चाहते थे, परन्तु अनुवादक कुँवर शिवराजसिंह जी मौलवी फ़ाज़िल हमारे बड़े स्नेही व कृपालु थे। अत्यन्त योग्य थे। इस्लाम के मर्मज्ञ थे। ठाकुर अमरसिंह जी व कुँवर सुखलाल जी के भाई ही लगते थे। आप तपोधन आचार्य देवप्रकाश जी का शिष्य होने के कारण भी हमसे बड़ा प्यार करते थे।

उन्होंने अपने अनुवाद का प्राक्कथन लिखने के लिये हमें लिखा भी और मिलकर भी कई बार कहा, परन्तु लाला रामगोपाल जी ने अपने नाम से भूमिका लिखवाकर छपवा दी। श्री पं० शिवराजसिंह जी योग्य तो बहुत थे परन्तु अपनी एक न्यूनता (जिसकी चर्चा करने का कोई लाभ नहीं) के कारण वह पुस्तक से ठीक-ठीक न्याय न कर सके। कुरान की आयतों के अते-पते मूल में ही अशुद्ध छप गये

---

१. देखिये 'हक प्रकाश' पृष्ठ २१।

थे। उन्होंने पतों के मिलान का कष्ट नहीं किया।

सत्यार्थप्रकाश के प्रमाण उर्दू अनुवाद से दिये गये थे। हिन्दी अनुवाद में मूलग्रन्थ के प्रमाण उद्धृत किये जाते तो अच्छा होता। मूल पुस्तक के पृष्ठ १२८ पर कातिब की अज्ञता व असावधानी से अरबी के '**आलाम**' शब्द की बजाय '**आराम**' छप जाने से वाक्य का आशय ही उलट हो गया। अनुवादक जी ने इस भूल के सुधार की ओर कतई ध्यान न दिया। यह मुद्रण दोष मुझे सदा चुभता रहा।

अनुवाद करते समय अनुवादक महोदय वाक्यों के वाक्य छोड़ गये। शब्द तो कई छूट गये। जब हिन्दी में अनुवाद करने लगे थे तो अनुवाद कर देते। न जाने क्यों अनेक स्थानों पर उन्होंने कठिन बोझिल अरबी-फ़ारसी शब्दों का अनुवाद किया ही नहीं।

मूल ग्रन्थ में फ़ारसी ग्रन्थों के भी कई प्रमाण हैं। प्रूफ़ पढ़ते समय उनकी शुद्धता का ध्यान नहीं दिया गया जब कि वह फ़ारसी भाषा के एक अधिकारी विद्वान् थे। इन कारणों से इस संस्करण के प्रूफ़ पढ़ने व सम्पादन संशोधन का कार्य अति कठिन व कष्टप्रद हो गया। इससे तो अच्छा यही होता कि नया अनुवाद कर दिया जाता। परन्तु हमें यही अभिप्रेत था कि श्रीमान् पं० शिवराज जी मौलवी फ़ाज़िल का अनुवाद ही चलना चाहिए।

हमने कुरान की आयतों के अते-पते देते हुए कुरान के एक ही संस्करण की सहायता नहीं ली। कारण यह है कि सब संस्करणों में आयत संख्या एक-सी नहीं। अब भी यदि कहीं कोई पता अशुद्ध छप गया है तो पाठकों के सुझाने पर अगले संस्करण में सुधार कर दिया जावेगा।

पाठक पुराने संस्करण से इस संस्करण का मिलान करके ही हमारे परिश्रम का मूल्याङ्कन कर सकेंगे। स्थान-स्थान पर उपयोगी टिप्पणियाँ देकर हमने इस संस्करण को महिमा मण्डित करने के लिये भरपूर श्रम किया है। वैदिक धर्म व इस्लाम पर अधिकारपूर्वक लिखने व बोलने वालों के लिए 'चौदहवीं का चाँद' एक Indispensable (अपरिहार्य) पुस्तक है। आर्यसामाजिक साहित्य के इस मूल्यवान् रत्न का उद्धार करके हमें एक विशेष प्रकार के सन्तोष व गौरव की अनुभूति हो रही है। महान् लेखक ने प्रबल प्रमाणों से सब विचारणीय

विषयों पर प्रकाश डाला है। प्रमाणों के अते-पते मूल में ही कातिब की कृपा से प्रायः अशुद्ध छप गये। हमने ठीक-ठीक पते देने का पूरा प्रयास किया है तथापि यदि कोई दोष रह गया है तो गुणियों के सुझाने पर अगले संस्करण में सुधार कर दिया जावेगा।

आर्य जनता का कृतज्ञ हृदय प्रकाशक को इस करणीय कार्य पर जितना भी धन्यवाद दे वह थोड़ा है। पं० चमूपति साहित्य के उद्धार में प्रभाकरजी का एक विशेष योगदान रहा है। जो कार्य बड़ी-बड़ी सभाओं का था वह अब कुछ गिने-चुने व्यक्ति व संस्थाएँ कर रही हैं। सभाओं की रुचि महासम्मेलनों तक सिमटकर रह गई है।

इसे पं० धर्मभिक्षुजी के समर्पण करके हमने उस धर्म योद्धा का भी तर्पण कर दिया है।

पं० गुरुदत्त जन्म दिवस
वि० संवत् २०६६

आर्य जाति का सेवक
राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
वेद सदन, अबोहर-१५२ ११६

चौदहवीं का चाँद

प्रारम्भ ही मिथ्या से

वर्तमान कुरान का प्रारम्भ बिस्मिल्ला से होता है। सूरते तौबा के अतिरिक्त और सभी सूरतों के प्रारम्भ में यह मंगलाचरण के रूप में पाया जाता है। यही नहीं इस पवित्र वाक्य का पाठ मुसलमानों के अन्य कार्यों के प्रारम्भ में करना अनिवार्य माना गया है।

ऋषि दयानन्द को इस कल्मे (वाक्य) पर दो आपत्तियाँ हैं। **प्रथम यह कि कुरान के प्रारम्भ में यह** कल्मा परमात्मा की ओर से प्रेषित (इल्हाम) नहीं हुआ है। **दूसरा यह कि मुसलमान लोग कुछ ऐसे कार्यों में भी इसका पाठ** करते हैं जो इस पवित्र वाक्य के गौरव के अधिकार क्षेत्र में नहीं।

पहली शंका कुरान की वर्णनशैली और ईश्वरी सन्देश के उतरने से सम्बन्ध रखती है। हदीसों (इस्लाम के प्रमाणिक श्रुति ग्रन्थ) में वर्णन है कि सर्वप्रथम सूरत **'अलक'** की प्रथम पाँच आयतें परमात्मा की ओर से उतरीं। हज़रत जिबरील (ईश्वरीय दूत) ने हज़रत मुहम्मद से कहा—

'इकरअ बिइस्मे रब्बिका अल्लज़ी ख़लका'

पढ़! अपने परमात्मा के नाम सहित जिसने उत्पन्न किया। इन आयतों के पश्चात् सूरते **मुज़मिल** के उतरने की साक्षी है। इसका प्रारम्भ इस प्रकार हुआ—

या अय्युहल मुज़म्मिलो

ऐ वस्त्रों में लिपटे हुए!

ये दोनों आयतें हज़रत मुहम्मद को सम्बोधित की गई हैं। मुसलमान ऐसे सम्बोधन को या हज़रत मुहम्मद के लिए विशेष या उनके भक्तों के लिए सामान्यतया नियत करते हैं। जब किसी आयत का मुसलमानों से पाठ (किरअत) कराना हो तो वहाँ **'इकरअ' (पढ़) या कुन (कह)** भूमिका इस आयत के प्रारम्भ में ईश्वरीय

सन्देश के एक भाग के रूप में वर्णन किया जाता है। यह है इल्हाम, ईश्वरीय सन्देश कुरान की वर्णनशैली जिस से इल्हाम प्रारम्भ हुआ था।

अब यदि अल्लाह को कुरान के इल्हाम का आरम्भ बिस्मिल्लाह से करना होता तो सूरते अलक के प्रारम्भ में हज़रत जिबरील ने बिस्मिल्ला पढ़ी होती या इकरअ के पश्चात् बिइस्मेरब्बिका के स्थान पर बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम कहा होता।

मुज़िहुल कुरान में सूरत फ़ातिहा की टिप्पणी पर जो वर्तमान कुरान की पहली सूरत है, लिखा है—

यह सूरत अल्लाह साहब ने भक्तों की वाणी से कहलवाई है कि इस प्रकार कहा करें।

यदि यह सूरत होती तो इसके पूर्व कुल (कह) या इकरअ (पढ़) जरूर पढ़ा जाता।

कुरान की कई सूरतों का प्रारम्भ स्वयं कुरान की विशेषता से हुआ है। अतएव सूरते बकर के प्रारम्भ में, जो कुरान की दूसरी सूरत है प्रारम्भ में ही कहा—

'ज़ालिकल किताबोला रैबाफ़ीहे, हुदन लिलमुत्तकीन'

यह पुस्तक है इसमें कुछ सन्देह (की सम्भावना) नहीं। आदेश करती है परहेज़गारों (बुराइयों से बचने वालों) को। तफ़सीरे इत्तिकान (कुरान भाष्य) में वर्णन है कि इब्ने मसूद अपने कुरान में सूरते फ़ातिहा को सम्मिलित नहीं करते थे। उनकी कुरान की प्रति का प्रारम्भ सूरते बकर से होता था। वे हज़रत मुहम्मद के विश्वस्त मित्रों (सहाबा) में से थे। कुरान की भूमिका के रूप में यह आयत जिसका हमने ऊपर उल्लेख किया है, समुचित है। ऋषि दयानन्द ने कुरान के प्रारम्भ के लिए यदि इसे इल्हामी (ईश्वरीय रचना) माना जाए यह वाक्य प्रस्तावित किये हैं। यह प्रस्ताव कुरान की अपनी वर्णनशैली के सर्वथा अनुकूल है और इब्ने मसूद इस शैली को स्वीकार करते थे। मौलाना मुहम्मद अली अपने अंग्रेज़ी कुरान अनुवाद में पृष्ठ ८२ पर लिखते हैं—

कुछ लोगों का विचार था कि बिस्मिल्ला जिससे कुरान की प्रत्येक सूरत प्रारम्भ हुई है, प्रारम्भिक वाक्य (कल्मा) के रूप में

बढ़ाया गया है यह इस सूरत का भाग नहीं।

एक और बात जो बिस्मिल्ला के कुरान शरीफ़ में बाहर से बढ़ाने का समर्थन करती है वह है, प्रारम्भिक वाक्य (कल्मा) के रूप में बढ़ाया गया है यह इस सूरत का भाग नहीं।

एक और बात जो बिस्मिल्ला के कुरान शरीफ़ में बाहर से बढ़ाने का समर्थन करती है वह है **सूरते तौबा के प्रारम्भ में कल्माए तस्मिआ (बिस्मिल्ला) का वर्णन न करना**। वहाँ लिखने वालों की भूल है या कोई और कारण है जिससे बिस्मिल्ला लिखने से छूट गया है। यह न लिखा जाना पढ़ने वालों (कारियों) में इस विवाद का भी विषय बना है कि सूरते इन्फ़ाल और सूरते तौबा जिनके मध्य बिस्मिल्ला निरस्त है दो पृथक् सूरते हैं या एक ही सूरत के दो भाग–अनुमान यह होता है कि बिस्मिल्ला कुरान का भाग नहीं है। लेखकों की ओर से पुण्य के रूप (शुभ वचन) भूमिका के रूप में जोड़ दिया गया है और बाद में उसे भी ईश्वरीय सन्देश (इल्हाम) का ही भाग समझ लिया गया है।

यही दशा सूरते फ़ातिहा की है, यह है तो मुसलमानों के पाठ के लिए, परन्तु इसके प्रारम्भ में कुन (कह) या इकरअ (पढ़) अंकित नहीं है। **और इसे भी इब्ने मसूद ने अपनी पाण्डुलिपि में निरस्त कर दिया था।**

स्वामी दयानन्द की शंका एक ऐतिहासिक शंका है यदि **बिस्मिल्ला और सूरते फ़ातिहा पीछे से जोड़े गए हैं तो शेष पुस्तक की शुद्धता का क्या विश्वास**? यदि बिस्मिल्ला ही अशुद्ध तो इन्शा व इम्ला (अन्य लिखने–पढ़ने) का तो फिर विश्वास ही कैसे किया जाए?

कुछ उत्तर देने वालों ने इस शंका का इल्ज़ामी (प्रतिपक्षी) उत्तर वेद की शैली से दिया है कि वहाँ भी मन्त्रों के मन्त्र और सूक्तों के सूक्त परमात्मा की स्तुति में आए हैं और उनके प्रारम्भ में कोई भूमिका रूप में ईश्वरीय सन्देश नहीं आया।

वेद ज्ञान मौखिक नहीं—वेद का ईश्वरीय सन्देश आध्यात्मिक, मानसिक है, मौखिक नहीं। ऋषियों के हृदय की दशा उस ईश्वरीय ज्ञान के समय प्रार्थी की दशा थी। उन्हें कुल (कह) कहने की क्या

आवश्यकता थी। वेद में तो सर्वत्र यही शैली बरती गई है। बाद के वेदपाठी वर्णनशैली से भूमिकागत भाव ग्रहण करते हैं। यही नहीं, इस शैली के परिपालन में संस्कृत साहित्य में अब तक यह नियम बरता जाता है कि बोलने वाले व सुनने वाले का नाम लिखते नहीं। पाठक भाषा के अर्थों से अनुमान लगाता है। कुरान में भूमिका रूप में ऐसे शब्द स्पष्टतया लिखे गए हैं, क्योंकि कुरान का ईश्वरीय सन्देश मौखिक है जिबरईल पाठ कराते हैं और हज़रत मुहम्मद करते हैं। इसमें 'कह' कहना होता है। सम्भव है कोई मौलाना (इस्लामी विद्वान्) इस बाह्य प्रवेश को उदाहरण निश्चय करके यह कहें कि अन्य स्थानों पर इस उदाहरण की भाँति ऐसी ही भूमिका स्वयं कल्पित करनी चाहिए। निवेदन यह है कि उदाहरण पुस्तक के प्रारम्भ में देना चाहिए था न कि आगे चलकर, **उदाहरण और वह बाद में लिखा जाये यह पुस्तक लेखन के नियमों के विपरीत है।**

ऋषि दयानन्द की दूसरी शंका बिस्मिल्ला के सामान्य प्रयोग पर है। ऋषि ने ऐसे तीन कामों का नाम लिया है जो प्रत्येक जाति व प्रत्येक मत में निन्दनीय हैं। कुरान में मांसादि का विधान है और बलि का आदेश है। इस पर हम अपनी सम्मति न देकर **शेख ख़ुदा बख्श साहब एम० ए० प्रोफ़ेसर कलकत्ता विश्वविद्यालय के एक लेख से जो उन्होंने** ईदुज़्ज़हा के अवसर पर कलकत्ता के स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित कराई थी, निम्नलिखित उदाहरण प्रस्तुत किए देते हैं—

ख़ुदा बख्श जी का मत—''सचमुच–सचमुच बड़ा ख़ुदा जो दयालु व दया करने वाला है वह ख़ुदा आज ख़ून की नदियों का चीख़ते हुए जानवरों की असह्य व अवर्णनीय पीड़ा का इच्छुक नहीं प्रायश्चित?...... वास्तविक प्रायश्चित वह है जो मनुष्य के अपने हृदय में होता है। सभी प्राणियों की ओर अपनी भावना परिवर्तित कर दी जाए। भविष्य के काल का धर्म प्रायश्चित के इस कठोर व निर्दयी प्रकार को त्याग देगा। ताकि वह इन दीनों पर भी दयापूर्ण घृणा से दृष्टिपात करे। जब बलि का अर्थ अपने मन के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु या अन्य सत्ता का बलिदान है।''

—**'माडर्न रिव्यु से अनुवादित'**

दयालु व दया करने वाले परमात्मा का नाम लेने का स्वाभाविक परिणाम यह होना चाहिए था कि हम वाणी हीन जीवों पर दया का व्यवहार करते, परन्तु किया हमने इसके सर्वथा विरोधी कार्य...........। यह बात प्रत्येक सद्बुद्धि वाले मनुष्य को खटकती है।

मुज़िहुल कुरान में लिखा है—

जब किसी जानवर का वध करें उस पर बिस्मिल्ला व अल्लाहो अकबर पढ़ लिया करें। कुरान में जहाँ कहीं **हलाल (वैध) व हराम (अवैध)** का वर्णन आया है **वहाँ हलाल (वैध) उस वध को निश्चित किया है जिस पर अल्लाह का नाम पढ़ा गया हो। कल्मा पवित्र है** दयापूर्ण है, परन्तु उसका प्रयोग उसके आशय के सर्वथा विपरीत है।

(२) इस्लाम में बहु विवाह की आज्ञा तो है ही पत्नियों के अतिरिक्त रखैलों की भी परम्परा है। लिखा है—

वल्लज़ीन लिफ़रूजिहिम हाफ़िज़ून इल्ला अललअज़्वाजुहुम औ मामलकत ईमानु हुम। सूरतुल मौमिनीन आयत ऐन

और जो रक्षा करते हैं अपने गुप्त अंगों की, परन्तु नहीं अपनी पत्नियों व रखैलों से। तफ़सीरे जलालैन सूरते बकर आयत २२३

निसाउकुम हर सुल्लकुम फ़आतू हरसकुम अन्ना शिअतुम

तुम्हारी पत्नियाँ तुम्हारी खेतियाँ हैं जाओ अपनी खेती की ओर जिस प्रकार चाहो। तफ़सीरे जलालैन में इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है—

बिस्मिल्ला कहकर—सम्भोग करो जिस प्रकार चाहो, उठकर, बैठकर, लेटकर, उल्टे-सीधे जिस प्रकार चाहो.........**सम्भोग के समय बिस्मिल्ला कह लिया करो।**

बिस्मिल्ला का सम्बन्ध बहु विवाह से हो रखैलों की वैधता से हो। इस प्रकार के सम्भोग से हो यह स्वामी दयानन्द को बुरा लगता है।

(३) सूरते आल इमरान आयत २७

ला यत्तख़िज़ु मौमिनूनलकाफ़िरीना औलियाया मिनदूनिल मौमिनीना.........इल्ला अन तत्तकू मिनहुम तुकतुन

न बनायें मुसलमान काफ़िरों को अपना मित्र केवल मुसलमानों को ही अपना मित्र बनावें।

इसकी व्याख्या में लिखा है—

यदि किसी भय के कारण सहूलियत के रूप में (काफ़िरों के साथ) वाणी से मित्रता का वचन कर लिया जाए और हृदय में उनसे ईर्ष्या व वैर भाव रहे तो इसमें कोई हानि नहीं.......**जिस स्थान पर इस्लाम पूरा शक्तिशाली नहीं बना है वहाँ अब भी यही आदेश प्रचलित है।**

स्वामी दयानन्द इस मिथ्यावाद की आज्ञा भी ईश्वरीय पुस्तक में नहीं दे सकते। ऐसे आदेश या कामों का प्रारम्भ दयालु व दयाकर्त्ता, पवित्र और सच्चे परमात्मा के नाम से हो यह स्वामी दयानन्द को स्वीकार नहीं[१]।

१. इस्लामी साहित्य व कुर्आन के मर्मज्ञ विद्वान् श्री अनवरशेख़ को भी करनी-कथनी के इस दोहरे व्यवहार पर घोर आपत्ति है। —'जिज्ञासु'

अल्लाहताला एक सीमित व्यक्ति है

प्रत्येक धर्म में सर्वोच्चकोटि की कल्पना परमात्मा के सम्बन्ध में है। कुरान शरीफ़ में उसे अल्लाहताला कहा गया है। कुरान के कुछ वर्णनों पर विचार करने से विदित होता है कि इस्लाम में परमात्मा की कल्पना किसी असीम शक्ति की नहीं है, अपितु स्थान, समय व शक्ति के रूप में एक सीमित व्यक्ति की कल्पना है। **स्थानीयता की सीमा के साक्षी** निम्नलिखित उद्धरण हैं। शेष प्रकारों की सीमा का वर्णन आगे चलकर किया जाएगा।

इन्ना रब्बुकुमुल्लाहोल्लज़ी ख़लकस्समावात्
वलअरज़ाफ़ि सित्तते अय्यामिन सुम्मस्तवा अलल अरशे।

—सूरते यूनिस आयत ३

वास्तव में पालनहार तुम्हारा अल्लाह है। जिसने उत्पन्न किया आकाशों को और भूमि को छह दिन में फिर स्थिरता धारण की ऊपर अर्श (अल्लाह का सिंहासन) पर।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

मा बदो ईमान दारेम व तावीले आं बहक गुज़ारेम

व्याख्या अल्लाह पर छोड़ो—हम इस पर ईमान (श्रद्धा विश्वास) रखते हैं और उसकी व्याख्या अल्लाह मियाँ पर छोड़ते हैं।

सूरते हूद में आया है

व हुव ल्लज़ी ख़लकस्ममावाते वलअरज़े फ़ीसित्तते
अय्यमिन व काना अरशहू अललमाए।

—सूरते हूद आयत ७

और जिसने उत्पन्न किया आकाशों को और भूमि को छह दिन में और है उसका अर्श (सिंहासन) पानी पर।

इस पर तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

दर बरख़े अज़ तफ़ासीर आवुर्दा कि हकताला दर मबदए आफ़रीनशं याकूते सब्ज़ बयाफ़रीद व बनज़र हैबत दरां निगरीस्त,

आं जौहर आब शुद पस हक सुबहाना वताला बाद रा बयाफरीद व आब रा बर बालाए ओ बदाश्त व अर्श रा बर ज़बर आब जाए दाद,

अर्थात् कुछ कुरान के भाष्यों में वर्णन है कि अल्लाहताला ने सृष्टि उत्पत्ति के प्रारम्भ में एक हरे रंग का याकूत (कीमती जवाहर पत्थर) बनाया और उसे आतंकपूर्ण दृष्टि से देखा। वह जौहर पानी हो गया फिर अल्लाहताला ने वायु बनाई और पानी को उस पर रखा। और अपने अर्श को (सिंहासन को) पानी के ऊपर स्थान दिया।

अल्लाह ऊपर ही है—इन उद्धरणों से सिद्ध हुआ कि अर्श कोई साकार वस्तु है। और अल्लाताला उस पर स्थित होने से साकार प्रतीत होता है। **वायु के ऊपर जल है। जल के ऊपर अर्श है और अर्श के ऊपर अल्लामियाँ**। निचला भाग स्वाभाविक रूप से अल्ला से रिक्त होगा।

सूरते हाका में इस स्थानीय सीमितता को स्वयं कुरान शरीफ़ के शब्दों में स्पष्ट किया गया है—

व यहमिलु अरशा रब्बुका फ़ौकहुम योमइज़िन समानियतन

और उठाएँगे तेरे रब (पालनहार) के सिंहासन को अपने ऊपर उस दिन आठ व्यक्ति।

जिसे आठ व्यक्ति उठाएँगे उसके साकार होने में क्या सन्देह रहा? यह आठ कौन हैं? तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

दर मआलिम आवुर्दा कि दरां रोज़ हमलाए अर्श हश्त बाशन्द ब सूरते बुज़ कोही, अज़ सुम्महाए एशां ता बज़ानू मसाफ़ते आं मिकदारे बुवद कि अज़ आसमाने ता ब आसमाने।

अर्थात् मआलिम (कुरान भाष्य) में लिखा है कि उस दिन तख़्त के उठाने वाले आठ होंगे जिन की सूरत पहाड़ी बकरे की होगी। उनके सुम्मों (एड़ियों) से घुटनों तक इतनी दूरी होगी जितनी एक आकाश से दूसरे आकाश तक (होती है)।

सूरते सिजदा में लिखा है—

युदब्बिरुल अमरा मिनस्समाए इललअरज़े सुम्मा यअरुजो,
फ़ीयीमिन काना मिकदारहू अलफ़ा सिनतिन मिम्मा तउद्दून,

व्यवस्था करता है हर बात की भूमि की ओर फिर चढ़ जाता है आसमान की ओर एक दिन में, (ख़ुदाई दिन) जिसका अनुमान तुम्हारी गणना में एक हज़ार वर्ष है।

इतनी दूर!—आसमान से भूमि की समस्याओं की देखभाल करने वाला फिर हज़ार वर्ष में ऊपर चढ़ने वाला शरीर रहित कैसे हो सकता है? कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि यहाँ चढ़ना अल्लाहमियाँ का नहीं, अपितु फ़रिश्तों का वर्णन है। फिर भी अल्लाहताला भूमि से इतना दूर तो है ही कि फ़रिश्तों को उसके पास जाते हज़ार वर्ष लगते हैं। वह भी तो शरीरधारी ही हुआ।

सूरते मआरिज में कहा है—

तअरजुल मलाइकतो वर्रुहोइलैहि फ़ीयोमिन काना मिकदारहू ख़मसीना अलफ़ा सिनतुन

—सूरते मआरिज आयत ४

चढ़ते हैं फ़रिश्ते और रूह उसकी ओर में उस दिन में जिसकी सीमा है पचास हज़ार वर्ष।

एक हज़ार और पचास हज़ार के अन्तर को ध्यान में न भी लावें तो अल्लाहताला की दूरी और सीमितता का वर्णन यहाँ भी स्पष्ट शब्दों में हुआ है।

अर्श का वाम दक्ष! सूराए वाकिया की प्रारम्भिक आयतों में बहिश्त में (स्वर्ग में) व दोज़ख़ (नरक) में रहने वालों का वर्णन है। बहिश्त में रहने वालों को **असहाबुलमैमना** अर्थात् ख़ुदा के दाहिनी ओर रहने वाले और दोज़ख़ में रहने वालों को **असहाबुल मशीमता** अर्थात् ख़ुदा के बाएँ तरफ़ रहने वाले कहा गया है। तफ़सीरे हुसैनी में इन शब्दों की व्याख्या करते हुए लिखा है कि—(असहाबुलमैमना) ब बहिश्तरवन्द व आँ दर यमीन अर्श अस्त, अर्थात् वे बहिश्त में जाएँगे और बहिश्त अर्श के दाएँ ओर है और (असहाबुलमशीमता) ब दोज़ख़ बरवन्द दोज़ख़ बर चपे अर्श अस्त, अर्थात् उन्हें दोज़ख़ ले जाएँगे और दोज़ख़ अर्श के बाएँ ओर है। जब अर्श के दाएँ और बाएँ दो दिशाएँ हैं और इस प्रकार वहाँ जाने वालों को दाएँ ओर के लोग व बाएँ ओर के लोग कहा जाता है तो अर्श को सीमा रहित कौन कह सकता है? **सीमित स्थान का निवासी होने से अल्लाहमियाँ भी**

सीमित ही हुए।

सूरते ऐराफ़ में आया है—

फलम्मा तजल्ला रब्बुहू लिलजबले जअलहू दक्कन व ख़र्रामूसा सअकन।

—सूरते आराफ़ आयत १४३

फिर जब दर्शन किया स्वामी उसके ने पहाड़ की ओर किया उसे टुकड़े-टुकड़े और गिर पड़ा मूसा बेहोश।

यहाँ परमात्मा की उस ज्योति का वर्णन नहीं जो है तो समस्त ब्रह्माण्ड को घेरे हुए। परन्तु मनुष्य दृष्टि-दोष के कारण उसे पहचानता नहीं, बल्कि किसी ऐसी ज्योति का वर्णन है जिससे प्रकट होने से पहाड़ टूट गया, यह ज्योति जिसका प्रभाव शारीरिक है। आध्यात्मिक नहीं शारीरिक होगा, अर्थात् बिजली की भाँति का जिसका प्रकटीकरण सीमित है और उसे देखकर मूसा बेहोश हुआ। दूसरे शब्दों में परमात्मा की ज्योति आँखों की दृष्टि का आकर्षण भी है जैसे कि **मूज़िहुलकुरान** में इसी आयत पर लिखा है—

"इससे ज्ञात हुआ कि हकताला (परमात्मा) को देखना सम्भव है।" इस ज्योति को सीमित न कहें तो क्या कहें?

सूरते नूर में फ़र्माया है—

अल्लाहो नूरुस्समावाते वल अरज़ो मस्सलू नूरिही कमिश्कातिन फ़ीहा मिस्ब्बाहुन अलमिस्बाहे फ़ज़ुजाजतिज़ुजाते। कअन्नहा कोकबुन योकदो मिनशजरतिन मुबा रिकतिन जैतूनतिन लाशर कियतुवला ग़रबियतुनयकादो ज़ैतुहा युज़ियो व लौलम तमस्सहू नारुन।

—सूरत नूर आयत ३५

अल्लाह ज्योति है आसमानों की व ज़मीन की, उस (ताक) की भाँति (धनुष सरीखा) जिसमें दीपक हो और वह दीपक शीशे में हो वह शीशा एक तारा है प्रकाशमान है एक वृक्ष के तेल से कि मुबारिक ज़ैतून का है न पूर्व का है न पश्चिम का है। निकट है तेल उसका कि प्रकाशमान हो जाए, यद्यपि उसको आग न लगे।

क्या समझे?—अनेक कुरान के भाष्य देखने पर भी समझ में नहीं आया कि उदाहरण पर उदाहरण पर इस वाक्य का आशय क्या है? हाँ यह स्पष्ट है कि अल्लाहताला का वर्णन शारीरिकता से ऊपर उठ नहीं सका। ताक (तिरवाल) क्या है? दीपक क्या? शीशा

क्या? ज़ैतून का तेल क्या? अल्लाह नूर (ज्योति) है और ताक के सदृश है और तेल बिना अग्नि के प्रकाशमान होने वाला है कुछ रहस्य-सा है जिसकी सूक्ष्मता हमारी मोटी समझ में नहीं आती।

सूरते बकर की आयतें—३३ से ३९, सूरते एराफ़ की आयतें—९ से १५, सूरते स्वाद की आयतें—७० से ७८ आदि स्थानों पर अल्लाहमियाँ का फ़रिश्तों, आदम और शैतान से वार्तालाप वर्णित है। इस वार्तालाप में आदम को शिक्षा देकर स्वर्ग में प्रविष्ट किया है। फ़रिश्तों ने पहले तो घमण्ड किया है, परन्तु फिर नतमस्तक (सिजदा) करने को तैयार हो गए हैं और शैतान आदि से अन्त तक विद्रोही बना रहा। और उसे तीन दिन तक अवसर दिया गया। वार्तालाप की प्रक्रिया एक शरीरधारी मनुष्य की-सी है जो डराता है, धमकाता है और फिर असहाय होकर घटनाओं के बहाव को उसके अपने ढंग से बहने देता है इस वार्तालाप के उद्धरण मनुष्य और शैतान के अध्याय में लिखे गए हैं वहाँ देखिए।

सूरते स्वाद में आदम को उत्पन्न करने की युक्ति बताई है—

ख़लकतो बियदय्या

बनाया मैंने दोनों हाथों के द्वारा।

यदि यहाँ हाथों का प्रयोग उदाहरण के रूप में हुआ है तो इससे आदम की उत्पत्ति की कोई विशेषता नहीं रही, क्योंकि बनाया तो औरों को भी अल्लाह ने ही है तो वे अभिवादनीय क्यों नहीं? दो हाथों की विशेषता वास्तविक हाथों पर प्रयुक्त है, जो शारीरिक होने की निशानी है।

सूरते शूरा में लिखा है—

व मा कान लिबशरिन अन युकल्लिमहुल्लाहो इल्ला वहयन ओमिन वराए हिजाबिन और युरसिलो रसूलन
—सूरते शूरा आयत ५१

और नहीं है (सम्भव) किसी मनुष्य के लिए कि अल्लाह बात करे उससे, परन्तु संकेत से या पर्दे के पीछे से या भेजे सन्देश लाने वाला।

यदि परमात्मा मनुष्य के अन्दर विद्यमान है तो उसकी बात बिना किसी माध्यम के होनी चाहिए। संकेत, परदा और फ़रिश्ता (सन्देशवाहक—जिबरील की भाँति) सर्वव्यापक परमात्मा किस लिए प्रयुक्त करेगा?

तफ़सीरे हुसैनी में इसी आयत की व्याख्या करते हुए लिखा है—

दर मूज़िह आवुरदा कि ख़ुदा बा रसूलिल्लाह सलअम सख़ुन गुफ़्त अज़ो वराए हिजाबैन यानी हज़रत रसूल पनाह दर दो हिजाब बूद। कि सखुने ख़ुदा शुनीद, हिजाबे अज़ सुर्ख व हिजाबे अज़ मरवारीद सफ़ेद व मसीरत दरमियान हर दो हिजाब हफ़्ताद साला राह बूद।

मूज़िह में लिखा है कि ख़ुदा ने रसूलिल्लाह के साथ दो परदों के पीछे से कलाम किया, अर्थात् हज़रत दो पर्दों के बीच में थे जब उन्होंने ख़ुदा का कलाम सुना, एक पर्दा सुर्ख जरी का था और एक पर्दा सफ़ेद मोतियों का था और उन दोनों की दूरी एक दूसरे से सत्तर साल के सफ़र जितनी थी।

परदा ख़ुदा और उसके अतिरिक्त के बीच दूरी की सीमा के अतिरिक्त और क्या काम दे सकता है? **रसूल ने पर्दे में ख़ुदा से बातचीत की तो ख़ुदा भी तो उसी परदे में होगा।**

सूरते निसा में कहा है—

या अय्युहहन्नासू कद जाअकुमुर्रसूलो बिलहक्के मिन रब्बिकुम फ़आमिनू। —सूरत निसा

ऐ लोगो! निःसन्देह आया तुम्हारे पास पैग़म्बर साथ सच्ची बात के तुम्हारे रब (पालनहार) के पास से अतः ईमान लाओ।

पैग़म्बर भी मनुष्य है और जब वह कोई सत्य की बात लाता है तो उसका माध्यम उपरोक्त तीन माध्यमों में से एक होगा। **या तो वह अल्लाह मियाँ का संकेत पकड़ेगा या पर्दे में होकर बात करेगा या फ़रिश्ते (सन्देशवाहक) के द्वारा वाणी सुनेगा।** दूसरे शब्दों में अल्लाह किसी मकान में सीमित रहेगा। वह अन्य संसार से पृथक् है और वह रसूल से बिना माध्यम के बात नहीं करता।

सूरते कदर में लिखा है—

तनज़्ज़लुल मलाइकतोवरुहो बिइज़्नेरब्बिहिम मिनकुल्ले अमरिन। —(सूरते कदर आयत ४)

उतरते हैं फ़रिश्ते और आत्माएँ अपने रब के आदेश के साथ प्रत्येक कार्य के लिए।

सूरते फ़जर में ज़िक्र है—

व जाआ रब्बुका वलमलको सफ़्फ़न सफ़्फ़न, व जाआ योमइज़िन बिजहन्नमा। —(सूरते फ़जर आयत २२)

और आएगा रब तेरा और फ़रिश्ते सफ़ (लाइन) बाँधकर और लाया जाएगा उस दिन दोज़ख़।

यह वर्णन कयामत (प्रलय-न्याय का दिन) का है उस दिन गुनहगार व बेगुनाह सबके सामने रब आएगा। जिससे सिद्ध हुआ कि इस प्रकटीकरण का अर्थ ऐसा प्रकटीकरण नहीं जो साधक लोगों को **हृदय-शुद्धि द्वारा प्राप्त होता है और सामान्य लोग अपने हृदय की बुराइयों के कारण उससे वंचित होते हैं**, क्योंकि पापियों का हृदय तो उस समय भी शुद्ध न होगा। उनका हृदय का दर्पण ज़ंग लगा हुआ होगा और उनके सामने रब आएगा। यह शारीरिक प्रकटीकरण है। तफ़सीरे हुसैनी में इसे और स्पष्ट कर दिया है। लिखा है—

(दोज़ख रा) बर चपे अर्श बदारन्द, अर्थात् दोज़ख़ को अर्श के बाएँ रखेंगे।

जब अर्श का दायाँ-बायाँ है तो स्पष्ट ही वह शारीरिक ही हुआ। वह दायाँ-बायाँ वास्तव में अर्श पर बैठने वाले का ही होगा। उपरोक्त उद्धरणों से अल्लाहताला की सीमित अवस्था स्वयं सिद्ध है इस पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। **ज़मीन व आसमान बनाकर अर्श पर विराजमान होना, अर्श का पानी पर रखा जाना, आठ फ़रिश्तों से उठाया जाना, हज़ार या पचास हज़ार वर्ष में स्वयं अल्लाह मियाँ का ज़मीन से आसमान तक या फ़रिश्तों का यह दूरी सफ़र करके उसकी ओर जाना, अर्श या अर्श पर बैठने वाले के दाएँ स्वर्ग और बाएँ नरक का होना, अल्लाह का आग की भाँति चमकना और पहाड़ का टुकड़े करना व मूसा को बेहोश करना, ताक चिराग ज़ैतून का तेल या उनका नूर होना, डराना, धमकाना फिर चुप हो रहना, दो हाथों से पुतला तैयार करना, संकेत परदा या फ़रिश्ते के माध्यम से बात करना, फ़रिश्तों आदि का उसकी ओर से आना-जाना, न्याय के दिन उसका विशेषरूप से प्रकट होना, सीमा व उसके सीमाबद्ध व शरीरी होने के स्पष्ट चिह्न हैं।**

तकदीर (भाग्य)

इस्लाम की एक मान्यता पर कुछ अन्य मतों को आपत्ति है, वह है भाग्य के सम्बन्ध में उसकी मान्यता। जिसके अर्थ यह हैं कि संसार में जो कुछ अच्छा-बुरा होता है अल्लाहताला के आदेश से होता है। **अल्लाहताला नित्य सत्ता है उसके अतिरिक्त सारी सृष्टि उत्पन्न की हुई है**। अर्थात् **वे अभाव से भाव में** आए हैं। उनका अस्तित्व व गुण अल्लाहताला द्वारा निर्मित है, कोई नेक हुआ तो उसका कारण यह है कि अल्लाहताला ने उसे नेक बनाया है उसका कारण यह नहीं कि वह अपनी इच्छा से या प्रयत्न से नेक बन गया प्रत्युत इसका कारण यह है कि अल्ला ने उसे भला बनाया। इसी प्रकार, इस पर आर्यसमाज की आलोचना यह है कि यदि हमारे नेक व बुरे कर्म हमारी **'इच्छा से नहीं अपितु परमात्मा की इच्छा से होते हैं और हम कर्म करने में केवल विवश हैं तो न्याय का निर्णय यह है कि हमारे बुरे-भले का उत्तरदायित्व हम पर न डाला जाए। अपितु उसके वास्तविक कर्त्ता (परमात्मा) को ही उसका उत्तरदायी मानना चाहिए और दोज़ख़ व जन्नत हमारे लिए निर्धारित न किए जावें'**। इस्लाम अपनी इस भाग्य की मान्यता के दार्शनिक परिणाम को स्वीकार करता है कि अल्लाहताला ने न केवल हमारे स्वभाव सृष्टि के आरम्भ से ही निश्चित कर दिए हैं, न केवल हमारे अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों के कर्मों को **लेखबद्ध लोहे महफ़ूज़ (परमात्मा के पास सुरक्षित भाग्य पुस्तक) में पहले से ही लिख रखा है**, अपितु हममें से कुछ को स्वर्ग (बहिश्त) के लिए व कुछ को दोज़ख़ (नरक) में रहने के लिए विशेषतया नियुक्त कर दिया है। इस सिद्धान्त के होते शुभ कर्मों का प्रयत्न, महत्वाकांक्षा, किसी महान् कार्य की लक्ष्य प्राप्ति का कोई अवसर ही नहीं रह जाता। हम इस सिद्धान्त को कुरान व उसके भाष्यकारों के अपने शब्दों में प्रस्तुत करेंगे।

सूरते फ़ातिह में आया है—

सिरातुल्लज़ीना अनअमतांअलैहिम ग़ैरिलमग़ज़ूबी अलैहिम

व लज़्ज़्वाल्लीन।

मार्ग इन लोगों का जिन पर उपहार दिया है तूने, न कि उनका जिन पर अत्याचार किया गया न उनका जो पथभ्रष्ट हैं।

इस पर तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

न राहे आं कसानेकि ख़श्म गिरफ़्ता बर एशां यानी कबल अज़ वजूद बमअरज़े गज़बे तो आमदा अन्द व बदां सबब बर कुफ़र इकदाम नमूदा।

न उन लोगों का मार्ग जिन पर तूने क्रोध किया, **अर्थात् उत्पन्न होने से पूर्व ही तेरे क्रोध के पात्र बने** और **इस कारण** काफ़िर (ग़ैर मुस्लिम) बने।

यदि इस्लाम व कुफ्र को अल्लाहताला ने पहले से कुछ व्यक्तियों के लिए विशेष निश्चित कर दिया है तो फिर अब इस्लाम धर्म के प्रचार के क्या अर्थ हुए? और काफ़िरों का क्या दोष है कि वे इस्लाम को स्वीकार नहीं करते। उपरोक्त वाक्य में **मौजूद होने से पहले और इस कारण** यह दो शब्द विशेषतया पाठकों को ध्यान देने योग्य हैं।

सूरते बकर में इसी विषय को और स्पष्ट किया है—

इन्नल्लज़ीना कफ़रु सवाउन अलैहुम अन्ज़रतहुम अमलम तन्ज़िरुहुम ला योमिनून। ख़तमल्लाहौ अलाकुलूबिहिम व अला समइहिम व अला अबसारिहिम ग़िशावतुन वलहुम अज़ाबुन अज़ीमुन। —(सूरते बकर आयत ७)

जो काफ़िर हों, बराबर है उनके लिए तू डराए या न डराए वह ईमान न लाएँगे। सील लगा दी अल्लाह ने उनके दिलों पर और कान पर और उनकी आँखों पर परदा है और उनके लिए बड़ा दण्ड है।

तफ़सीरे जलालैन में ''जो काफ़िर हुए'' के बाद लिखा है—

जैसे अबूजहल अबूलहब और जिनके भाग्य में काफ़िर होना लिखा गया।

यदि काफ़िर होना भाग्य में लिखा गया है और वह अटल है तो किसी भी नियम प्रणाली से उन काफ़िरों को अपराधी नहीं कहा जा सकता और यदि दण्ड भी उसी प्रकार पहले से लिखा गया है तो उन्हें किसी न्याय व्यवस्था के अनुसार दण्ड का भागी नहीं मानना चाहिए।

हाँ! विधाता की अवैधानिक रचना का प्रमाण भले ही हो जाए।

फिर फ़रमाया है—

फ़ी कुलुबिहिम मरज़ुन फ़ज़ादाहुमुल्लाहो मरजा।

—(सूरते बकर आयत १०)

उन लोगों के दिलों में बीमारी है फिर अल्लाह ने उनकी बीमारी और बढ़ा दी।

यह रोग वही है जिसका वर्णन हुआ कि उनके भाग्य में काफ़िर होना निश्चित हुआ था। तफ़सीरे जलालैन में लिखा है—

अल्लाह ने उनके रोग को बढ़ाया इस प्रकार कि जो आदेश अल्लाह ने उतारे उनके लिए विद्रोही हुए।

यह हुआ कुफ्र पर कुफ्र और यह सब अल्लाह के आदेश से, **मूज़िहुलकुरान में इन पीड़ाओं की** और व्याख्या की है वह यह कि—

एक पीड़ा यह थी कि जिस दीन (मत) को दिल न चाहता था स्वीकार करना पड़ा। दूसरा कष्ट अल्लाह ने दिया कि आदेश दिया धर्मयुद्ध (जिहाद) का जिनके शुभचिन्तक थे उनसे लड़ना पड़ा।

इस्लाम के समुदाय में प्रारम्भिक प्रवेश किस प्रकार हुआ इस पर इन वृद्ध महाशय की सम्मत्ति विचारणीय है—**सर्वप्रथम बलपूर्वक इस्लाम को स्वीकार करना फिर बलपूर्वक धर्मयुद्ध में सम्मिलित होना और ये दोनों अल्लाहताला के आदेश से**—हाय रे भाग्य!

सूरते बकर में लिखा है—

बल्ला हो यल्तस्सो बिरहमतिही मन्यशाओ।

—(सूरते बकर आयत ८६)

अल्लाह विशेषतया निश्चित करता है कि अपनी कृपा जिसको वह चाहता है। इस पर तफ़सीरे हुसैनी की टिप्पणी है—

इख़्तिसास मे दिहदब नूबव्वुत व वही ए ख़ुद हर किरा ख्वाहद,

विशेष करता है नूबव्वुत (ईश्वरीय दूत) व वही (ईश्वरीय सन्देश) के लिए जिसको चाहता है।

कारण? वर्तमान समय के कुछ मुसलमान विद्वानों ने स्वामी दयानन्द की शंका की सत्यता के आगे सिर झुकाया है। एक साहब

लिखते हैं—

अल्लाहो अअलमो हैसायजअला रिसालतिन

जिस व्यक्ति को ख़ुदा नबी बनाता है उसकी दशा से भली-भाँति परिचित होता है।

श्रीमान् जी! यह दशा किसकी बनाई हुई है। अल्लाह मियाँ की या विशिष्ट बनाए व्यक्ति की अपनी? दूतत्व (नबीपन) के लिए विशेषता अभाव से भाव में लाने से पूर्व होती है या पश्चात्? पूर्व होता है तो विशेषता प्राप्त व्यक्ति के स्वेच्छापूर्वक किए कार्यों पर निर्भर न हुई। अल्लाहताला की इच्छा पर निर्भर हुई तो विशेषता प्राप्ति की निर्भरता अल्लाह की इच्छा पर हुई। किसी की अपनी योग्यता पर नहीं हुई।

इससे भी बढ़कर लिखा गया है—

अल्लाहो यज्तबी मिन्रुसिलिहीमन्यशाओ।

—(आले उमरान आयत १७३)

अल्लाह पसन्द करता है अपने पैग़म्बरों में से जिसको चाहता है।

सूरते बकर में आया है—

धलकदस्तफ़ीनहु फ़िदुनियां वइन्नहूफ़िल आख़िरतिलमिनस्सालिहीन।

—(आयत १३०)

और निश्चय ही हमने पसन्द किया उसको दुनिया में व निश्चय ही वह न्याय के दिन नेकों में है।

मौलवी सनाउल्ला जी न्याय के दिन नेकों में होना ही इब्राहिम के ''चुने जाने का कारण'' नियत करते हैं और स्वामी दयानन्द के इस कथन पर साक्षी देते हैं कि ''जो धर्मात्मा है वही परमात्मा को प्यारा है।'' अब प्रश्न यह होगा कि आया पुण्य या पाप अपनी स्वेच्छानुसार किए कर्मों के आधार पर होता है या जैसे तफ़सीरे हुसैनी के लेखक का विश्वास है—**ख़ुदा पहले से ही किसी को श्रेष्ठ व किसी को पापी निश्चित कर देता है**? यदि प्रत्येक मनुष्य की योग्यता समान है तो क्या दूसरे ''धर्मात्मा'' भी ईश्वरीय दूत (पैग़म्बर) हो सकते हैं या नहीं? यदि प्रत्येक ''धर्मात्मा'' इतना

पवित्र हो सकता है जितना इब्राहिम तो उसे ईश्वरीय दूत पैग़म्बर भी हो सकना चाहिए। यदि दूसरों में इतना पवित्र होने का सामर्थ्य नहीं **तो यह अल्लाह मियाँ का अन्याय है और यदि सामर्थ्य होते हुए भी ईश्वरीय दूत बनने के गौरव से वंचित है तो यह इससे भी बढ़कर अन्याय है। अन्याय नहीं अत्याचार है।**

अल्लाह फ़रमाता है—

फ़मिनहुम मन आमनाव मिनहुममन कफ़रावलौ शाअल्ला हो माक्ततिलूव लाकिन्नल्लाहो यफ़अलोमा युरीदो।

—(सूरते बकर आयत २४८)

उनमें से कोई (इस्लाम पर) ईमान लाया और कोई काफ़िर हुआ **यदि अल्लाह चाहता तो न लड़ते, परन्तु अल्लाहै करता है जो चाहता है।**

यह लड़ाने की इच्छा भी निराली है!

तफ़सीरे जलालेन में इसी स्थान पर लिखा है—

जिस को चाहे भले कामों की सामर्थ्य दे और जिसको चाहे लज्जित करे, सामर्थ्य न दे।

आगे लिखा है—

युअति अलहिकमतो मंय्यशाओ।

—(सूरते बकर आयत २६४)

देता है कर्मकुशलता जिसे चाहता है।

फ़यन्फ़रालिमंय्याशाओ व यअज़िबा मंय्यशाओ बल्लाहो अला कुल्ले शैइन कदीर। —(बकर २८०)

फिर क्षमा करेगा जिसको चाहेगा और दण्ड देगा जिसे चाहेगा और अल्लाह सब बातों पर समर्थ है।

यह बात है तो कर्मों का विवाद किस बात का है और क्यों उत्पन्न किया है?

सूरते रअद में है—

इन्नअल्लाहा युज़िल्लो मन्यशाओ व यहदी इलेहे मनअताबा।

—(सूरते रअद आयत २६)

वास्तव में ख़ुदा गुमराह करता है जिसे चाहता है और राह दिखाता है अपनी ओर जो खिंचता है। (प्रायश्चित करता है इस्लाम पर ईमान लाता है)।

इस पर मूज़हुल कुरान में लिखा है कि—

यही स्वीकार है कि कोई बच ले और कोई राह पाए और जिसका हृदय प्रवृत हुआ, यह संकेत है कि उसको ख़ुदा ने समझाना चाहा।

आशय यह है कि पथ-भ्रष्ट होना या सन्मार्ग पर आना अपने प्रयत्न से नहीं अल्लाह मियाँ की इच्छा पर आधारित है **तो पुरस्कार व दण्ड का पात्र कौन हुआ? और इस कथन के क्या अर्थ हैं?**

लियब लूकुम अय्युकुम अहसनो अमलन।

—(सूरते हूद आयत ७)

परीक्षा ले तुम्हारी कि कौन उत्तम है तुममें से कर्म करने में।

कार्यों का निर्धारण भी स्वयं करते हो फिर परीक्षा भी लेते हो। क्या सन्देह है कि भाग्य के अनुसार कार्य नहीं होगा?

सूरते बनी इसराईल में है—

व कुल्ला इन्सानिन अलज़मनहूताइरहूफ़ी उनकिही वयखरि-जोलहू योमल कमायते किताबन यलकहू मन्शूरा।

—(बनी इसराईल आयत १३)

और प्रत्येक व्यक्ति के लिए लटका दिया है हमने उसका कर्मों का हिसाब उसकी गर्दन के बीच और निकालेंगे उसके लिए न्याय के दिन एक पुस्तक खुली हुई देखेगा।

इस आयत की व्याख्या में तफ़सीरे जलालैन में लिखा है—

मुजाहिद ने कहा कि कोई बच्चा भी ऐसा नहीं कि उसकी गर्दन में एक कागज न हो कि उसमें लिखा हुआ होता है कि यह सौभाग्यशाली है या दुर्भाग्यशाली?

यही कथन हुसैनी में उद्धृत करके आगे लिखा है—

यानी आंचे तकदीर करदा अंद अज़ रोज़े अज़ल अज़ किरदारे ओ। लाज़िम साख़्ता एम दर गर्दने ओ। यानी रा चारानेस्त अज़ां

अर्थात् जो कुछ भाग्य में लिख दिया है पहले से ही उसके कर्मों के सम्बन्ध में निश्चित किया है। उसकी गर्दन में, अर्थात् उससे बचने का कोई मार्ग नहीं है।

लीजिए हमारे कर्म तो पहले से ही निश्चित हो चुके, हमारी सद्भाग्यशीलता व दुर्भाग्यशीलता हमारे अस्तित्व में आने से पहले ही निश्चित हो चुकी। अब हमें इस भाग्य से या कर्म लेख के अनुसार ही

काम कर देना है। कर्म में हमारा अधिकार ही कहाँ रहा? और जब हमारा कोई अधिकार ही नहीं तो पुरस्कार या दण्ड कैसा?

स्वयं कुरान कहता है—

बलौशिअना लाअतैना कुल्लानफ्सिन हुदाहावलाकिन हक्कल कोले मिन्नीलअम्तअन्ना जहन्नमा मिनलजन्नते वन्नासे अजमईन।

—(सूरते सिजदा आयत १२)

अर्थात् और यदि हम चाहते तो प्रत्येक व्यक्ति को सन्मार्ग दिखाते, परन्तु सच्चा है वचन मेरा कि निश्चय ही भरूँगा दोज़ख़ को जिन्नों व इन्सानों से इकट्ठा।

तफ़सीरे हुसैनी में इसका अनुवाद इस प्रकार किया है—

व अगर मे ख्वास्तेम हर आईना दादेम दर दुनियां हर नफ़स रा आंचे राह याफ़्ती आं बसूए ईमान व अमल सालिह व लेकिन साबित शुदा अस्त ईं हुकमे मन कि हर आईना पुर साज़ेम[१] दोज़ख़ रा अज़कुफ़्फ़ार व देव व आदमी बहर एशां।

इस अनुवाद में दोज़ख़ की भरती में काफ़िरों की वृद्धि हुसैनी का अपना आविष्कार है, इस पर किसी काफ़िर को आपत्ति हो सकती है। लेकिन यह बात तो कुरान के अपने शब्दों में अंकित है कि अल्लाह सन्मार्ग दर्शन हर एक को करा सकता था, लेकिन नहीं कराता इसलिए कि उसने दोज़ख़ को बनाया है और उसे भरना है।

इस कथन के पश्चात् जहाँ-जहाँ यह वर्णन है कि अल्लाह गुनहगारों को सत्प्रेरणा नहीं करता जैसे यह कुरान केवल परहेज़गारों को मार्गदर्शन के लिए है जैसे बकर-सूरा-२ में वहाँ इस कथन के अर्थ यही करने होंगे कि गुनाहगार और परहेज़गार पहले से ही निर्धारित हैं और स्वामी दयानन्द की आपत्ति कि **परहेज़गार तो सीधे रास्ते पर हैं ही और गुनाहगारों के लिए सत्प्रेरणा नहीं तो कुरान के उतरने का लाभ किसे है?** उत्तर रहित प्रश्न है। कुरान न होता तो भी परहेज़गार परहेज़गारी के लिए निर्धारित थे और गुनहगार

१. मूल में 'साज़म' शब्द है जिसका अर्थ है मैं पूरा भरता हूँ, परन्तु आरम्भ में मे 'ख़्वास्तेम' हम चाहते हैं को देखकर अनुवादक ने आगे 'साज़ेम' बहुवचन में ही कर दिया है। —'जिज्ञासु'

गुनहगारी के लिए[१]।

यह हुआ भाग्य निर्णय कर्मों का कि हमारे लिए भले और बुरे कर्म पहले से ही निश्चित हैं और हम भाग्य लेख को पूरा करते हैं। दूसरा हमारा भाग्य लेख दुःख और सुख का है। कोई उत्पन्न होते ही दुःखी है कोई पैदा होते ही सुखी। यह भेद भाव क्यों? आर्यसमाज के सिद्धान्तों के अनुसार सुख-दुःख कर्मों का दण्ड व उपहार है। पर जो लोग इस जीवन से पूर्व किसी जीवन के पक्षधर नहीं **वह वर्तमान जीवन के प्रारम्भ होते ही विभिन्न व्यक्तियों के किए हुए दुःख-सुख की भिन्नता व स्तर की असमानता का क्या कारण बता सकते हैं**? वर्तमान जीवन के कार्यों का फल दण्ड या पुरस्कार उन्होंने स्वर्ग या नरक को निर्धारित किया है। यद्यपि उपरोक्त भाग्य की मान्यता ने दण्ड व पुरस्कार का सिद्धान्त ही निराधार बना दिया है। इस पर भी यदि थोड़ी देर के लिए इस कठिनाई पर ध्यान न भी दें तो वर्तमान असमानता का दार्शनिक निदान क्या है? न्याय दिन के सुख और दुःख का कारण वर्तमान कर्म तभी हो सकते हैं जब वर्तमान जीवन के सुख और दुःख इससे पूर्व किए गए कर्मों का फल हों। अन्यथा कर्मों और सुख-दुःख में कारण व कार्य का सम्बन्ध ही न होगा। **यदि इस संसार में दुःख-सुख बिना पूर्ववर्ती कर्मों के दिए जाते हैं तो न्याय के दिन के स्वर्ग व नरक भी बिना कर्मों के क्यों न मिलेंगे?** भाग्य के सम्बन्ध में जो चर्चा हमने ऊपर की है इससे स्पष्ट सिद्ध है कि **इस्लाम के मतानुसार कर्म केवल दिल बहलाने की वस्तु है उनमें हमारी स्वेच्छा वृत्ति को कोई स्थान नहीं**। हम अच्छा करने पर भी विवश हैं और बुरा करने पर भी। फिर स्वर्ग-नरक में जाने पर भी वैसे ही विवश हैं **अल्लाह मियाँ का कथन अनादि है कि दोज़ख़ भरा जाएगा और वह पूरा होना है**। हमारी विवेकशीलता इसी में है कि उस वचन को (सत्य सिद्ध कर दिखावें) करें। **भला इससे बढ़कर इस्लाम क्या हो सकता है कि अल्लाताला का नित्य वचन हमारे कर्मों के कारण सत्य सिद्ध हो?** फिर कर्म क्षमा भी किए जा सकते हैं। अल्लाह जिसे चाहे बिना

१. यह प्रश्न आज इस्लाम में गूञ्ज रहा है। 'सोज़ो साज़' में भी यही प्रश्न उठाया गया है। —'जिज्ञासु'

कर्मों के स्वर्ग में ले जाए। फलतः मौलवी सनाउल्ला जी लिखते हैं—

"बेचारे अवयस्क बच्चों को तो इस बात की ख़बर भी नहीं कि शिरक (इस्लाम से विरोध) कुफ़र (स्पष्ट अमुस्लिम होना) क्या होता है इसलिए वे जन्नत में जाने से न रोके जाएँगे।"

—(हक प्रकाश पृष्ठ २२७-२२८)

यही सिद्धान्त इस्लाम का है। अब तो और भी कर्मों से मुक्ति हुई। मौलाना सनाउल्ला के समविचारक लोग यदि यह इच्छा करें और इस इच्छा को कार्यान्वित करें कि **हर बच्चा जो बगैर शिरक और कुफ़र के विवेक के मर जाया करे तो अल्लाह मियाँ का यह वचन कि दोज़ख़ को भरना है, सम्भव है, पूरा हो ही न पाए**। इस्लाम के प्रचार का यह निराला ढंग विचित्र है। परन्तु नहीं, मौलाना मुसलमान हैं और उन्हें अल्लाहमियाँ का आदेश कार्यान्वित कराना है। परमात्मा उन्हें पुरस्कृत करें अस्तु।

अब हम कुरान-करीम की उन वाणियों का दिग्दर्शन करायेंगे जिनमें इस संसार की (सम्पदा) भाग्य रेखा के हाथों बिना प्रयत्न व कर्मों के या अन्य किसी उपाय के बहुत सस्ती कर दी गई है। फ़रमाया है—

अल्लाहो यरज़िको मनय्यशाओ बगैर हिसाब।

—(सूरते बकर आयत २१२)

अल्लाह दौलत देता है जिसे चाहता है बिना हिसाब के।

अल्लाहो यब्सतोरिज़का लिमन्यशाओ व यकदिरो।

—(सूरते रअद आयत २२)

अल्लाह विस्तार करता है धन-दौलत जिसके लिए चाहता है और तंग करता है।

अल्लज़ी ख़लकनी फ़हुवा यहदिनीनवल्लज़ी हुवा युतमइनी व यसकीने। —(सूरते शुअरा आयत ७८-७९)

जिसने उत्पन्न किया मुझको इसलिए वही मार्गदर्शन करता है और जो खिलाता है मुझको व पिलाता है मुझको।

जब खिलाना व पिलाना पूर्व कर्मों का फल नहीं तो उसमें

समानता क्यों नहीं? हमारा वैभव व हमारी रिक्तता अल्लाह मियाँ की देन है। फिर हमारे लेख भी सदा से निश्चित होकर हमारी गर्दन में बाँध दिये गये हैं। अत: खाने–पीने में अनियमितता भी हमारे ऊपर नहीं आती और उसका परिणाम जो रोग उत्पन्न हो जाते हैं उसके उत्तरदायी विवशता के कारण हम नहीं। अल्लाह की बिना शर्त के पुरस्कार के अर्थ तो यह थे कि बराबर सबको पुरस्कृत करता और यदि संसार में रंगा–रंगी लाने के लिए असमानता आवश्यक थी तो वह असमानता हमें पीड़ित किए बिना भी तो हो सकती थी। असमानता केवल सुखों की हो जाती। हमारे खाने–पीने में रोग उत्पन्न करने का गुण ही न रखता।

बिना पूर्व जन्म के माने हमारी बीमारी हमारे पुराने कर्मों का फल तो हो नहीं सकती और वर्तमान जीवन के कर्मों में भी हम भाग्य के आगे नतमस्तक हैं तो क्या रोग भी अल्लाह मियाँ की देन समझी जाए। यह देन उसके कृपापूर्ण गौरव के सर्वथा उपयुक्त है!

जीवन का एक उपहार है पुत्र व पुत्रियाँ इस पर अल्लाहताला ने फ़रमाया है—

यहबो लिमन्यशाओ इनासन व यहवोलिमन्यशा अज़्ज़कूर ओ यज़्ज़िहिम् ज़िकरानम व अनासन व यजअलोमन्यशाओ अकीमन[१]। —(सूरते शुरा आयत ४८)

देता है जिसे चाहता है बेटियाँ और देता है और कर देता है जिसे चाहता है। सन्तान रहित।

इस आयत पर भी प्रश्न वही है जब प्राणियों में सम्भोग का फल प्राय: सन्तान होती है और मनुष्यों का प्राय: सम्भोग कर्म निष्प्रभावी क्यों रहे? क्या सन्तान होने न होने में कोई विधान काम करता है? या केवल अनियमितता है? इसी प्रकार पुत्र या पुत्री उत्पन्न होने में कोई नियम है या केवल अनियमितता है? हमारी सन्तान हीनता का कारण या तो हमारा सृष्टि नियम के विपरीत कर्म हो सकता है या गत जीवन के कुकर्म जिसके दण्ड स्वरूप हमें नि:सन्तान किया

१. Saheeh International व फ़तह–उल–हमीद आदि में ये दो आयतें हैं। इनकी संख्या ४९ व ५० दी गई है। —'जिज्ञासु'

जाता है। **इस्लाम में अतीत काल के जीवन का सिद्धान्त नहीं और वर्तमान जीवन में मनुष्य की इच्छा का हस्तक्षेप न होने से कोई फल उत्पन्न होने का सामर्थ्य नहीं, सब कुछ अल्लाहताला पर निर्भर है। इस पर प्रश्न उठता है कि बिना किसी कर्म के ही सन्तान उत्पन्न क्यों नहीं कर देता**? मौलाना सनाउल्ला जी इस प्रश्न पर बिगड़े हैं। पूछते हैं कि क्या किसी आस्तिक (ईश्वर को मानने वाले) का यह प्रश्न हो सकता है? **हज़रत ईसा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अपने मत पर विचार कर लें। यदि वह मत आस्तिकों का है तो यह प्रश्न आस्तिकों का क्यों नहीं?** स्वामी दयानन्द को आपत्ति है इस्लाम के भाग्य के सिद्धान्त पर जिसके अनुसार अल्लाह मियाँ ही वास्तविक कर्त्ता है। हम सब उसकी कठपुतलियाँ हैं। इस दशा में सन्तान की उत्पत्ति पर माता–पिता की ओर से किसी कर्म की शर्त उचित नहीं। एक ओर भाग्य लेख और दूसरी ओर कानून परस्पर विरोधी सिद्धान्त हैं। और तो और सहीह बुखारी में अंज़ल की आज्ञा इसी आधार पर दी गई है कि सन्तान होना माता–पिता के कर्मों का फल ही नहीं केवल परमात्मा की देन है।

वास्तव में मनुष्य का न केवल दण्ड या पुरस्कार के भुगतने के हेतु अपितु उनकी अनुकूलता या प्रतिकूलता के अनुसार कर्मों के लिए विवश होना एक तर्क संगत परिणाम है। इसी सिद्धान्त का कि अल्लाहताला नित्य सत्ता है और शेष सभी सृष्टि अभाव से भाव में लाई गई है। अभाव से भाव में लाए पदार्थों की निजी अपने अस्तित्व सहित सत्ता हो ही नहीं सकती है। महाकवि ज़ौक ने कहा ही तो है—

अपनी खुशी न आए न अपनी खुशी चले।

अच्छा बुरा नहीं हो सकता, बुरा अच्छा नहीं हो सकता जैसा बनाने वाले ने बना दिया बन गए फिर पुरस्कार या दण्ड कैसा? अभाव से भाव के सम्बन्ध में हम एक नया अध्याय लिखेंगे। सम्प्रति इस विषय के १–२ उद्धरण लिखे जा रहे हैं—

कहा है—

वरब्बुका यख़्लको मायशाओव यख़्तारो।

—(सूरते कसस आयत ६८)

और तेरा पालनहार जो चाहता है, पसन्द करता है वही उत्पन्न करता है।

बदीअस्समावाते वलअरज़े व इज़ाकज़ा अमरन फ़इन्नमा यकूलोकुन फ़यकूनः।[१] —(सूरते बकर आयत ११८)

उत्पन्न करने वाला आसमानों और ज़मीनों का। जब वह चाहता है कोई काम करना तो एक ही उसका तरीका है कि कहता है हो जा और वह हो जाता है।

यह सारी सृष्टि जब अल्लाह के एक आदेश का परिणाम है। इस आदेश से पूर्व इस सृष्टि का केवल अभाव था तो इसका कारण केवल अल्लाताला का आदेश ही तो हुआ। इस दशा में इस सृष्टि की अच्छाई–बुराई अल्लाहताला के आदेश की ही अच्छाई या बुराई है। हम सुख व दुःख भोगने में विवश हैं। अच्छे–बुरे काम करने में विवश हैं और अन्त में दोज़ख़ व जन्नत में जाने को भी विवश हैं। अल्लाह को दोज़ख़ व जन्नत को भरना है। स्वेच्छा से पैग़म्बर (ईश्वरीय दूत) बनाने हैं उनमें से चुनाव करना है और इसमें नियम है उसकी शर्त रहित बेरोक–टोक इच्छा का, फिर शिक्षा क्या और उपदेश के क्या अर्थ? सब खेल ही तो है। अल्लाह समर्थवान् सही पर हमारा उत्तरदायित्व कुछ नहीं। इस एक मान्यता से, आचार, दर्शन, विधान सब निराधार होकर रह जाते हैं।

तकदीर (भाग्य) के अर्थ हैं अल्लाहताला की असीम शक्ति का प्रयोग, अर्थात् उस सामर्थ्य की जिस पर कोई प्रतिबन्ध नहीं। प्रश्न होता है कि **क्या अल्लाह पाप कर सकता है? अर्थात् कोई ऐसा कर्म जो मनुष्य करे तो पाप कहलाए। न कर सके तो सर्वशक्तिमान् न रहा।** तभी तो लिखा है—

वमकरु वमकरल्लाहो वल्लाही ख़ैरुल माकरीन[२]।

—(सूरते आले इमरान आयत ५०)

उन्होंने छल किया और छल किया अल्लाहै ने और अल्लाह सबसे बड़ा छल करने वाला है।

---

१. फ़ारुखी जी वाले हिन्दी कुरान में इस आयत की संख्या ११७ है।

२. फ़ारुकी जी के हिन्दी कुरान, फ़तह उलहमीद व Saheeh International में इस आयत की संख्या ५४ है। —'जिज्ञासु'

इस आयत का विवरण तफ़सीरे हुसैनी में इस प्रकार का वर्णन किया गया है।

बअनवाए हील ईसा रा बदस्त आवुरदन्द व दर ख़ानाए महबूस साख्तन्द........अलस्सुबाह महतर खुद कि यहूदा नाम दाश्त बदरूँ खाना फ़िरस्तादन्द......हकताला दरां शब ईसा रा बर आसमान बुरदा बुवद........यहूदा ईसा रा नदीद व हकताला शबीह ईसा बरो........फ़गन्द........व अज़ दारश दर आवेख़्ता तीर बारां नमूदन्द।

भाँति–भाँति के बहानों से ईसा को पकड़ा और घर में बन्दी बनाया.......प्रातः अपने में से बड़े वृद्ध व्यक्ति को जिसका नाम यहूदा था घर के अन्दर भेजा.........अल्लाहताला ने रात–रात में ईसा को आसमान पर उठा लिया था। ....पर यहूदा ने........ईसा को न देखा और अल्लाताला ने उसे ईसा की शक्ल दे दी। **उसे फाँसी पर लटकाकर उस पर तीर बरसाए।**

यहूदा को ईसा के रूप में प्रकट करके उसे मरवाना छल होता है, यही अर्थ निम्नलिखित आयत का है—

व यमकरुल्लाहो वल्लाहो ख़ैरुलमाकरीन।

—(सूरते इन्फ़ाल आयत ३०)

छल करता था अल्लाह और अल्लाह उच्च कोटि का छल करने वाला है।

इन्नहुम याकैदूना कैदन व कैदू कदन।

—(सूरते तारिक आयत १५–१६)

वास्तव में मकर करते हैं एक मकर और मैं मकर करता हूँ एक मकर।

यही व्यवहार फ़रिश्तों से हुआ था कि उन्हें तो नाम सिखाए नहीं। आदम को सिखा दिए। फिर उनका मुकाबिला करा दिया। आदम अधिक विद्वान् निकला। जब अल्लाह ने अधिक ज्ञान दिया तो उसमें आदम की श्रेष्ठता क्या हुई? फ़रिश्तों को सिखा देता तो वे **फ़ाज़िल** हो जाते।

व अल्लमा आदमल अस्मा आकुल्लबा सुम्मा अरज़हुम अललमलाइकते, फ़काला अम्बिऊनी बिइस्म ए हाउलाए इन

कुन्तुम सादिकीन............कालू या आदमो अन्बइईहुमबिस्माइहिम काल अलम अकुल्लकुम इन्नीअलमौ ग़ैबस्समावाते वलअरज़े।

—(सूरते बकर आयत ३१ व ३३)

और सिखाए आदम को सारे नाम। फिर किया सामने फ़रिश्तों के फिर कहा मुझे इनके नाम बताओ अगर सच्चे हो, कहा ए आदम बता दे इनके नाम। फिर जब बता दिए उनके नाम तो कहा क्या मैंने तुमसे न कहा था कि निश्चय ही मैं जानता हूँ गुप्त वस्तु को ज़मीन व आसमान की?

इसी प्रकार निम्नलिखित वचन हैं—

फ़यस्त्रवरुना मिनफहुम मस्खरल्लाहो मिनफहुम।

—(सूरते तौबा आयत ७९)

फिर ठट्ठा करते हैं और अल्लाह भी उनसे ठट्ठा करता है।

इन्नलमुनाफ़िकूना युख़ाद ऊनल्लाहा व हुवाख़ाद अहुम।

—(नसा आयत १४२)

वास्तव में मुनाफिक (इस्लाम के विरोधी) धोखा देते हैं अल्लाह को और वह धोखा देता है उनको।

अल्लाह के धोखे में आ जाने की पराकाष्ठा यह है कि उत्तर में वह भी धोखा देने लगे। जैसा कि ईसा की कहानी में ऊपर वर्णन किया गया है।

सूरते बकर में आया है—

अल्लाहो उदुव्वुनलिल काफिरीन।

—(सूरते बकर आयत ९८)

और अल्लाह है शत्रु काफ़िरों का।

लीजिए अब शत्रुता भी करने लगे, एक तो काफ़िर पैदा करना फिर शत्रुता पर तुल जाना।

सूरते निसा में लिखा है—

वल्लाहोअरकसहुमबिमा कसबू, अ तुरीदूना अन तहदू मन-अज़ल्ललाहो वमन्यज़ुल्लिल्लाहो फ़लन तजिदालहूसबीला।

—(सूरत निसा आयत ८८)

और अल्लाह ने उल्टा किया उन्हें साथ उसके जो उन्होंने किया। क्या तुम चाहते हो कि राह पर लाओ उसको जिसे पथ-भ्रष्ट किया अल्लाह ने और जिसे पथ-भ्रष्ट किया अल्लाह ने कदापि न पाएगा तू उसके लिए मार्ग।

इसकी विगत तफ़सीरे जलालैन में इस प्रकार दी गई है—

जंगे उहद (इस्लाम के प्रारम्भिक युद्धों में से एक) से एक समूदाय गैर मुस्लिमों का भाग गया था। मुसलमान परेशान थे, अर्थात् उन्हें चिन्ता हुई कि उन्हें फिर मुसलमान बनावें तब अल्लाताला ने कहा कि इन्हें पथ-भ्रष्ट हमने किया है तुम इन्हें सन्मार्ग नहीं दिखा सकते। क्या ही अच्छा होता! कि इस्लाम मानने वाले भाग्य के इस चमत्कार के मानने वाले होते और शुद्धि को अल्लामियाँ की इच्छा मानकर उसके विरुद्ध शोर न मचाते।

कुरान स्वयं कहता है—

इन्नल्लज़ीना आमनू सुम्मा कफ़रु सुम्मा आमनू सुम्मा कफ़रु सुम्मा अज़दादू कुफ़रा, लमयकु निल्लाहो लियग़फ़रि लहुम वला लियहदीहिम सबीला। —(सूरते निसा आयत १३७)

वास्तव में जो मुसलमान बने फिर काफ़िर हुए, फिर ईमान लाए, फिर काफ़िर हुए। फिर कुफ्र में वृद्धि की। अल्लाह उनको क्षमा नहीं करता और उन्हें मार्ग नहीं दिखाता।

इस आयत की व्याख्या तफ़सीरे हुसैनी में इस प्रकार है—

वास्तव में जो लोग मूसा अलैहस्सलाम पर। ईमान लाए अर्थात् यहूदी फिर काफ़िर बन गए। गोसाला (बछड़ा) पूजने के कारण। फिर ईमान लाए और तौबा की फिर काफ़िर हो गए। ईसा अलैहिस्सलाम की शान में..........फिर ज्यादा किया उन्होंने कुफ्र मुहम्मद सल्लेअल्ला व सल्लम से इंकार करके....नहीं बख्शेगा अल्ला उन्हें, हकताला ने जान लिया है कि उनकी समाप्ति कुफ्र पर है।

यह व्यर्थ प्रयत्न क्यों ?—इसका अर्थ यह है कि जिनके पूर्वज हज़रत मूसा पर ईमान लाकर फिर उनसे व उनके पश्चात् हज़रत ईसा व हज़रत मुहम्मद से भी विरोधी रहे उनके लिए न इस्लाम है और न जन्नत। हम आश्चर्यचकित हैं कि यह मुसलमान लोग इस्लाम

के प्रचार का व्यर्थ का प्रयत्न ही क्यों करते हैं?[१]

भाग्य-लेख की समस्या की विशेषता यह है कि मनुष्य मात्र तो उससे बन्ध गये हैं, यह और बात है कि कानून के साथ नहीं, अल्लाह मियाँ की अनियमित और अवैधानिक इच्छाओं के साथ मगर अल्लाह मियाँ स्वयं स्वतन्त्र हैं। किसी आचार संहिता व तर्क के बन्धन में नहीं।

१. पण्डितजी का भाव यह है कि जब अल्लाह को अपना दोज़ख़ भरना ही है और वह जिसे चाहता है मार्गभ्रष्ट करता है फिर इस्लाम के प्रचार का प्रयास ही व्यर्थ है। —'जिज्ञासु'

कुन फ़यकून इंसान व शैतान

दर्शन व धर्म के सामने एक प्रश्न सदा से चला आया है वह यह कि संसार में वर्तमान पदार्थों की उत्पत्ति कैसे हुई? **सभी धर्म जो परमात्मा की सत्ता मानने वाले हैं परमात्मा की सत्ता को नित्य मानते हैं उसका प्रारम्भ कभी नहीं हुआ**। आर्यसमाज ईश्वरेत्तर तत्त्वों की सत्ता भी अनादि अर्थात् सदा से मानता है, परन्तु इस्लाम की मान्यता इसके विपरीत है। इस्लाम में **प्राकृतिक वस्तुओं और चेतन पदार्थों को सदा रहने वाली तो माना है, परन्तु वे सदा से (अनादि) ही हैं ऐसा नहीं माना गया**।[१] इस्लाम की मान्यता है कि परमात्मा ने कहा—कुन (हो जा) और सब कुछ उत्पन्न हो गया। इसीलिए सूरते बकर में आया है—

बदीअस्समावातेज़वल अरज़े व इज़ाकज़ा अपरन फ़इन्नमा यकूलो लहू कुन फ़यकून। —(बकर आयत ११७)

(ख़ुदा) बनाने वाला आसमानों व भूमि का और जब चाहता है करना कोई काम तो एक ही तरीका है वह उसको कहे कि हो जा बस हो जाता है।

आयत में लिखा है—**'उस' को कहता है हो जा। किसको कहता है? अनुपस्थित को? यह 'हो जा' भूतकाल में ही हो लिया**। या अब भी यह आदेश दिया जाता है। वाक्य शैली से तो ज्ञात होता है कि यह आदेश सदा दिया जाता है। परन्तु क्या वर्तमान काल में कोई वस्तु इस आदेश को कारण बनाकर कार्यरूप में परिणित होती है? अब नहीं होती, तो पहले भी किस प्रकार होती होगी? आदेश अन्य कारण की उपस्थिति में दिया जाता तो कल्पना सम्भव थी। इसके विपरीत नहीं। **अकारण कार्य के लिए प्रमाण चाहिए।**

१. विज्ञान भी प्रकृति को अनादि व नित्य मानता है। जिसका अन्त नहीं वह अनादि होगा ही। जो अनादि है वही नित्य होगा। यह दर्शनशास्त्र मानता है। —'जिज्ञासु'

फ़इन्नमा यकूलोलहू कुन फ़यकून।

—(अल इमरान आयत ४७)

इन्नमा कौलना लिशैयिन इज़ाअरदनाहो अननकूलो लहुकुन फ़यकून।

—(सूरत नहल आयत ४०)

यही कथन हमारा किसी वस्तु को जब हम निश्चय करते हैं, इसके अतिरिक्त हम उससे कहें हो जा बस वह हो जाती है।

इन्नमा अमरहु इज़ा अरादा शंअन अन यकूलोलहू कुन फ़यकून।

—(सूरते यासीन आयत ८२)

इसके अतिरिक्त उसका आदेश नहीं कि जब वह कोई चीज़ चाहे, यह कहता है उसको हो जा, बस वह हो जाती है।

इसके विपरीत निम्नलिखित आयतों में कुछ और ही दशा है—

इन्ना रब्बुकुमुल्लाहो अल्लज़ी ख़लक्स्समावातेवलअरज़े फ़ी सित्तते अय्यामिन सुम्मस्तवा अलल अरशे।

—(आयत ५२; सूरते यूनस आयत ३)

वास्तव में पालनहार तुम्हारा अल्ला है जिसने बनाया आसमानों व ज़मीन को छह दिन में फिर ठहर गया सिंहासन के ऊपर।

कोई प्रश्न कर सकता है कि उस समय सूरज तो था नहीं जो दिनों का हिसाब उससे हो जाता। फिर दिनों का अनुमान कैसे हुआ।

तफ़सीरे जलालैन में इसका उत्तर दिया है—

छह दिन से आशय उतनी मात्रा है। क्योंकि उस समय सूरज न था। जो उनका हिसाब उससे होता।

कोई पूछे ६ दिन क्यों लगा दिए? लिखा है—

और इसका कारण छह दिन में बनाया यद्यपि उसकी सामर्थ्य थी कि यदि चाहता तो एक क्षण में बना डालता यह है कि धीरे-धीरे व जल्दी न करना सिखलाए।

तफ़सीरे हुसैनी में कहा है—

मकरे शैतानस्त ताजीलदर शताब।
ख़ूए रहमानस्त सबरो हिसाब॥

शैतान का स्वभाव है शाघ्रता दयालु प्रभु का स्वभाव है धीरज से व विधि से

तो यह कुन भी जल्दी न कहा जाता होगा। धैर्य व हिसाब से कहा जाता होगा। अर्थात् छह दिन में।

सूरते हम सजदा में फ़रमाया है—

कुलअइन्नकुम लतकफ़रुना बिल्लज़ी ख़लकत अरज़ा फ़ीयौमेने व......कद्दराफीहा अकवातहाफ़ी अरबअते अय्यामिन......फ़कजाहुन्ना सबआ समावातेफ़ीयोमेने। —(हा-मीम सजदा ९।१०।१२)

अर्थात् कह क्या तुम कुफ्र करते हो उससे जिसने बनाया ज़मीनों को दो दिन में......और निश्चित किए उसमें भोज्य पदार्थ ४ दिन में......फिर बनाए सात आसमान दो दिन में।

लीजिए अब तो दिनों की संख्या आठ हो गई।

तफ़सीरे जलालैन में इस कठिनाई का समाधान किया है—

ज़मीन दो दिन में रविवार व सोमवार को बनाई गई, उसमें सब वस्तुएँ मंगल व बुधवार में और आसमान जुमेरात (बृहस्पतिवार) व जुमा (शुक्रवार) की पिछली रात में काम पूरा हुआ और उसी समय बनाया गया आदम को।

भोजन सामग्री जो चार दिनों में उत्पन्न की थी उनके दो दिन भूमि की उत्पत्ति में सम्मिलित कर लिए इस प्रकार कुल संख्या फिर छह की छह रही।

यह हुई अचेतन सृष्टि की उत्पत्ति, अब मनुष्यों की भी सुन लीजिए। यह तो तफ़सीरे जलालैन ने ही बता दिया कि जुमा (शुक्रवार) की पिछली रात आदम का पुतला घड़ा गया था। घड़ा किससे गया? कैसे गया?

ख़लकंतहु मिनतीन (स्वाद)

उत्पन्न किया उसको मिट्टी से।

ख़लकतो बियदय्या (स्वाद)

बनाया मैंने दोनों हाथों से।

फ़इज़ा सवेतुहा बनफ़रवता फ़ीहे मिरुही।

—(सूरते हजर आयत २७)

अल्लाह के दो हाथ हैं—जब मैं ठीक कर लूँ (पैदा) उसको फूँक दूँ उसमें रुह (आत्मा) अपनी। इन प्रमाणों से सिद्ध है कि

इन्सान का उपादान कारण मिट्टी है। कुछ स्थानों पर गन्दी मिट्टी कहा है, उसे अल्लाहताला ने दोनों हाथों से ठीक किया है और उसमें अपनी रुह (आत्मा) फूँकी है। क्या वास्तव में मानव शरीर की रचना मिट्टी से ही हुई है? **क्या उसको बनाने वाला दो हाथों वाला है?** यह प्रश्न हमारे इस अध्याय के विषय से बाहर है। यहाँ केवल यह देखना **अद्दिष्ट** है कि **मानव की अपनी स्वयं सत्ता कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं। मिट्टी वह है जो कुन के कहते ही ज़मीन के साथ पैदा हुई है चाहे वह कुन एक क्षण में कहा गया हो चाहे दो दिन में या छह दिन में। रुह (आत्मा) अल्लाह मियाँ की अपनी है**। इसके अर्थ चाहे यह करो कि अल्लाह ने अपने शरीर में से मानव के शरीर में जीवन का सांस फूँका जैसा इञ्जील में वर्णन किया गया है और चाहे स्वामी दयानन्द की शंका की सार्थकता के आगे नतमस्तक हो जाओ और रुही (मेरी आत्मा) का अर्थ करो **'अल्लाह मियाँ की प्यारी रुह'** रुह (आत्मा) या तो अल्ला मियाँ के अन्दर से निकली है या अभाव से भाव की गई है। **इस प्रकार की मिट्टी और आत्मा कर्म में स्वतन्त्र नहीं हो सकती।**[१] **जो गुण व स्वभाव स्वतन्त्र कर्त्ता** ने इसमें केन्द्रित कर दिये। उसके अनुसार वह कर्म करती जाएँगी फिर अल्लाह मियाँ की यह शिकायत कि—

इन्नल इन्सानो लिजुलूमिन कुफ्फारुन।

—(सूरते इब्राहिम आयत २७)

वास्तव में मनुष्य अत्याचारी व काफ़िर है, असंगत है, क्योंकि यह अत्याचार वृत्ति व कुफ्र की प्रकृति को उसके स्वभाव में अल्लाह द्वारा प्रदान किया गया है। आश्चर्य तो यह है कि कुछ मनुष्य इस ईश्वरीय देन के विरुद्ध न्याय व ईमान का प्रदर्शन करते हैं, परन्तु वह भी तो उनका चमत्कार नहीं, बनाने वाले ने ऐसा बना दिया।

उत्पत्ति के इस सिद्धान्त पर शंका यह होती है कि जब नित्य सत्ता ईश्वरीय सत्ता के अतिरिक्त और कोई अन्य नहीं और **अल्लाह पूर्ण है, पवित्र है, नेक है तो उसकी रचना में दोष, पाप व कमज़ोरियाँ प्रवेश कैसे पा गईं?**

१. अधिक जानने के इच्छुक हमारी पुस्तक पं० रामचन्द्र देहलवी और उनका वैदिक दर्शन अवश्य पढ़ें। —'जिज्ञासु'

पाप का आदि स्रोत कौन है? कुरान में इस प्रश्न को यों समाधान किया गया है—

वइज़ा कुलना लिलमलाइकते स्जिदू अलआदमा फ़सजदू इल्ला इबलीस, अबा व स्तकबराब काना मिनलकाफ़िरीन।

—(सूरते बकर आयत ३४)

जब कहा हमने फ़रिश्तों को, नतमस्तक हो आदम के प्रति तो उन्होंने आदम के प्रति सिर झुकाया, परन्तु शैतान ने नहीं झुकाया। उसने घमण्ड किया और वास्तव में वह काफ़िरों में से था।

प्रश्न यह है कि जब शैतान भी अल्लाह ताला की ही रचना है और अल्लाह उसे जैसा चाहता बना सकता था तो उसे काफ़िर क्यों बनाया?

लीजिए गुनाह (पाप) की कहानी आगे चलती है—

वकुलना याादमो उसकुन अन्ता व जोजकल जन्नता व कुला मिनहारगवन हैसो शियतुमा बलातकरिवा हाजिहिश्शजरता फ़तकूना मिनज़्ज़वालिमीन। फअजल्लाहुमश्शैतानो अन्हा फ़अख़रजहुमा मिम्मा काना फ़ीहे वकुलन हबितू बअज़्कुमलिबाज़े उदव्वुन। वलकुम फ़िलअरज़े मुस्तकर्रुन व मताउन इललहीन।

—(सूरते बकर आयत ३५-३६)

और कहा हमने ए आदम रहो तुम और तुम्हारी पत्नी स्वर्ग में और खाओ इच्छानुसार जैसा चाहो और न निकट जाओ उस वृक्ष के। पापी हो जाओगे, परन्तु पथ-भ्रष्ट किया उनको शैतान ने और निकाल दिया उनमें से जिसमें वह थे और कहा हमने उतरो तुममें से कुछ लोग एक दूसरे के शत्रु हैं और तुम्हारे लिए भूमि पर ही ठिकाना है और कुछ समय लाभ है।

यहाँ से पाप का प्रारम्भ होता है। अल्लाह मियाँ ने तो आदम और उसकी पत्नी को स्वर्ग में डाल ही दिया था। **कोई पूछे किन कर्मों के पुरस्कार स्वरूप?** कहा जाएगा कर्मों के अभाव में। शैतान ने उनको बहकाया वह किसकी मेहरबानी से? बहिश्त कहाँ था? जहाँ से उतरने का आदेश हुआ। **फिर परस्पर शत्रु भी बना दिया यह वह गुण है जिसको ऊपर ज़ुल्म और कुफ्र के नाम से वर्णन किया गया है। शैतान की उत्पत्ति प्रारम्भिक पाप है**

किसका ? सूरते स्वाद में उपरोक्त वार्तालाप और भी विस्तार से वर्णन किया है—

काला या इब्लीसा मामनअका अनतसजुदाइम्मा ख़लकतो बियदय्या, अस्तकबरता अमकुन्ता मिनलआलीना काला अना ख़ैरुन मिनहो, ख़लकतनी मिन नारिन व ख़लकतहू मिनतीने काला फ़अख़रजमिन्हा फ़इन्नका रजीमुन। व इन्ना अलैका लअनती इला योमिद्दीना, काला रब्बा फ़न्ज़ुरनी इलायोमि युबअसूना, काला फ़इन्नका मिनलमुन्ज़रीन इलायोमिल वक्तिल मालूम। काला फ़बिइज़्ज़तिका लउगवन्नहुम अजमईन।

—(सूरत स्वाद आयत ७५-७६, ७७, ७८, ७९, ८० तथा ८१ तक)

(अल्लाह ने कहा) ऐ शैतान क्या बात मना करती है तुझको उसके सामने नतमस्तक होने से जिसे स्वयं मैंने अपने दोनों हाथों से उत्पन्न किया है। तूने घमण्ड किया या था तू उच्च श्रेणी वालों में से था। (शैतान बोला) कहा मैं श्रेष्ठ हूँ इससे कि बनाया तूने मुझको अग्नि से और बनाया इसको मिट्टी से। (ख़ुदा बोले) अच्छा तू इन आसमानों में से निकल जा। वास्तव में तू सड़ा-गन्दा है। वास्तव में तुझ पर लानत फटकार है मेरी न्याय के दिन (कयामत) तक। कहा ए रब ढील दे मुझे उस दिन तक कि उठाए जाएँगे मुर्दे। कहा कि अच्छा तू ढील दिए गयों में से है दिन निश्चित तक। (शैतान बोला) अच्छा सोगन्ध है तेरी प्रतिष्ठा की पथ-भ्रष्ट करूँगा इनको सम्मिलित (रूप से)।

शैतान को तो उत्पन्न किया ही था और वह भी अग्नि से अब जब वह अपनी स्वाभाविक प्रकृति के चमत्कार को दिखाने लगा तो अल्ला मियाँ रुष्ट हुए। क्या जानते न थे कि है ही ऐसा ? प्रश्न हो सकता है कि जब यह अल्लाह के अपने अधिकार क्षेत्र में था कि सबको अधीनस्य उत्पन्न करता तो शैतान को क्यों विद्रोही स्वभाव का उत्पन्न कर दिया या भूलचूक से ऐसा हो गया। यदि भूल नहीं हुई, अपितु इच्छा से उसे घमण्डी बनाया गया तो रुष्ट होने और डराने-धमकाने से क्या तात्पर्य है ? बेचारे को फटकारा तक गया है। फिर भी रहमानियत (कृपालुता) का गौरव है कि उसने मौहलत (अवसर) माँगा तो दे दिया गया। वह किस बात की ? **प्रलयकाल तक लोगों**

को, मनुष्यों को पथ-भ्रष्ट करने की। भला मनुष्य पर यह कृपा क्यों की ? घमण्ड करे शैतान उसका दण्ड मिले मनुष्यों को ? विचित्र कृपालुता है!

परन्तु नहीं लगे हाथों मनुष्य को शिक्षा भी दे दी है—

व ला तत्तबिऊ खुतवातिश्शैताने इन्नहूलकुम उदुव्वुन मुबीन, इन्नमा यामुरकुम बिस्सूएवल फ़ुहशाए।

—(सूरते बकर आयत १६८-१६९)

और मत पीछे चलो शैतान के। सचमुच वह तुम्हारे लिए बड़ा शत्रु है वह और कुछ नहीं (करेगा) तुम्हें बुराई व लज्जाजनक कार्यों का ही आदेश देगा।

या अल्ला! इसे पैदा ही नहीं करना था, किया था तो हमारा शत्रु न बनाना था। उसने आज्ञा का उल्लंघन किया उस पर लानत (फटकार) हुई। था बुद्धिमान् कि मुहलत (अवसर) माँग ली। कृपालुता का सहारा ले लिया कि उसे अवसर दिया जाए इसमें हमें शंका आपत्ति नहीं। **परन्तु हमें पथ-भ्रष्ट करने की सामर्थ्य क्यों प्रदान की गई** ? उसकी शैतानियत का कोई और उपयोग हो जाता।

इसी सूरते स्वाद का कथानक सूरते ऐराफ के प्रारम्भ में आया है अवसर प्राप्त होने पर शैतान ने अपनी इस महत्वाकाँक्षा की महानता का कि वह प्रलय के दिन तक लोगों को पथ-भ्रष्ट करेगा कारण बताया है—

काला फ़बिमा अग़वतीनीलअकदन लहुमसिरातन मुस्तकीम, सुम्मालआतैनहुम मिनबैने ऐदैहिम व मिन ख़लफ़हिम व अनईमा-निहिम व अनशुमाइलहिम व ला तजिदो अकसरहुन शाकिरौन। काला अख़रज़ो मिन्हा मजओम्मान मदहूरा। लमनतबइका मिन्हुम लअमलअन्ना जहन्नमा मिन्कुम अजमईन।

—(सूरते आराफ १६, १७, १८)

(शैतान) ने कहा (ए ख़ुदा) चूँकि तूने पथभ्रष्ट किया मुझे अलबत्ता (निश्चय ही) मैं उनके लिए तेरे सीधे रास्ते पर बैठूँगा। फिर उनके आगे से, पीछे से, दाएँ से, बाएँ से और तू उन्हें प्राय: धन्यवादी नहीं पाएगा, (ख़ुदा ने) कहा—निकल यहाँ से लज्जित व फटकारे हुए। जो उन (लोगों) में से तेरे पीछे लगेंगे वास्तव में भरूँगा दोज़ख़

को तुम सबसे।

शैतान कहता ही तो है कि अल्लाह ने मुझे पथ–भ्रष्ट किया है। जब उसकी सत्ता अभाव से हुई है और जब वह अल्लाह के आदेश का सब प्रकार से पालक है तो उसमें शैतानियत का सामर्थ्य उत्पन्न ही किसने की है? फिर अल्लाताला हैं कि **बजाए इसके कि कुन कहकर उसे शैतान से भला मानस बना दें विपरीत इसके शैतान को प्रलयकाल तक खुली पथ–भ्रष्टता का अवसर** देते हैं और इस पथ–भ्रष्टता का लक्ष्य किसे बनाते हैं? बेचारे मनुष्यों को वह भी तो जैसे अल्लाह ने बना दिए बन गए। किसी के भाग्य में पथ–भ्रष्टता लिखी गई किसी के भाग्य में शैतान से बचा रहना लिखा गया फिर यह झाड़–झपट (लानत–फटकार) क्यों? कि दोज़ख़ को भर दूँगा। पहले ही आज्ञा हो गई कि दोज़ख़ भरा जाना है। इसलिए सबको सन्मार्ग नहीं दिखाया जाएगा। इस शाश्वत इच्छा के मार्ग में बाधा कौन उत्पन्न कर सकता है? अब कहिए भलाई बुराई की कल्पना भ्रम है या कुछ और?

इस पर अल्ला मियाँ फरमाते हैं—

या मूसा इन्नहू अनल्लाहुल अजोजुलहकीम।

—(सुरते नहल आयत ९)

ए मूसा सचमुच मैं ख़ुदा हूँ बड़ी कार्य कुशलता वाला।

शैतान के सम्बन्ध में तो न प्रौढ़ता का ही प्रमाण दिया और न कार्य कुशलता का। हाँ यह और बात है कि अपने आपको कुछ कह लें।

ऐसे ही कुरान के सम्बन्ध में फ़रमाया है—

ला रैबा फ़ीहे हुदन लिल मुत्तकीन। —(बकर आयत १)

इसमें सन्देह नहीं मार्गदर्शन करती है परहेज़गारों को।

परहेज़गार पहले ही निर्मित है, मार्गदर्शन किसका हुआ? लेखक के कथन का तात्पर्य क्या हुआ? दूसरे भी ऐसा ही कहें तब कोई अर्थ हुआ।

सूरते हजर में शैतान ने फिर यह कथन दुहराया—

काला रब्बे बिमाअग़वैतनी लउजय्यनना लहूमफ़िल अरज़े वलउग़वयन्नुमहुम अजमईन। —(सूरते हजर आयत ३९)

कहा ए रब (ख़ुदा) चूँकि पथ–भ्रष्ट किया है तूने मुझे निश्चय ही सजाऊँगा (उनको गुनाहों से) मैं ज़मीन पर उन सबको पथ–भ्रष्ट करूँगा।

यह सजाना (ज़ीनत देना) क्या है? दोज़ख़ के लिए संवारना? अल्लाह मियाँ की शाश्वत वाणी की ही तो आज्ञा पालना हो रही है।

लीजिए अल्लाह मियाँ स्वयं फ़रमाते हैं—

अलम तरअन्ना अरसलन्नश्शैताना अललकाफ़िरीना तवज़्ज़ुहुम अज़्ज़न।

—(सूरते मरियम आयत ८४)

क्या नहीं देखा तूने हमने भेजा शैतानों को काफ़िरों के ऊपर बहकाते हैं उनको उभार (उत्तेजित) कर।[१]

हम ऊपर निवेदन कर चुके हैं कि नित्य सत्ता अनादि केवल अल्लाताला की ही होने से वास्तविक कर्त्ता उसी को मानना पड़ेगा। कोई बुरा है तो इसलिए नहीं कि उसने जानबूझकर किसी कानून का उल्लंघन किया है, अपितु इसलिए कि उसे ऐसा बनाया गया है। और यहाँ तो आदम को पढ़ाया भी अल्ला ने स्वयं ही है। फ़रिश्तों को नतमस्तक भी स्वयं ही बना दिया है और फिर पथ–भ्रष्ट भी स्वयं ही करा दिया है। शैतान की यह स्वीकारोक्ति भी सत्यता पर आधारित है कि मैं अल्लाहताला द्वारा ही पथ–भ्रष्ट किया हूँ। या तो उसे बनाने में अल्लाह मियाँ से भूल हो गई और समय पर उस भूल को सुधारा नहीं गया या फिर अल्लाह मियाँ की प्रारम्भ से इच्छा ही यही रही थी कि प्रायः मनुष्य अकृतज्ञ हों और उनसे दोज़ख़ भर जाए। सर्वशक्तिमान् ख़ुदा के सामने ननुनच करने की तो सामर्थ्य ही किसे है? बिना शैतान से पथ–भ्रष्ट हुए भी दोज़ख़ में जाने का आदेश हो तो आज्ञा पालन करना ही होगा। यह भी तो अल्लाह की ही चाहना है कि हम दोज़ख़ में जाएँ। परन्तु अपने कर्मों के फलस्वरूप। हम उन कर्मों को करने पर विवश हैं। कर लेंगे, परन्तु एक बात कहेंगे और **अवश्य कहेंगे कि बलात् कराए गए कर्मों का फल दण्ड व पुरस्कार नहीं होता। दोज़ख़ को दण्ड और स्वर्ग को पुरस्कार कहना भूल है, हाँ अल्लाह की शक्ति और इच्छा के आगे नतमस्तक हैं।**

---

१. Saheeh International, Yusuf Ali, वाले अंग्रेज़ी कुरान व फ़ारुकी जी के हिन्दी कुरान में आयत की संख्या ८३ दी है। —'जिज्ञासु'

एकाएक सृष्टि क्यों बना दी?—दर्शन शास्त्र में आगे एक और प्रश्न वह यह कि उत्पन्न करना जब अल्लाह मियाँ के स्वभाव में नहीं **तो एकाएक उससे यह सृष्टि उत्पन्न कैसे हो गई। अल्लाह का अपना इसमें कोई लाभ नहीं और हो भी तो एक असीमित समय तक मात्र एकत्व** में रहने के पश्चात् सृष्टि के इतने पदार्थों की बहुलता की सामर्थ्य उसमें कहाँ से आ गई? यदि सृष्टि बनाने का ज्ञान अल्लाह मियाँ की बुद्धि में पहले से था तो उसका प्रयोग इससे पूर्व कभी क्यों नहीं हुआ? और इस सृष्टि रचना के पश्चात् फिर भी इसके प्रयोग की क्या कभी सम्भावना है?

कहा है—

अल्लाहो यब्दुअल ख़लका सुम्मायुईदुहूसुम्मा इलैहे तुरजऊन।

—(सूरते रूम आयत १०)

अल्लाह पहली बार उत्पत्ति करता है, दोबारा करेगा, फिर लौटाए जाओगे।

कुरान के भाष्यकारों की सम्मति में प्रथम सृष्टि उत्पत्ति हो चुकी। दूसरी सृष्टि प्रलय (न्याय का दिन—कयामत) के दिन होगी और उसके पश्चात् उत्पत्ति का क्रम समाप्त हो जाएगा। तो इसके पश्चात् परमात्मा की सृष्टि उत्पत्ति की शक्ति किस काम आएगी। **अल्लाह मियाँ की शक्ति में यह ह्रास व निरस्तीकरण क्या दोष नहीं कि उसकी अनादि व अनन्त सत्ता में केवल दो बार ही उसकी यह शक्ति काम में आई। जब गुण** समाप्त हो गया तो गुणी भी समाप्त हो जाएगा।

मनोविज्ञान विशेषज्ञ जानते हैं कि चेतन सत्ताओं का **ज्ञान अभ्यास व अनुभव के अनुसार होता है**। अल्लाह मियाँ का वर्तमान सृष्टि से पूर्व का अनुभव तो बेकारी का है। फिर अनायास यह नूतन अभ्यास उसे कैसे प्राप्त हुआ कि सारे पदार्थ उसने उत्पन्न कर दिए?

जैसे कि लिखा है—

वलइन अरसलनारीहन फ़रउहूमुसफ़र्रन।

—(सूरते रूम आयत ५०)

यदि हम एक वायु भेज दें तो देखें खेती पीली हुई। क्या अल्लाह मियाँ ने इससे पहले कहीं पीली खेतियाँ बनाकर देखी थीं कि उनका

वर्णन लोहे महफ़ूज़ (परमात्मा के ज्ञान) की शाश्वत पुस्तक पर नित्य वाणी के रूप में लिखकर रख दिया। यदि यही सृष्टि पहली व अन्तिम है तो इससे पहले पीलापन विद्यमान नहीं था। इसका ज्ञान अल्लाह मियाँ को कैसे हुआ? कहा जा सकता है कि वर्तमान सृष्टि के पदार्थ ज्ञान का परिणाम हैं। यहाँ समस्या यह है कि **अल्लाह मियाँ के ज्ञान और कर्म में से पहले कौन था और पीछे कौन? मनोविज्ञान ज्ञान तत्त्व के अनुसार यह दोनों ही एक दूसरे के पूर्ववर्ती भी हैं और पश्चात्वर्ती भी। अल्लाह मियाँ का कौन-सा गुण पहले आता है? ज्ञान का गुण कि कर्म का गुण? दर्शन शास्त्र का यह गम्भीर प्रश्न है जिसका समाधान केवल नित्यकर्म के विश्वासुओं के पास ही है**। मध्य में कार्य प्रारम्भ मानने से प्रश्न होता है इससे पूर्व तो यह कार्य हुआ नहीं फिर यह मस्तिष्क में (अल्लाह मियाँ के) कैसे आया और यदि उसके मस्तिष्क में था तो कर्म रूप में परिवर्तित होने में उसके क्या कारण बाधक था?[१]

---

१. ऋषि दयानन्द की यह वेदोक्त दार्शनिक देन अत्यन्त युक्तियुक्त, मौलिक व बेजोड़ है कि ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव नित्य हैं। ज्ञान व कर्म दोनों ही अनादि होने से पहले व पीछे होने का यहाँ प्रश्न ही नहीं उठता। वेद का मन्त्र सन्ध्या में हम नित्य प्रति पाठ करते हैं, दोहराते हैं—''**यथा पूर्वमकल्पयत्**'' ईश्वर अनादि काल से सृष्टि और प्रलय का चक्र चला रहा है। यथापूर्व यह सृष्टि रची गई है। —'जिज्ञासु'

कुरान शरीफ़ के पैग़म्बर
(ईश्वरीय दूत)

किसी मुसलमान से अपना धार्मिक सिद्धान्त दो शब्दों में वर्णन करने की प्रार्थना करो। वह तत्काल कह उठेगा कि तौहीद (परमात्मा का एकत्व) व रिसालत (ईश्वरीय दूत पर विश्वास)। तौहीद के अर्थ हैं परमात्मा को एक मानना और रिसालत के सिद्धान्त का तात्पर्य है, हज़रत मुहम्मद को ईश्वरीय दूत स्वीकार करना। यही नहीं हज़रत मुहम्मद से पूर्व अन्य पैग़म्बरों का आना भी इस्लाम में स्वीकार किया गया है। हम इस्लाम की तौहीद और पैग़म्बरों का एक के बाद एक के भेजे जाने के प्रश्न पर आगामी किसी अध्याय में विचार करेंगे। अभी तो हमें यह देखना है कि जिन महान् व्यक्तियों को अल्लाह की ओर से भेजा हुआ स्वीकार किया गया है उनकी आचार की श्रेष्ठता किस स्तर की है। जिस व्यक्ति से किसी धर्म का प्रवर्तन प्रारम्भ होता है उसकी शिक्षा उसके वचनों में भी वर्णन की जाती है। **परन्तु वचनों से बढ़कर स्वयं उसका अपना व्यवहार उसके अनुयायियों के लिए ज्ञान प्रकाश का काम देता है**। इस प्रकार धार्मिक गुरुओं की जीवन-परीक्षा एक आवश्यक कर्त्तव्य है जिसकी समालोचनात्मक आवश्यकता से बचना हानिकारक है।

कुरान शरीफ़ के एक महान् गौरवशाली पैग़म्बर हैं हज़रत मूसा, उनके सम्बन्ध में कुरान में फ़रमाया है—

फ़वकज़हूमूसा फ़कुजा अलैहे काला हाज़ामिन अमलि श्शैताने, इन्नहू अदुव्वुन मुजिल्लुन मुबीन, काला रब्बे! इन्नी ज़लमतोनफ़सी, फ़ग्फ़िरली, फ़गफ़रालहू, इन्नहू हुवलगफ़ूरुर्रहीम।

—(सूरते कसस आयत १४, १५)

फिर मूसा ने उसे मुक्का मारा, उसे मार डाला। उस मूसा ने कहा यह (मेरा कार्य) शैतान के कार्यों में से है। वास्तव में वह प्रकट पथ-भ्रष्ट करने वाला शत्रु है, कहा, ए रब! मैंने अपने ऊपर अत्याचार किया है, अतः मुझे क्षमा कर दे, बस अल्लाह ने उसे क्षमा किया।

सचमुच वह क्षमा करने वाला कृपालु है।

हज़रत लूत को निम्न आयत में पैग़म्बर स्वीकार किया है—

व इन्नालूतन लमिनल मुरसिलीन इज़्ा नज्जैतनाहू व अहलहूअज-मईन इल्ला अजूज़्न फ़िलग़ाबिरीन। सुम्मा क्जैनल आख़िरीन।

—(सूरत साफात आयत १३१-१३४)

और वास्तव में लूत पैग़म्बरों में से है। जब हमने उसे नजात (मुक्ति) दी और उसके सभी घर वालों को, परन्तु रहने वालों में से एक बुढ़िया थी। फिर नष्ट किया हमने औरों को।

इन्हीं हज़रते लूत के सम्बन्ध में वर्णन है—

फिर हज़रत लूत की दोनों लड़कियाँ अपने पिता से गर्भवती हुईं। —(बाइबिल पैदाइश अध्याय १९, आयत ३६)

यदि कुरान को बाइबिल के उपरोक्त कथन से मतभेद होता तो उसमें इस मतभेद का वर्णन किया जाता। जैसे हज़रत ईसा की शिक्षा तसलीस (त्रैतवाद) के बारे में स्थान-स्थान पर बलपूर्वक कहा गया है कि यह शिक्षा उनकी नहीं है।

हज़रत यूसुफ़ की कथा सूरते यूसुफ़ के एक बड़े भाग का विषय है। उसका पूर्ण वर्णन करने की यहाँ **शक्यता** नहीं। हज़रत की महानता यह है कि वे स्वप्नों की व्याख्या अच्छी करते हैं। आपके अज़ीज़े मिश्र होने की आधारशिला ही आपका एक स्वप्न है जिससे आपने सूरज-चाँद और सितारों को नतमस्तक (सिजदा) करते देखा था। अज़ीज़े मिश्र के बन्दी होते भी आपने अज़ीज़ के स्वप्न का अर्थ बताया था। जिसके पुरस्कार स्वरूप आप वहाँ उच्च पदवी पर पहुँचे। आपके भाई जिन्होंने बचपन में आपको कुएँ में डाल दिया था आपके पास आए आपने उन्हें वापिस भेज दिया कि जब तक दूसरे भाई को साथ न लाओ तुम्हारे साथ सम्बन्ध नहीं हो सकता। उस भाई को आप अपने पास रखना चाहते थे जिसके लिए आपने यह तदबीर निकाली कि—

फलम्मा जहज्जहुम बिजिहाजिम जअलस्सिकायत फीरहले अरवीहे, सुम्मा अज्जना मुअज्जिनुन अय्यतुहल इरानकुमलसारकूनः।

—(सूरते यूसुफ़ रुकुअ ९)

फिर जब तैयार कर दिया उनको, असबाव (सामान) उनका

रख दिया पीने का बासन बोझ में अपने भाई के। फिर पुकारा पुकारने वाला। अय सहयात्रियों (काफ़िले वालो) तुम निश्चित चोर हो।

—(जलालैन)

कालू जज़ाउहू इनकुन्तुम काज़िवीन कालू जज़ाउहू मन वुजिदा फ़ीरहलिहो फ़हुवा जज़ाउहू। कज़ालिका नजज़ि उज़्ज़लिमीन।

—(यूसुफ़)

बोले फिर क्या सज़ा है उसकी यदि तुम झूठे हो, कहने लगे उसकी सज़ा यह है कि जिसके बोझ में पाया जाए वही जाए उसके बदले में। हम यही दण्ड देते हैं अपराधियों को। —(जलालैन)

इस पर तलाशी ली गई और बर्तन भाई के सामान में पाया गया जिसके कारण उसे वहाँ रहना पड़ा। परमात्मा जाने इन कथाओं के वर्णन से ईश्वरीय वाणी में श्रेष्ठता क्या आती है? **हज़रत ख़िज़्र** ने एक लड़के को मार डाला। हज़रत मूसा ने पूछा—

अकतलता नफ़्सन जकिय्यतन बिग़ैरे नफ़सिन।

—(सूरते यूसुफ़)

क्या तूने मार डाला एक पवित्र जान बिना बदले जान के।

हज़रत ख़िज़्र ने उत्तर में कहा—

वअम्मल ग़ुलामी फ़कान अबवाहो मोमिनीन फ़ख़शना अन युरहिक़ुहुमा तुग़ियानन व कुफ़्रन।

और वह लड़का था उसके माँ–बाप मोमिन (आस्तिक) थे और हम डरे कि यह कहीं उन पर अधिकार बना लें विद्रोह व कुफ्र में।

हज़रत ख़िज़्र ने केवल अनुमान लगाया है कि वह कहीं बड़ा होकर अपने माता–पिता को काफ़िर न कर दे और उसे वध कर दिया **हैं यह भी पैग़म्बर हैं**!

यह सब बड़े लोग पैग़म्बर अवश्य हैं, परन्तु उन पर समाप्ति करने वाले अन्तिम नबी हज़रत मुहम्मद ही हैं उनमें पैग़म्बरी की सभी श्रेष्ठताएँ उच्च स्तर की प्रदान की गई हैं। आप मुसलमानों की दृष्टि में सर्वगुण सम्पन्न स्वीकार किए जाते हैं। हज़रत की कुछ पारिवारिक घटनाओं का वर्णन भी कुरान शरीफ़ में आया है जिससे हज़रत के व्यक्तिगत गुणों पर प्रकाश पड़ता है। नीचे जिन आयतों के

उद्धरण दिए जाएँगे उनका अनुवाद हम अपने शब्दों में नहीं, अपितु **कुरान के प्रमाणिक भाष्यकार जलालैन** के शब्दों में करेंगे। यह अनुवाद शाब्दिक नहीं भावार्थ है। घटनाओं की व्याख्या के लिए जलालैन के टिप्पणी स्थल पर कुछ इबारत एक साथ व कुछ फुटकर[१] दी गई है। हमने व्याख्या को अनुवाद से पृथक् रखने के लिए कुछ कोष्ठक इबारतें और उसी में से बढ़ा दी हैं। वाक्यों में कोई परिवर्तन नहीं किया है। एक स्थान पर तफ़सीरे जलालैन की वाक्य रचना के अतिरिक्त **तफ़सीरे हुसैनी** में कुछ अधिक वर्णन पाया जाता है, उसे भी हमने ज्यूँ का त्यूँ प्रतिलिपि कर दिया है।

सूरते अहजाज़ में अल्लाह ताला फ़रमाता है—

व इज़्ज़ा तक़ूलोलिल्लजी अनअमल्लाहो अलैहे व अनअमत अलैहे अमसिकअ अलैका ज़ोजका वत्तकल्लाहा व तुख़्फी फ़ीनपिसकाम अन्नाहो मब्दिये व यरदशीयन्नास। बल्लाहो अहक़्क़ोअन तख़्शाहो। फ़लम्मा कज़ाज़दुन मिन्हा ब तरन ज़ोजनकहालिकय्यला यकूनो अलस मौमिन न हरजुन फ़ी अज़वाजे अवइआइहिम इज़्ज़ाकज़ो मिनहुन्ना वतरनव कान अमरुल्लाहे मफ़उल्ला। —(सूरते अहज़ाव आयत ३४)

जब कि तू कहता था उस व्यक्ति को जिसको अल्लाह ने (इस्लाम की) नैमत (दान) दिया और तूने उस पर यह पुरस्कार दिया (कि उसको स्वतन्त्र किया) आशय इसका **ज़ैद बिन हारिस** से है वह जाहिलियत (अन्धकार युग) के बन्दियों में से था उसको हज़रत मुहम्मद ने नबी बनने से पूर्व खरीद लिया था व उसे स्वतन्त्र करके अपना दत्तक पुत्र बना लिया था। कि न छोड़ तू अपनी पत्नी को और अल्लाह से डर (उसको तलाक न दे) यद्यपि **ए मुहम्मद तू अपने दिल में गुप्त विचार रखता था उस बात को जिसको अल्लाह प्रकट फ़रमाने वाला है** (अर्थात् ज़ैनब का प्रेम और यह भाव कि यदि ज़ैद इसको छोड़ देगा तो मैं उससे विवाह कर लूँगा और इस बारे में तू लोगों से डरता था कि वह यों कहेंगे कि मुहम्मद ने अपनी पुत्रवधू से विवाह कर लिया। यद्यपि अल्लाह से अधिक डरना चाहिए। इस बारे में और इस विवाह में भी और लोगों के कहने से

१. कोष्ठक व बिना कोष्ठक के दी गई है। —'जिज्ञासु'

कुछ भय नहीं करना चाहिए। फिर ज़ैद ने ज़ैनब को तलाक दे दी और उसकी इद्दत (अवधि) भी समाप्त हो गई जैसा फ़रमाया अल्ला ताला ने फिर **जब ज़ैद की अपनी आवश्यकता पूरी हो चुकी तो हमने** (ए मुहम्मद) उससे तेरा विवाह कर दिया। ....यह हमने इसलिए कहा कि मुसलमानों को अपने दत्तक पुत्रों की पत्नियों से कोई बाधा न रहे जबकि वह उनको तलाक दे दें और अल्लाह जो आदेश करता है वह (पूरा) होकर ही रहता है। —(जलालैन)

मा काना मुहम्मदन अवाअहदिन मिनरिजालिकुम व लाकिनईसूलल्लाहे व ख़ातिमन्नबिय्यीन।

—(सूरते अहज़ाव)

मुहम्मद तू मर्दों में से किसी का बाप नहीं (उस पर ज़ैनब उसकी बीवी हराम (अवैध) नहीं (अपितु) मुहम्मद अल्लाह का दूत है और अन्तिम दूत है। (ख़ातिम—मुहर लगाने वाला अन्तिम)

या अय्युहन्नबिय्यो इन्ना अहललनालका अज़्वाजका अल्लती आतैता उजुरुहुन्ना व मामलकत यमीनिकामिम्मा अफ़ाअल्ला हो अलैका। —(सूरते अहज़ाब आयत ५०)

ए मुहम्मद हमने तेरे लिए हलाल कीं (वैध बनायीं) तेरी वे पत्नियाँ जिनको तूने महर दिया (इस्लामी पद्धति की विवाह में एक रस्म) और वे स्त्रियाँ तेरी सम्पत्ति है (अर्थात् वे दासियाँ जो काफ़िरों से बन्दी बनाकर हाथ लगीं) जैसे सफ़िया व जवेरिया—

व इमरातन मौमिनतन इन वहबत नफ़्सुहा लिन्नबी इन अराद-न्नबीओ अन यस्तन्कहहा ख़ालिसतन लकामिन दूनिल मौमिनीन।

—(सूरते अहज़ाब आयत ५०)

और जो कोई स्त्री मुसलमान हो यदि बख़्शे अपनी जान नबी को, यदि नबी चाहे उसको विवाह कर ले हलाल है (वैध) तुझको सिवाय सब मुसलमानों के [(यह विशेष तेरे लिए ठीक है) और ईमान वालों के लिए नहीं। अर्थात् बिना महर के शब्द हिब्वा (दान) के साथ विशेष है, रसूलिल्लाह सअलम के लिए।]

यह तो विवाह का औचित्य था। एक आयत ऐसी भी उतरी है जिसके द्वारा निषेध किया गया है।

व लायुहिल्लो लकन्निसाओ मिनबअदो वला अन्य बद्दला

बिहिन्ना मिन अज़्वाजिन व लौ अअजबका हुसुनहुन्ना इल्लामा मलकत यमीनुका। —(सूरत अहज़ाब आयत ५३)

ए मुहम्मद! तुझको इन (नौ पत्नियों) के सिवाय (जिन्होंने तुझे पसन्द किया है) और किसी स्त्री से विवाह करना उचित नहीं और न यह (उचित है) कि उन सब या कुछ को छोड़कर उनके स्थान पर और स्त्री से विवाह करे, यद्यपि उसकी सुन्दरता तुझे पसन्द आए। परन्तु बान्दियाँ (क्योंकि वह तेरे लिए रखना वैध है इसलिए इन नौ पत्नियों के पश्चात् आप मारिया कब्तिया के स्वामी बने)।

इस निषेध में कुछ विचारणीय बातें विशेषतया ध्यान देने योग्य हैं। **जैसे यह कि अल्लाह ताला को हज़रत रसूल के विवाह करने का निषेध क्यों करना पड़ा?** अधिक विवाहों में अल्लाह मियाँ के विचार में हज़रत रसूल के कौन से भाव का प्रधानतत्व होने की आशंका थी? दूसरे यह कि बान्दियों का विधान (आज्ञा) फिर भी बना रहा।

सूरते तहरीम में एक और घटना का वर्णन है—

या अय्युहन्नबिय्योलिमा तुहर्रिमा मा अहल्लल्लाहो तका तब्तअनो मरज़ाता अज़्वाजका वल्लाहो गफ़ूरु रहीम। कद फ़रज़ल्लाहो लकुम तहिल्फतो ईमानिकुम वल्लाहो मीलाकुम व हुवल अज़ीज़ुलहकीम। व इज़ाअमरन्नविय्यो इलावाजे अज़्वाजिही हदीसन फ़ल्लमा नवाता बिहोव अज़्हरहुल्लाहो अलैहे अरफ़ा वाजहू व अग़रज़ा अन बाज़िन। फलम्मा नबाहा विही कालत मन अम्बाका हाज़ा कालम्बअनी अलीमुलख़बीर अन तत्बा इलल्लाहे। फ़कद रागतो जलबु कुमा। वइन तज़हरा अलैहे। फ़इन्नल्लाहो हुवामौलाहु व जिबरीलो व सालिहलमौमिनीन। व लमलाइकती बाद ज़ालिका हीरुन असा रब्बुहू अइनतलक कुन्ना अन्युब द्दिलहू अज़दाजन ख़ैरुन मिन्कुन्ना मुसल्लिमातिन व मौमिनातिन कानितातिन तायबातिन आबिदातिन नसहिआतुन सय्यबातुम व अबकारन। —सूरते तहरीम

ए पैग़म्बर! क्यों अवैध (हराम) करता है वह जो तेरे लिए वैध (हलाल) किया। मेरी उम्मत (समुदाय से) आशय इससे **मारिया कब्तिया** है कि उसको आप ने हराम (निषेध) फ़रमाया था। इसकी

घटना इस प्रकार है कि आपने अपनी दासी मारिया कब्तिया से सम्भोग किया हफ़्सा (बीबी) के घर पर। और हफ़्सा उस समय वहाँ न थी। जब वह आई। उसको यह चुभी कि उनके बिछौने पर ऐसा हुआ व उस समय आपने कहा कि मारिया मेरे ऊपर हराम (निषिद्ध) है। उस दशा में कि (इस निषिद्ध आज्ञा में) तू अपनी पत्नियों को प्रसन्न करना चाहता है और अल्लाह क्षमाकर्त्ता कृपालु है (उसने इस निषेधाज्ञा को क्षमा कर दिया है) निःसन्देह अल्लाह ने तुम्हारे शपथों को हलाल करने के लिए नियत किया है (कफ़्फ़ारा के साथ जो सूरते मायदा में वर्णन हुआ और बान्दी को निषिद्ध करना भी शपथों में सम्मिलित है और इसमें मतभेद है कि आपने कफ़्फ़ारा **(प्रायश्चित राशि)** दिया या नहीं)..........और अल्लाह तुम्हारा सहायक है और वह जानने वाला और कुशल है और याद कर जब पैग़म्बर ने अपनी पत्नी (हफ़्सा) से आहिस्ता (धीरे) बात की मारिया को हराम करने में और उससे कह दिया कि इस बात को किसी पर प्रकट न करना। सो जब सूचना दी (हफ़्सा ने आयशा को यह विचार के कि इसमें कोई हानि न होगी) और इस बात को अल्लाह ताला ने अपने पैग़म्बर पर प्रकट कर दिया तो कह दिया (पैग़म्बर ने कुछ बात हफ्सा से) और छुपा लिया (बड़प्पन के कारण ताकि उसे दुःख न हो) सो जब पैग़म्बर ने हफ्सा को इस बात की ख़बर कर दी तो वह कहने लगी कि तुझको इसकी ख़बर किसने कर दी? (पैग़म्बर ने) कहा मुझको इसकी ख़बर अल्लाह ने दी जो जानने वाला है और तुम दोनों (हफ़्सा व आयशा) तौबा करो तो अल्लाह तुम्हारी तौबा स्वीकार करेंगे। (तुम्हारे दिल मारिया को निषिद्ध करने की ओर झुके हुए थे, अर्थात् तुम्हें यह प्रसन्नता सूचक था यद्यपि रसूलिल्लाह को यह आज्ञा भारी पड़ रही थी और यह पाप है कि तुम उस बात से प्रसन्न हो जिससे आं हज़रत को रंज हो और यदि तुम एक दूसरे की सहायता करो (इस बात को करने में जो उसको पसन्द नहीं) तो अल्लाह उसका मददगार है और जिबरिल और नेक बन्दे मुसलमान (अर्थात् अबूबकर और उमर) और तमाम फ़रिश्ते उनके बाद उसके सहायक हैं। (अर्थात् उसकी मदद तुम्हारे मुकाबिले यह सब करेंगे)। अगर मुहम्मद सल्लल्ला अलैहि व सल्लम अपनी पत्नियों को तलाक दें तो निश्चय है कि उसका रब उसको और पत्नियाँ तुमसे अच्छी

प्रदान करें जो इस्लाम में विश्वासी हों शुद्ध ईमान वाली हों अल्लाह की आज्ञाकारिणी हों तौबा करने वाली हों भक्ति करने वाली हों रोजा (उपवास) रखने वाली हों या हिजरत करने वाली हों, कुंवारी व सुन्दर हों।

तफ़सीरे जलालैन में इस आयत की व्याख्या में यही घटना वर्णन की गई है। परन्तु **तफ़सीरे हुसैनी** में यह घटना भी वर्णन की गई है और इसके जैसी एक घटना और भी लिखी गई है। वह यह है—

नकल अस्त कि हज़रत पैग़म्बर शरबते असल दोस्त दाश्ते। वक्ते ज़ैनब कि मिकदारे असल दाश्त व हरगाह आंहज़रत बखाना वे आमदे ज़ैनब तरतीबे शरबत फ़रमूदे व आंहज़रत रा दर ख़ानाए वे ब जिहते आं तवक्क़ुफ़े बेश्तर वाक्या शुदे। आंहाल बर बाज़े अज़वाजे ताहिरात गिरां आमद। आं हज़रत रोज़े शरबत असल आशामीदा नज़द हर कुदाम आमद, गुफ्तन्द, या रसूलुल्ला अज़ शुमा रायहाए मग़फ़ूर मेआयद......चंईं सूरत मुकर्र वजूद गिरफ्त, हज़रत फ़रमूद कि हुरमर्तुल असल अलानफसी।

कहते हैं हज़रत पैग़म्बर शहद का शरबत पसन्द करते थे। एक बार ज़ैनब के पास कुछ शहद था। जब हज़रत उसके घर आते ज़ैनब शरबत पिलाती। इस कारण हज़रत को उसके घर अधिक देर हो जाती यह बात पवित्र पत्नियों को बहुत भारी गुज़रती।......हज़रत एक दिन शहद का शर्बत पीकर जिस पवित्र पत्नी के पास आए उसने कहा—ए रसूलिल्ला आपसे एक बदबूदार अर्क की बू आती है......जब यह दशा दूसरी बार हुई तो हज़रत ने फ़रमाया कि मैंने शहद हराम किया अपने ऊपर।[१]

अल्लाह ताला के इस कथन पर कि अगर हज़रत मुहम्मद अपनी पत्नियों को तलाक फरमावें तो उनके स्थान पर और पत्नियाँ

१. श्री सतीश कुमार सैशन जज देहली के न्यायालय में सन् २००८ में सत्यार्थ–प्रकाश पर कुछ मुसलमानों ने एक केस किया था। इसमें इन लोगों ने कोर्ट में यह लिखकर दिया था कि यह मधु वाली कहानी झूठी है। यह न कभी लिखी गई न सुनी गई। पाठक मुसलमानों के प्रामाणिक ग्रन्थों से इसके प्रमाण पढ़ लें। ऋषि ने कुछ भी अप्रमाणिक नहीं लिखा। —'जिज्ञासु'

विधवा व कुंवारियाँ हज़रत को प्राप्त होंगी।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

बकर इबने अब्बास फ़रमूद कि शैब आसिय ज़ने फ़िरओन अस्त व बकर मरियम मादरे ईसा अलैहिस्सलाम, कि हक्के सबहानहू वादा फ़रमूदा कि हर दो रा दर बहिश्त बिहलाए अज़वाज हज़रत-रिसालत पनाह दरआरद।

बकरइबने अब्बास फ़रमाते हैं कि **फ़िरओन की बेवा बीवी आसिया है और हज़रत ईसा की माँ कुमारी मरियम अल्लाह ताला ने वचन दिया है कि दोनों को बहिश्त में हज़रत रसूलिल्लाह की पत्नियों के समुदाय में लाएगा।**

स्पष्ट है कि जलालैन के मत में पूर्व चर्चित मारिया की घटना ठीक है और लेखक हुसैनी निर्णय नहीं कर पाए कि कौन-सी अवस्था परिस्थितियों के अनुकूल है।

महर्षि दयानन्द ने न्याय की दृष्टि से दोनों कथाओं का वर्णन कर दिया है जिससे पाठकों को मुसलमानों की परम्पराओं के अनुसार मनमानी सम्मति बनाने की सुविधा न बन सके।

उपरोक्त आयतों और उनके भाष्यों पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। विचारणीय केवल यह बात है कि यदि मुसलमानों का यह वाद सही हो जो समय-समय पर वह कहते रहते हैं कि पैग़म्बरों के जीवन आचार की दृष्टि से **प्रत्येक प्रकार के दोषों से रहित होते हैं तो क्या जिन शब्दों में कुरान शरीफ़ ने इन बड़े लोगों के जीवन** चरित्रों पर प्रकाश डाला है। उस दृष्टिकोण से यह सब पैग़म्बर ईश्वरीय दूत बनने के योग्य भी हैं या नहीं? और क्या इन सब पैग़म्बरों के जीवन चरित्र को सर्वसाधारण के सम्मुख मुख्य लक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है?

हज़रत मूसा ने हत्या की, हज़रत लूत ने अपनी पुत्रियों से सन्तानोत्पत्ति की, हज़रत मुहम्मद ने नौ पत्नियाँ व कुछ वान्दियाँ स्वीकार कीं और ज़ैद जिसे एक बार दत्तक पुत्र बना चुके उसकी तलाक प्राप्त पत्नी से विवाह कर लिया। जलालैन के अनुसार सर्वसाधारण में लज्जित होने के भय से अपने प्रेम व विवाह की इच्छा को गुप्त रखा।

जिस प्रकार से इन घटनाओं का वर्णन कुरान शरीफ़ में हुआ है। उससे यह प्रश्न भी स्वाभाविक रूप से पाठक के दिल में उठता है कि क्या इस प्रकार के व्यक्तिगत जीवन की कहानियाँ किसी ईश्वरीय सन्देश की पुस्तक का भाग होने के योग्य भी हैं?

चमत्कार

ईमान के दो साधन हैं—एक **बुद्धि**, दूसरा **सीधा विश्वास**, प्रकृति की पुस्तक दोनों के लिए खुली है।

प्रातःकाल सूर्योदय, सायंकाल सूर्यास्त, दिन व रात्रि का क्रम ऊषा की रंगीनी, बादलों का उड़ना, किसी बदली में से किरणों का छनना, इन्द्रधनुष बन जाना, पर्वतों की गगन चुम्बी चोटियाँ, सागर की असीम गहराई, वहाँ बर्फ के तोदे व दुर्ग, उछलती कूदती लहरों का शोर, बुद्धि देख-देखकर आश्चर्यचकित है। भूमि पर तो चेतन प्राणी हैं ही, वायु व जल में भी एक और ही विराट् संसार बसा हुआ है।

विज्ञान के पण्डित नित नए अनुसंधान करके नित नए नियमों का पता लगा रहे हैं और इन नियमों के कारण प्रकृति के ऊपर अधिकार प्राप्त करते जाते हैं। जो घटनाएँ पहले अत्यन्त आश्चर्यजनक लगतीं थीं। वह इन नियमों के प्रकाश में साधारण-सी घटनाएँ बनकर रह जाती हैं। मनुष्य यह देखकर दंग है कि पानी आकाश से कैसे बरसता है? वैज्ञानिक एक हण्डिया में पानी डालकर उसे आँच देता है। पानी सूखता है, उड़ता है। वैज्ञानिक उस उड़ते पानी को ठण्डी नली में से गुज़ारता है और उड़ती हुई भाप को फिर पानी बना देता है। यह पानी कण-कण होकर फिर गिर पड़ता है। वैज्ञानिक कहता है यही वर्षा होने का रहस्य है। हमने चमत्कार समझा था, परमात्मा की कुदरत का विशेष रहस्य माना था। वैज्ञानिक ने वही चमत्कार छोटे स्तर पर स्वयं करके दिखा दिया। हमारा आश्चर्य समाप्त हो गया। हम इन्द्रधनुष पर लट्टू थे। वैज्ञानिक ने त्रिकोण के एक शीशे में ही एक छोटा-सा इन्द्रधनुष उत्पन्न कर दिया। हम इसे साधारण बात समझ बैठे। वैज्ञानिक बुद्धिमान् था हमारी सरलता पर हँसा और कहा मेरी शक्ति प्रथम तो सीमा में छोटी है। साधारण है। भला इस इन्द्रधनुष की उस आकाश में फैले हुए इन्द्रधनुष से तुलना ही क्या? जो आकाश के एक भाग में छा जाता है? मेरे कण भर जल से कोई खेत

हरियाले हो सकते हैं या झीलें भर सकती हैं? वे भण्डार प्रभु के ही हैं जिनका संसार प्रार्थी है, याचक है। फिर **मेरी खोजें और आविष्कार तो परमात्मा की रचनाओं की नकल मात्र हैं, वह उसी भण्डार की एक बानगी है** जो वस्तु वर्तमान संसार में पहले से ही विद्यमान है। मैं उसे देखता हूँ उसकी दशा का चित्र अपनी बुद्धि में उतारता हूँ और अपनी सामर्थ्य के अनुसार इस भण्डार से एक छोटी-सी बानगी प्राप्त करता हूँ और उस पर परमात्मा के ही नियमों का प्रयोग करके कहीं इन्द्रधनुष का खिलौना कहीं पानी व भाप की गुड़िया बना लेता हूँ। यह प्रकृति के नियमों का छोटा-सा भाग जो मेरी **छोटी-सी बुद्धि में आता है परमात्मा को सर्वशक्तिमान् व पूर्ण ज्ञान का स्वामी सिद्ध करता है**। यदि उसके सामर्थ्य का प्रकटीकरण बिना किसी नियम के होता तो मनुष्य को अपने प्रयास की सफलता का विश्वास करना कठिन हो जाता। उस खेती में जिससे हम सबका पेट पालन होता है, क्या कुछ कम चमत्कार है। **एक दाने के लाखों व करोड़ों दाने हो जाते हैं। परमात्मा ही तो इन्हें बढ़ाता है। हम उससे लाभ उठा लेते हैं। इसमें यदि नियम व व्यवस्था न हो तो कोई किस भरोसे पर बीज बोए। उसे पानी दे और फ़सल काटे?** यह है बुद्धि के द्वारा ईश्वर पर विश्वास, अज्ञानी व्यक्ति बुद्धि से कोरा है उसे प्रतिदिन की खेती में परमात्मा का हाथ दिखाई देना कठिन है। सूरज व चाँद के तमाशे उसकी दृष्टि में परमात्मा की शक्ति के खेल नहीं? **परमात्मा और उसके साथ उसके प्यारों की शक्ति का प्रदर्शन किसी प्रकृति नियम के विपरीत चमत्कार के द्वारा होना चाहिए।**[१] इस लड़कपन के विचार ने अज्ञानी लोगों के दिलों में चमत्कारों की सृष्टि की है। वह उन्हीं लोगों को प्रभु तक पहुँचा हुआ

---

१. मुस्लिम विचारक डॉ० गुलाम जैलानी बर्क ने प्रचलित इस्लाम से हटकर यह लिखा है, ''अल्लाह का सबसे बड़ा चमत्कार यह सृष्टि—यह रचना है।'' देखिये 'दो कुरान' पृष्ठ ६२२। पं० गंगाप्रसदा उपाध्याय जी ने लिखा है, "The occurence of an unnatural phenomenon is a contradiction of terms. If it occurs, it is natural, if it is natural it must occur. Then is it anti natural? No who can defy nature successfully." Superstition अर्थात् चमत्कार यदि स्वाभाविक है तो चमत्कार नहीं यदि सृष्टि नियम विरुद्ध हैं तो हो नहीं सकते। —'जिज्ञासु'

मानते हैं जिनसे कोई करामात चमत्कार या **प्रकृति के नियम विरुद्ध काम सम्बन्धित हो**। कुछ सम्प्रदायों की आधारशिला ही इन्हीं चमत्कारी कहानियों पर है। स्वयं चमत्कार करना कठिन है, क्योंकि उसके मार्ग में प्रकृति के नियम बाधक हैं इसलिए इन मतों की पुस्तकों में चमत्कारों की असम्भवता को कुछ स्वीकार किया गया है, जैसे कि इञ्जील में वर्णन है—

''उस ईसा ने ठण्डा सांस लिया और कहा यह पीढ़ी चमत्कार चाहती है? मैं तुम्हें सच कहता हूँ इस पीढ़ी को चमत्कार नहीं दिखाया जाएगा''[१]। —(मरकस आयत ८-१२)

और कुरान में भी आया है—

व कालू लौला उन्ज़िला इलैहे आयातुन मिन रब्बिही कुल इन्नमल आपातो इन्दल्लाहे व इन्नमा इन्ना नजीरुन मुबीन० लो लमयक फिहिम अन्ना अंजलना अलैकल किताबो, तुतला अलैहिम इन्ना फ़ीजालिका लरहमता व ज़िकरालि कौमिय्योमिनून।

—(सूरते अनकबूत आयत ५०-५१)

और कहते हैं क्यों नहीं उतरीं उस पर उसके रब की ओर से निशानियाँ। पास अल्लाह के हैं और निश्चत ही मैं डराने वाला हूँ, प्रकट और क्या उनके लिये यह पर्याप्त नहीं कि हमने तुम पर पुस्तक उतारी है जो पढ़ी जाती है उन पर और उसमें कृपा है और वर्णन है मौमिनों के लिए।

परन्तु पूर्ववर्तियों के सम्बन्ध में चमत्कारों की कहानियाँ सुनाने में कोई कानून बाधक नहीं। इसलिए ऐसी पुस्तकों के अपने काल के चमत्कारों का लाख इन्कार हो, पूर्वकालीन कालों के पैग़म्बरों के साथ चमत्कार जोड़ दिए गए हैं। काल बीतने पर श्रद्धालुओं ने वैसे ही और उनसे बढ़-चढ़कर विचित्र चमत्कारों के सम्बन्ध अपने पथ-प्रदर्शकों के साथ जोड़ दिए हैं। **चमत्कार वास्तव में प्रभु की सत्ता की स्वीकृति नहीं इन्कार हैं। परमात्मा नित्य है, अनादि है तो उसकी शक्ति का प्रदर्शन भी नित्य है, शाश्वत है, क्षण-क्षण में होता है**। परमात्मा का ज्ञान पूर्ण है। उसका ज्ञान जैसे प्रकृति के

१. डॉ० जेलानी ने भी अपनी पुस्तकों में चमत्कारों की चर्चा करते हुए यही प्रमाण दिये हैं। —'जिज्ञासु'

नियम हैं। जहाँ यह नियम टूटे समझो परमात्मा का ज्ञान भंग हुआ। **परमात्मा के नियम व कार्य में परिवर्तन होना असम्भव है**। उसके ज्ञान व कार्य का प्रदर्शन नित्य प्रति के कार्यों में हो रहा है। उनका साँचा पलटने की सद्बुद्धि को आवश्यकता नहीं। हाँ जिन लोगों की मान्यता ही यह है कि वह कानून से भी ऊपर हों जिस पर तर्क ननुनच न कर सके, वह परमात्मा को भी एक बड़ा, सारे संसार को घेरे हुए, मनमौजी राजा कल्पना कर सकते हैं। जिसकी इच्छा का भरोसा नहीं। अपनी या अपने प्यारों के लिए किसी समय कुछ कर गुज़रे। किसी पर दिल आ गया उसे रिझाने के लिए कुछ भी कर देना उससे दूर नहीं। आजकल राजाओं का युग नहीं रहा। सो परमात्मा की भी कल्पना परिवर्तित हो रही है। **वेद की दृष्टि में परमात्मा के नियम परमात्मा की पवित्र आज्ञाएँ हैं। उनका उल्लंघन (नऊज़ो बिल्लाह—परमात्मा की शरणागति)** करके परमात्मा अपना निषेध-उल्लंघन करेगा यह असम्भव है। **परमात्मा के प्यारे वे हैं जिनका जीवन विज्ञान के नियमों व आध्यात्मिकता के साँचे में ढल जाता है।[१] जिनका सदाचार ही उनकी महानता है**। वे नियमों का उल्लंघन नहीं करते उसके ज्ञान का प्रचार करते हैं। उनकी भक्ति बुद्धि के साथ वाणी का रूप धारण करके उसका प्रकाश करती है जिसका पवित्र नाम वेद है।

इसके विपरीत कुरान शरीफ़ में स्थान-स्थान पर चमत्कारों का वर्णन आया है। हम नीचे कुछ पैग़म्बरों के सम्बन्ध में कुरान शरीफ़ की साक्षी प्रस्तुत करेंगे जिससे प्रकट हो कि उनकी महानता की **आधारशिला कुरान की दृष्टि में उनके चरित्र पर नहीं चमत्कारों पर है**। कुरान शरीफ़ के कुछ पैग़म्बरों के चरित्र पर एक संक्षिप्त आलोचना पिछले अध्याय में हो चुकी है। आचार व आध्यात्मिकता की परिपूर्णता विद्यमान होने की दशा में किसी व्यक्ति का जीवन

१. नियम नियन्ता के होने का एक बहुत बड़ा प्रमाण होता है। अनियमितता कहीं भी हो यही सिद्ध करती है कि यहाँ कोई नियन्ता नहीं। यह सृष्टि नियमों में बंधी है जो अटल Eternal हैं। ऋत व सत्य को वेद भूमि का आधार मानता है। इन नियमों के टूटने का कोई प्रश्न ही नहीं है। —'जिज्ञासु'

चमत्कारों की अपेक्षा नहीं रखता। मनुष्यों के लिए लाभदायक व सृष्टि के नियमों के या ऐसा कहो कि परमात्मा की इच्छा के रंग में रंगी हुई कार्य प्रणाली सर्वश्रेष्ठ चमत्कार है। जो ऋषि दयानन्द व उनके पूर्ववर्ती वेद के ऋषियों के भाग में आया है। अन्य महापुरुष भी इस श्रेष्ठता से रिक्त नहीं होंगे, परन्तु हमें यहाँ उन महापुरुषों के वर्णन से तात्पर्य है कि जो उनके अनुयायियों के कथानकों के द्वारा हम तक पहुँचे हैं। इस अध्याय में हमें देखना यह होगा कि इन महापुरुषों के चमत्कार कल्पना के कितने निकट हैं? यदि कल्पना करो कि उनकी सत्यता को क्षणभर के लिए स्वीकार भी कर लिया जाए तो **इससे वर्तमान काल का मानव समाज क्या लाभ उठा सकता है**? माननीय पैग़म्बरों के आचार के परिपालन का द्वार इस्लाम के भाग्य लेखों के नियमों के हाथों बन्द है। क्योंकि हम वैसे ही कर्म करने पर विवश हैं जैसे प्रारम्भ से हमारे भाग्य लेखक ने लिख दिए हैं फिर आश्चर्यप्रद चमत्कार तो—

ईं सआदत बज़ोरे बाज़ू नेस्त,
ता न बख़्शद ख़ुदाए बख़्शिन्दा[१]।

यह चमत्कार हमारे किस काम के? अभी तो हमें इन करामातों, चमत्कारों के तथाकथित वर्णनों पर दृष्टिपात करना चाहिए। सम्भव है, इसमें हमारे सदुपयोग की भी कोई बात निकल आवे—

हम दृष्टान्त के रूप में इन पैग़म्बरों के कुछ चमत्कारों की संक्षिप्त जाँच पड़ताल किए लेते हैं—

(१) हज़रत मूसा, (२) हज़रत ईसा, (३) हज़रत इब्राहिम, (४) हज़रत सालिह, (५) हज़रत नूह, (६) हज़रत मुहम्मद।

हज़रत मूसा

हज़रत मूसा की कहानी कुरान शरीफ़ में बार-बार दोहराई गई है। हम कुछ ऐसे प्रमाणों पर सन्तोष करेंगे जिनसे इन हज़रत के किए हुए कार्यों या उनकी कहानी में वर्णित प्रकृति नियम विरुद्ध कारनामों पर प्रकाश पड़ सके।

---

१. अर्थात् यह पुण्य अथवा सामर्थ्य भुजा बल से प्राप्त नहीं होता। जब तक विधाता की कृपा न हो—इसकी प्राप्ति असम्भव है। —'जिज्ञासु'

मनुष्य बन्दर बन गए

सूरते बकर में फ़रमाया है—

वलकद अनिमतुमल्लज़ीना अइतिदू मिनकुम फ़िस्सबते फ़कुलनालहुम कूनू किरदतन ख़ासिईन। फ़जअलनाहा नकालन लिमा बेनायदेंहा वमा ख़लफ़हा।

—(सूरते बकर आयत ६५-६६)

इसकी व्याख्या तफ़सीरे जलालैन में इस प्रकार की गई है—

सचमुच सौगन्ध है कि तुम जानते हो उनको जिन्होंने (प्रतिबन्ध लगाने पर भी) शनिवार के दिन (मछली का शिकार करके) सीमा का उल्लंघन किया (वह लोग ईला के रहने वाले थे) सो हमने उनसे कहा कि तुम बन्दर बन जाओ रहमत (प्रभु कृपा) से दूर (सो वह) हो गए और तीन दिन बाद मर गए। फिर हमने (इस दण्ड को) उनके काल के पश्चात् और बाद में आने वाले लोगों के लिए मार्गदर्शन का साधन कर दिया। **—जलालैन**

शरीरों का अविलम्ब परिवर्तन प्रकृति के किस नियम के अनुसार हुआ? हज़रत डारविन को कठिनाई थी कि बन्दर की पूँछ मनुष्य शरीर में आकर लुप्त कैसे हो गई? पाठक वृन्द! कुरान की कठिनाई यह है कि दुम (पूँछ) कैसे उत्पन्न हो गई? मज़हब में तर्क का प्रवेश नहीं।

मृत शरीर बोल उठा

व इज़ा कतलतुम नफ़सन फ़द्दर अतुम फ़ोहा बल्लाहो मुख़-रिजुन मा कुन्तुम तकतिमूना, फ़कुलना अज़रिबहो विबाज़िहा। कज़ालिका यहयल्लाहो अलमूता व युरीकुम आयतिही लअल्ल-कुम तअकिलून। —(सूरते बकर आयत ७३)

जबकि तुमने एक आदमी को मारा फिर उसमें झगड़ा किया और अल्लाह प्रकट करने वाला है। इस बात को जिसको तुम छुपाते थे। फिर हमने कहा कि इस (वध किए गए) से इस (गाय) की (शाब्दिक अर्थ हैं इस गाय) का एक टुकड़ा जीभ या दुम की हड्डी मारो उन्होंने मारा और वह जीवित हो गया और अपने चाचा के बेटों के बारे में कहा कि उन्होंने मुझे मारा है यह कहकर मर गया।

अल्लाह ताला इसी प्रकार मृत शरीरों को जीवित करेगा वह तुमको अपनी शक्ति की निशानियाँ दिखाता है कि तुम विचार कर समझो।
—जलालैन

गाय का एक टुकड़ा लगने से मुर्दा जी उठा न जाने मरा क्या लगने से? पर मरते तो लोग नित्यप्रति हैं। चमत्कार जीने में था। बंकिमचन्द्र बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार मजिस्ट्रेट थे। एक मुकदमें में वास्तविक परिस्थिति का पता नहीं लग रहा था। आपने मुर्दे का स्वांग भरा। लाश बनकर पड़े रहे और उस पर कपड़ा डाल दिया गया। अपराधी भी वहीं थे। बातों-बातों में नि:संकोच सारी घटना सच-सच कह गए। मुर्दा जलाने से पूर्व ही जी उठा और न्यायालय में घटना की साक्षी दे गया। कुछ ऐसी ही दशा इन आयतों में लिखी हुई तो नहीं? यह अन्तर अवश्य है कि बंकिम फिर जीवित ही रहे तीन दिन पश्चात् मरे नहीं।

डण्डे का चमत्कार

व इजस्तस्का मूसालिकौमिही, फकूलनाजरिव बिअसाक-लहजरा फन्फजरत मिनहा इसनता अशरा ऐनन।

—(सूरते बकर आयत ७३)

जब कि (उस जंगल में) मूसा ने अपनी जाति के लिए पानी माँगा सो हमने कहा कि अपनी लाठी पत्थर पर मार (यह वही पत्थर था जो मूसा के कपड़े ले भागा था) नरम (चौकोन जैसा आदमी का सिर) सो उसने मारा बस १२ जल के स्रोत (चश्मे) (जितने वह गिरोह थे) उसमें से निकलकर बहने लगे। **—जलालैन**

डण्डा अजगर बन गया

फ़लका असाहो, फ़इज़ाहिया सअबानुन मुबीनुन, वनज़ आयदुहू फ़इज़ाहिया बैज़ा अनलिन्नाज़िरीन।

—(सूरत ऐराफ़ आयत १०७)

बस मूसा ने अपनी लाठी डाली सो अचानक वह बड़ा अजगर साँप बन गई और (मूसा ने) अपना हाथ (कपड़ों में से) निकाला और वह चमकता हुआ प्रकाशमान प्रकट हुआ देखने वालों की दृष्टि में (यद्यपि उस हाथ की यह रंगत न थी। गेहुआ रंग था)।
—जलालैन

पतला साँप

व अलके असाका फ़लम्मा राअहा तहतज़्जुन कअन्नहा जानुन ववलामु दब्बिरन वलम यअकिब या मूसा ला तख़िफ़।

—(सूरते नहल आयत १०)

और अपनी लाठी डाल (सो मूसा ने) अपनी लाठी डाली (उसने) जब उस लाठी को देखा कि दौड़ती है जैसे पतला साँप। मूसा पीठ फेरकर भागा और पीछे को न लौटा (अल्ला ताला ने फ़रमाया) ए मूसा तू इससे भयभीत न हो। **—जलालैन**

वेदान्त में भ्रमवश रस्सी को साँप समझने का वर्णन तो प्राय: होता है, यहाँ न जाने भ्रम था या वास्तविक दशा थी?

टिड्डियों जुंओं व मैढकों का मेंह

लोग हज़रत मूसा के भक्त न बने बस फिर क्या था?

नहनोलका बिमोमिनीना फ़अरसलना अलैहुम त्तूफ़ानावल जरादा वलकमला वज़्ज़फ़ादिए वद्दम्मा आयतिन मुफ़स्सिलातिन।

—(सूरते आराफ १३२-१३३)

हम कभी तेरा विश्वास न करेंगे और ईमान न लाएँगे (सो मूसा ने उनको शाप दिया) फिर हमने उन पर पानी का तूफ़ान भेजा (कि सात दिन तक पानी उनके घर में पानी भरा रहा। जो बैठे हुए आदमी के हलक तक पहुँचता था) और भेजा टिड्डियों को (सात दिन की उनकी खेती व फल खा गए और (भेजा) जुओं को (या वह कीड़ा जो अनाज में पैदा हो जाता है) या चिचड़ी को जो उसने टिड्डियों का बचा हुआ खाया और कुछ शेष न छोड़ा और भेजा उन पर मैंढक (कि वह उनके घरों व खानों में भर गए) और रक्त को (उनके पानी में) और यह निशानियाँ प्रकट (भेजी)।

किसी की समझ में यह चमत्कार न आए तो इसका इलाज वही है जो इस आयत के अनुसार ईमान न लाने वालों का हुआ। अर्थात् पानी का तूफ़ान, टिड्डियों, जूएँ, रक्त व मैंढक, इस भय के होते कौन हैं जो ईमान न लाए?

नदी दो टुकड़े

आगे फ़रमाया है—

फ़ग़रकनाहुम फ़िलयम्मा बिइन्नहुम कज़्ज़बू बूआया तिनाव

कानू अनहा ग़ाफ़िलीन। —(सूरते आराफ आयत १३६)

फिर डुबा दिया (उनको शोर नदी में) इस कारण से कि वह निश्चय ही हमारे आदेश को झुठलाते थे और (हमारी निशानियों से) अज्ञान रखते थे कुछ सोच विचार नहीं करते थे। —**जलालैन**

व जावज़्ना विनब्यिय इसराईल लवहरा।

—(सूरते आराफ आयत १३८)

और हमने बनी इसराईल को नदी से पार कर दिया।

इस घटना का विवरण इससे पूर्व निम्न आयत में वर्णन हो चुका है।

व इज़्ा फ़रकना बिकुलमुल बहरा फ़अन्जयतकुम व अग़रकना आले फ़िरओन व अन्तुम तंज़रुना।

—(बकर आयत ५०)

जबकि हमने तुम्हारे (बनी इसराईल के) कारण दरिया को चीरा (ताकि तुम शत्रुता से भागकर इसमें दाखिल हो जाओ) सो हमने तुमको डूबने न दिया और फिरऔन की जाति को डुबो दिया (फ़िरऔन सहित) और तुम देखते थे (उनके ऊपर दरिया के मिल जाने पर)। —**जलालैन**

आजकल की पनडुब्बी नौकायें इससे भी कहीं अधिक चमत्कार[1] दिखा रही हैं।

२. हज़रत मसीह

हज़रत ईसा मसीह को मुसलमान वह महत्ता नहीं देते जो ईसाई लोग देते हैं, परन्तु हज़रत मसीह से भी कुछ चमत्कार कुरान में ही जोड़े गये हैं। जैसा कि सूरते बकर आयत ८७ में वर्णन है।

व आतैना ईसा इब्ने मरयमल बय्यनाते व अय्यदनाही बिरुहिलकुदस।

और मरियम के पुत्र ईसा को कई चमत्कार दिए (जीवित करना मृतकों का और अन्धें व जन्मजात कोढी को निरोग करना) और उनको सामर्थ्य दी जिबरईल से (जहाँ ईसा चलते, जिबरईल उनके साथ होते थे)। —**जलालैन**

१. डॉ० ग़ुलाम जैलानी बर्क ने अपनी पुस्तक दो कुरान पृष्ठ ३२२ पर नील नदी का फटना, लाठी का सर्प बनना आदि चमत्कारों को झुठला दिया है। —'जिज्ञासु'

बिना पिता के सन्तानोत्पत्ति

व इज़्ा कालतिलमलाइकतो या मरयमो इन्नल्लाहा इस्तफ़ाका व तहरका वस्तफ़ाका अलानिसाइल आलमीन।

—(आले इमरान ३९)

जब फ़रिश्ते बोले ए मरियम! अल्लाह ने तुझे पसन्द किया व शुद्ध बनाया (टिप्पणी में है—पुरुष के निकट होने से पवित्र किया) और पसन्द किया तुझको सब संसार की स्त्रियों से। —**जलालैन**

व जकरा फ़िल कितावे मरियमा इज़म्बतजतामिन अहलिहा मकानन शरकिय्यन। फ़त्तरवजत मिन दूनिहिम हिजाबन फ़अर सलना इलैहा रुहना फ़तमस्सला लहवशरन सविय्यन। कालत इन्नो अऊजो बिर्रहमाने मिन्काइन कुन्ता नकिय्यन। काला इन्नमा अनारसूलो रब्बिकालिअहल लका ग़ुलामन ज़किय्यन० कालत अन्नी यकूनोली ग़ुलामुन वलम यमसइनि बशरुन वलम अकोवगिय्यन काला कज़ालिका काला रब्बुका हुवा अलय्या हय्यनुन व लि नजअहु आयतुन लिन्नासे.........फ़हमलतहू फ़न्तब्जत बिहीमकानन कसिय्यन। —(मरयम १६-२०)

याद करो कुरान में कथा मरियम की जबकि वह पृथक् हुई अपने घर वालों से एक मकान के कोने में जो पूर्व दिशा में था (वहाँ जाकर) घर के लोगों के सामने परदा छोड़ दिया (ताकि कोई न देखे यह परदा इसलिए छोड़ा था कि अपने सिर या कपड़ों से जूं निकालती थी या मासिक धर्म के पश्चात् स्नान करती थी पवित्र होकर) सो भेजा हमने उनकी ओर अपनी रूह (आत्मा, जिबरईल) को। सो वह हो गया आदमी पूरे हाथ पैर वाला सुन्दर (जबकि मरियम अपने कपड़े पहन चुकी थी) मरियम बोली, नि:सन्देह मैं तुझसे ख़ुदा की शरण माँगती हूँ यदि तू कोई पवित्र हृदय पुरुष है (तू मेरे शरण माँगने से पृथक् रह) जिबरईल ने कहा—बात यह है कि मैं तेरे परमात्मा का भेजा हुआ हूँ कि तुमको एक पवित्र बेटा प्रदान करूँ (जो पैग़म्बर होगा) मरियम ने कहा—मेरे पुत्र कैसे होगा। यद्यपि किसी पुरुष ने विवाह करके हाथ नहीं लगाया और न मैं व्यभिचारिणी हूँ........ जिबरईल ने कहा—(यह बात अवश्य होने वाली है, अर्थात् बिना पिता के पुत्र अवश्य उत्पन्न होगा) तेरा परमात्मा कहता है कि यह काम मेरे लिए सरल है (इस प्रकार कि जिबरईल मेरे आदेश से तेरे

अन्दर फूँक मारे तू उससे गर्भवती हो जाए)........और हम उसको अवश्य पैदा करेंगे ताकि बनाएँ उसको अपने सामर्थ की निशानी.....फिर मरियम गर्भवती हुई और चली गई (गर्भवती होने के कारण अपने घर वालों से) दूर। **—जलालैन**

फ़रिश्ते आजकल बात भी नहीं करते। प्राचीनकाल में करते थे। परमात्मा के सन्देश लाते और उसके आदेशों का पालन करने में भाँति-भाँति के पुरस्कार प्रदान कर जाते थे। हज़रत मरियम को बिना पति के सन्तान दी। **हज़रत यहया को बिना शक्ति के पुत्र दिया।** इस विज्ञान के युग में अल्लाह मियाँ व उसके फ़रिश्ते सब वैज्ञानिक हो गए हैं। मजाल है कोई बात प्रकृति के नियमों के विरुद्ध कर जावें।

वल्लती अहसनत फ़रजहा फ़नफ़रवना फ़ीहा मिनरुहिनावज-अलनांहां व अबनाहा आयतुन लिल आलमीन।

—(सूरते अम्बिया ८८)

और स्मरण करो मरियम को जिसने अपनी योनि को (बुरे काम से) सुरक्षित रखा सो हमने अपनी रूह (आत्मा) फूँकी (अर्थात् जिबरईल ने उसके कुर्ते के गिरेबान में फूँक मारी जिससे उसको ईसा का गर्भ रह गया) और हमने मरियम को और उसके पुत्र को मनुष्यों, जिन्नों (भूतों) व फ़रिश्तों (देवताओं) के लिए एक निशानी बनाया। (क्योंकि मरियम ने ईसा को बिना पति के जन्म दिया)।

—जलालैन

हज़रत इब्राहिम

कटे पशु जीवित किए

हज़रत इब्राहीम एक पुराने ईश्वरीय दूत हैं। हज़रत मुहम्मद का दावा है कि इस्लाम हज़रत इब्राहिम का ही धर्म है। उनके प्रकृति के नियमों के विरुद्ध चमत्कारों का वर्णन सूरते बकर में इस प्रकार है—

व इज़ा काला इब्राहीमो रब्बे अरनी कैफ़ा यहयुलमौता काला अवलय तौमिनो। काला बला वलाकिन लियमय्यिनाकलबी। काला फ़ख़ुज़ अरबअतन मिनत्तैरे फ़सर हुन्ना इलैका, सुम्मा अजअल अलाकुल्ले जबलिन मिनहुन्ना जुजअन सुम्मा अदउहुन्ना

यातीन का सइयन व अलमी इन्नाल्लाहो अज़ीज़न हकीम।

—(सूरते बकर आयत २६०)

इब्राहिम ने कहा—ए मेरे प्रभु मुझको दिखला कि तू मुर्दों को कैसे जीवित कर देगा (अल्लाह ने उनसे फ़रमाया) क्या तुझको इस पर विश्वास नहीं? (कि मेरे अन्दर सामर्थ है कि मुर्दों को जीवित कर दूँ)........(इब्राहीम ने) कहा कि मैंने निसन्देह विश्वास किया तेरी शक्ति पर........यह मैंने तुझसे इसलिए पूछा कि आँख से देखकर पूरे हृदय को सन्तोष प्राप्त कर लूँ और विरोधियों से तर्क कर सकूँ (अल्लाह ने) फ़रमाया, अब तू चार पंछी पकड़.......और उनको अपने पास इकट्ठा कर और उनको काटकर उनके पंख गोश्त मिलाकर फिर अपनी ज़मीन के पहाड़ों में से प्रत्येक पहाड़ पर एक-एक टुकड़ा उनका रख दे फिर उनको अपनी ओर बुला वे दौड़कर आएँगे और जान ले कि अल्लाह शासक है (किसी बात से कमज़ोर नहीं उसका काम सुदृढ़ व पक्का है) सो इब्राहिम ने **मोर**, **करगस**, **कौवा** और **मुर्ग** पकड़ा और उनका मांस व पर काटकर मिला दिए और उनके सिर अपने पास रख लिए और उनको बुलाया सो तमाम टुकड़े उड़कर जिसका जो टुकड़ा था उसमें जा मिला। यहाँ तक कि पूरे होकर अपने-अपने सिरों से मिल गए। **—जलालैन**

हज़रत सालिह

अल्लाह मियाँ की ऊँटनी

कौम समूद के पैग़म्बर सालिह के सम्बन्ध में सूरते हूद में आया है कि उन्होंने फ़रमाया—

वया कौमे हाजिही नाक तुल्लाहे लकुम आयतुन फजरुहा ताकुल फिलअरजे ल्लाहेवला तमस्सूहा बिसूइन फयारवुजकुम अजाबुन करीबुन फअकरुहा, फकाला तमत्तऊफी दारिकुम सलासता अय्यामिन जालिका व अदुन गैरो मकज़ूबिन।

—(सूरते हूद आयत ६३)

और ए मेरी कौम यह अल्लाह की ऊँटनी है तुम्हारे लिए निशानी अत: इसे छोड़ दो फिर से अल्लाह की भूमि पर और इसके साथ किसी प्रकार का बुरा व्यवहार मत करो नहीं तो तुम पर बहुत बड़ा दण्ड आएगा। सो उन्होंने उसके पैर काटे (अर्थात् एक कज़ाज़ नामक व्यक्ति ने उस कौम के कहने पर ऊँटनी के पैर काट डाले)

(सालिह ने) फ़रमाया ज़िन्दा रहो तुम अपने घरों में तीन दिन फिर तुम वध कर दिए जाओगे। —**जलालैन**

सूरते बनी इसराईल में कहा है—

व आतैना समूदुन्नाकतामब्सिरतुन फ़ज़लमू बिहा।

—(बनी इसराईल ५८)

हमने समूद की ओर ऊँटनी को भेजा वह प्रकट निशानी थी सो उन्होंने उसका इन्कार किया। (अतः वे नष्ट हो गए)

तफ़सीरे हुसैनी में इस आयत की व्याख्या में कहा है—

समूद अज़ सालिह मोजिज़ा तलब करदन्द व ख़ुदाए बराए एशां अज़ संग नाका बेरूं आवुरद।

समूद ने सालिह से चमत्कार माँगा और ख़ुदा ने उनके लिए पत्थर से ऊँटनी उत्पन्न कर दी।

सूरते शुअरा में फ़रमाया है—

काला हाज़िही नाकतुन लहा शिरबुन वलकुम शिरबो योमिन मालूम। —(सूरते शुअरा)

कहा यह ऊँटनी है उसके लिए पानी का एक भाग निश्चित है और तुम्हारे लिए एक निश्चित दिन का भाग। —**जलालैन**

मूज़िहुल कुरान में इसी स्थान पर फ़रमाया है—

वह छूटी फिरती....जिस सरोवर पर पानी को जाती सब पशु वहाँ से भागते तब यह निश्चित कर दिया गया कि एक दिन पानी पर वह जाए एक दिन औरों के पशु जाएँ।

सूरते शमस में यह वार्ता इस प्रकार वर्णन की गई है—

फ़कालालहुम रसूलुल्लाहे नाकतुल्लाहे व सकयाहा फ़कज़िबूहा फ़अकरुहा फ़दमदमा अलै हुम रब्बुहुम बिज़नबिहिम फसब्वाहा।

—(सूरते शमस आयत १३-१४)

फिर कहा उनको अल्लाह के रसूल ने सावधान हो अल्लाह की ऊँटनी से और उसके पानी पीने की बारी से फिर उसको उन्होंने झुठला दिया फिर वह काट मारी और फिर उल्टा मारा, उन पर उनके रब ने उनके पाप से फिर बराबर कर दिया। —**जलालैन**

भला यह ऊँटनी क्या हुई! पत्थर से निकली और उसका अधिकार

यह कि जिस दिन वह पानी पीए और पशु न पीवें आखिर अल्ला मियाँ की जो हुई। यह भी अच्छा हुआ कि पत्थर से कोई मनुष्य नहीं निकला नहीं तो मनुष्यों के लिये पानी का अकाल हो जाता। कोई पूछे कि इस चमत्कार से मनुष्य का क्या बना? और दयालु परमात्मा का क्या?

हज़रत नूह

लगभग हज़ार बरस जिए

सूरते अनकबूत में हज़रत नूह का वर्णन हुआ है। फ़रमाया है—

वलकद अरसलना नूह न इला कौमिहि फ़लबिसा फ़ीहिम अलफ़ा सनतिन इल्ला ख़मसीना आमन।

—(अनकबूत आयत १४)

और हमने भेजा नूह को उनकी कौम के पास। फिर रहे वे उनमें **५० कम १ हज़ार बरस तक**।

तफ़सीरे हुसैनी में इस आयत पर कहा है—

नूह चहल साल मबऊसशुद व नह सदपंजाह साल ख़लक रा बख़ुदा दावत करद। बाद अज़ तूफ़ान शस्त साल ज़ीस्त दर अहकाफ़ अज़ दहब नकल कुनन्द कि उम्रे नूह हज़ार व चहार सद साल बूद, साहब ऐनुलमआनी फ़रमूद कि सी सद व हफ़्ताद साल मबऊस शुद व नो सद व पंजाह साल दावत करद, बाद अज़ तूफ़ान सी सद व पंजाह साल ज़ीस्त।

नूह अलैहस्सलाम चालीस साल की आयु में पैग़म्बर हुए और नौ सौ पचास वर्ष तक लोगों को ख़ुदा का सन्देश देते रहे। तूफ़ान के पश्चात् साठ वर्ष जीवित रहे। अहकाफ़ में वह बसे रिवायत (वर्णनवार्ता) है कि नूह **अलैहस्सलाम की आयु एक हज़ार चार सौ वर्ष थी**। लेखक ऐनुलमआनी फ़रमाते हैं कि तीन सौ सत्तर साल की आयु में पैग़म्बर हुए नौ सौ पचास साल प्रचार किया और तूफ़ान के पश्चात् ३ सौ पचास साल जीवित रहे।

हज़रत नूह की आयु कुछ भी हो उनकी प्रचार की अवधि का प्रारम्भ पचास वर्ष स्वयं कुरान में वर्णित है। इस प्रचार का प्रभाव यह कि थोड़े गिने-चुने लोगों के उनके साथियों के अतिरिक्त कोई भी सन्मार्ग पर नहीं आया और सब को तूफ़ान की बलि होना पड़ा।

सारी सृष्टि अल्लाह की बनाई और बनाई भी वैसी जैसी अल्लाह को स्वीकार था। अल्लाह ने कुछ को जन्नत के लिए कुछ को दोज़ख़ के लिए पहले से ही चुन लिया था फिर हज़रत नूह को कष्ट देने की क्या आवश्यकता थी? यदि दिया ही था तो कुछ परिणाम निकलना चाहिए था।

हज़रत मुहम्मद

चाँद तोड़ दिया

हज़रत मुहम्मद ने चमत्कार दिखाने से इन्कार तो किया था, परन्तु अनुयायियों के आग्रह से विवश हो गए हैं। सूरते कमर में आया है—

बक्तरबत स्साअता वन्शक्कलकमरो।

निकट आ गया प्रलय दिन और फट गया चाँद (चाँद के दो टुकड़े होना)। हज़रत का चमत्कार हुआ जिसकी माँग काफ़िरों के द्वारा की गई थी। आपने उसकी ओर संकेत किया। और वह दो टुकड़े हो गया।

चाँद अरब का था क्या?—कोई प्रश्न कर सकता है कि वह चाँद अरब का था या इस चमत्कार को देखने वालों का कोई विशेष चाँद था? या यही चाँद था जो संसार की सभी जातियों के लिए सामान्य है? यदि सामान्य था तो क्या कारण है कि अरब के बाहर के लोग इस चमत्कार के साक्षी न हुए। वास्तव में यह चमत्कार ज्योतिष विद्या के इतिहास में कुछ कम महत्त्व का नहीं था कि हज़रत मुहम्मद की घटना उनके लेखकों के अतिरिक्त किसी और का ध्यान न खींचती। अपना-अपना भाग्य है इस गौरव से और लाभान्वित न हुए!

सूरते बनी इसराईल में कहा है—

सुबहानल्लज़ी असराबि अब्दिही लैलन मिनल मस्जिदल अकसा अल्लजी बरकना हौलहू लिनरीहू मिन आतेना।

—(सूरते बनी इसराईल आयत ७१)

पवित्र है वह सत्ता कि अपने बन्दे को (मुहम्मद साहब को) रात में मस्जिदे हराम (अर्थात् मक्का) से मस्जिदे आकसा (बैतुल मुकद्दस-पवित्र घर) की ओर ले गया......जिसकी हर ओर से हमने बरकत दी........कि उसको विचित्रताएँ व चिह्न दिखलाए.... आपकी

भेंटें पैग़म्बरों से हुई व आपको आसमानों की ओर चढ़ाया.........वास्तव में हज़रत सलअम ने फ़रमाया कि मेरे पास बुराक लाया गया कि वह एक सफ़ेद जानवर है गधे से बड़ा व खच्चर से छोटा उसके पैर वहाँ तक पड़ते हैं जहाँ तक उसकी दृष्टि पड़े सो मैं उस पर सवार हुआ। वह मुझको ले गया। यहाँ तक कि मैं बैतुल मुकद्दस पहुँचा। वहाँ मैंने अपनी सवारी को उस हलके (घर) में बाँधा जिसमें और पैग़म्बर अपनी सवारियाँ बाँधते थे। **—जलालैन**

इसके पश्चात् आसमानों पर जाने का वर्णन है, द्वार खटखटाया जाता है, प्रश्न होता है कौन? हज़रत जिबरईल फरमाते हैं हज़रत मुहम्मद? पूछा जाता है। क्या वह पैग़म्बर हो गए? स्वीकारात्मक उत्तर मिलने पर द्वार खोल दिया जाता है। इस प्रकार विभिन्न आसमानों पर विभिन्न सम्मानीय पैग़म्बरों की भेंट के पश्चात्—

फिर मैं पहुँचा सदर तुलमुन्तहा (सर्वोच्च गन्तव्य स्थल) तक। उसके पत्ते ऐसे जैसे हाथी के कान और उसके फल ऐसे जैसे मटका। जब उस बेरी के वृक्ष को घेर लिया, अल्लाह के आदेश से उस वस्तु ने जिसने घेर लिया वह आश्चर्यचकित हो गया।.....आपने फ़रमाया मेरी ओर जो ईश्वरीय सन्देश मिला है वह प्रकट करने योग्य नहीं.......।

—जलालैन

हज़रत की उम्मत (समुदाय) पर पचास नमाजें फ़र्ज़ हुईं। हज़रत वापिस लौटे, परन्तु सम्मानीय पैग़म्बरों ने समझाया[१] कि यह बोझ तुम्हारे अनुयाइयों से सहन न हो सकेगा। हज़रत बार-बार ख़ुदा की सेवा में गए और वहाँ से लौटे अन्त में नमाज़ों की संख्या पाँच करा ली। हज़रत मूसा ने इसमें भी कमी कराने का परामर्श दिया तो फ़रमाया—

''मैं अनेक बार अपने रब के पास जा चुका हूँ अब मुझको लज्जा आती है। इस हदीस को बुख़ारी व मुस्लिम ने उद्धृत किया है और यह शब्द मुस्लिम के हैं।'' **—जलालैन**

इसमें सन्देह नहीं कि इस चमत्कारी यात्रा के विवरण कुरान के भाष्यों में लिखे हुए हैं। **स्वयं कुरान में मस्जिद हराम से मस्जिदे अकसा तक एक रात में जाना वर्णन किया है। वह उस समय**

---

१. **नोट**—यहाँ मूसा का वर्णन ।

चमत्कार था, परन्तु आज गुब्बारों व विमानों का युग है। इस समय इसे कौन चमत्कार मान सकता है ?

चमत्कार और भी बहुत से हैं, परन्तु यहाँ जैसे बहुतों में से कुछ नमूने के रूप में दिए हैं केवल कुछ चुने गए हैं। पाठक के लिए विचारणीय बात यह है कि क्या इन चमत्कारों से परमात्मा की किसी विशेष शक्ति का आभास होता है जो सृष्टि की कल को सामान्यतया चलाने से अधिक कठिन है? क्या इन चमत्कारों से परमात्मा के प्यारों की किसी विशेष महानता का आभास होता है जिससे उनकी पदवी बुद्धिमानों की दृष्टि में ऊँची हो? कहीं इन प्रकृति नियम के विरुद्ध कर्मों से यह तो प्रकट नहीं होता कि प्रकृति का नियम **बेदाद नगरी अन्यायी नगरी का सा कानून है** जो तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। यहाँ कर्मों की इतनी परवाह नहीं जितनी अपने प्यारों की प्रतिष्ठ व **अपमान** की है। लोगों ने एक मार्गदर्शक का कहना नहीं माना। बिना यह विचारे कि वह उपदेशक कैसे चरित्र का है। लोगों के लिए खून की वर्षा, नूह का तूफ़ान और न जाने क्या-क्या तैयार है। लोगों को अपना श्रद्धालु बनाने के लिए उपाय क्या-क्या प्रयोग किए जा सकते हैं। जादूगरी, डण्डे को साँप बना दिया। क्या इसी को धर्म व सत्य का प्रचार कहते हैं? इन खेलों से कहीं महान् गौरवशाली सच्चे कार्य सृष्टि-रचना में दिन-रात हो रहे हैं। क्या बिना बाप के सन्तान उत्पन्न होने में परमात्मा की महानता का अनुमान होता है और माता-पिता दोनों के होते सन्तानोत्पत्ति होने में परमात्मा का कोई हाथ नहीं? बूढ़े के बच्चा हो जाना परमात्मा का चमत्कार है और युवक के पुत्र होना परमात्मा की कारीगरी का खण्डन है? ऊँटनी ने हज़रत सालिह के व्यक्तित्व में किस बड़प्पन की वृद्धि की? सच्चाई यह है कि परमात्मा पर विश्वास की निर्भरता यदि नित्य प्रति के साधारण कार्यों व घटनाओं पर रखो तो आज भी स्थिर रहेगा कल भी और जो किसी बीते काल के चमत्कारी कथानकों पर निर्भरता ठहरी **तो जिस समय के लोग कहानियों से ऊपर उठकर वर्तमान परिस्थितियों के अभिलाषी हुए जैसे आज कल हैं उस काल में नास्तिकता ही नास्तिकता का सिक्का बैठ जाएगा**। मनुष्य चरित्र से पूजा जा सकता है तथा परमात्मा अपने नियमों की सुदृढ़ता व अटलता से। जिसे न उसके (मत के अनुयायी) अपने तोड़ सकें न पराये ही।

कुरान का उतरना

जो लोग परमात्मा के विश्वासी हैं और उसमें सत् ज्ञान की शिक्षा का गुण मानते हैं उनके लिए इल्हाम (ईश्वरीय सन्देश) पर विश्वास लाना आवश्यक है। **परमात्मा ने अपने नियमों का प्रदर्शन सृष्टि के समस्त कार्यों में कर रखा है**। इन नियमों का जितना ज्ञान मनुष्य को होता है उतना वह प्रकृति की विचित्र शक्तियों से **जो स्वाभाविक रूप से उसके भोग के साधन हैं,** उनसे लाभान्वित हो सकता है। **मनुष्य के स्वभाव की विशेषता यह है कि विद्या उसे सिखाने से आती है**। बिना सिखाए यह मूर्ख रहता है। अकबर के सम्बन्ध में एक किंवदन्ती है कि उसने कुछ नवजात बच्चे एक निर्जन स्थान में एकत्रित कर दिए थे और केवल गूँगों को उनके पालन पर नियत किया था। वे बच्चे बड़े होकर अपनी गूँगी वाणी से केवल वही आवाज़ें निकालते थे जो उन्होंने गूँगे मनुष्यों और वाणी रहित पशुओं के मुँह से सुनी थीं। **कुछ वन्य जातियाँ जो किसी कारण से एक बार पाशविकता की अवस्था में पहुँच गई हैं स्वयमेव कोई बौद्धिक विकास करती दिखाई नहीं देतीं जब तक सभ्य जातियाँ उनमें रहकर उन्हें सभ्यता की शिक्षा न दें। वे सभ्यता से अपरिचित रहती हैं**। अफ्रीका में कुछ गिरोह शताब्दियों से नंगे चले आते हैं यही दशा मध्य भारत की कुछ पहाड़ी जातियों की है। हाँ! एक बार इन जातियों के जीवन को बदल दो फिर वह उन्नति के राजमार्ग पर चल निकलती हैं। बच्चा भी विद्या का प्रारम्भ अध्यापक के पढ़ाने से प्रारम्भ करता है। परन्तु एक बार पढ़ने लिखने में निकल खड़ा हो फिर बौद्धिक विकास का असीम क्षेत्र उसके सन्मुख आ जाता है।

ज्ञान का स्रोत ही भाषा का आदि स्रोत है—मानव जाति इस समय बहुत-सी विद्याओं की स्वामी हो रही है। शासकों के सामने यह प्रश्न प्रायः आता रहा है कि इन विद्याओं का प्रारम्भ कहाँ से हुआ। मानवीय मस्तिष्क का उसकी बोल-चाल से बड़ा सम्बन्ध है। **सभ्यता की उन्नति भाषा की उन्नति के साथ-साथ होती है। व्यक्ति और समाजें दोनों जैसे-जैसे अपनी भाषा की उन्नति करती हैं**

त्यों-त्यों उनके मानसिक अवयवों का भी परिवर्तन व विकास होता जाता है। वास्तव में ज्ञान के प्रारम्भ और भाषा के प्रारम्भ का प्रश्न सम्मिलित है। मानव के ज्ञान का जो प्रारम्भिक स्त्रोत होगा वही भाषा का भी स्त्रोत माना जाएगा।

मनोविज्ञान व भाषा विज्ञान के विशेषज्ञों ने इस समस्या पर बहुत समय विचार विनमय किया है। **परमात्मा के मानने वाले सदा इस नियम के समर्थक रहे हैं कि भाषा और विद्याओं का आदि स्त्रोत समाधि द्वारा हुआ है**। परमात्मा ने अपने प्यारों की बुद्धियों में अपने ज्ञान का प्रकाश किया वह प्रारम्भिक ज्ञान था। वेद में इस अवस्था को यों वर्णन किया गया है—

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्।

—ऋग्वेद १०।७१।३

उपासनीय परमात्मा से (ऋषियों ने) भाषा का मार्गदर्शन पाया और ऋषियों में प्रविष्ट हुई भाषा को (लोगों ने) तत्पश्चात् प्राप्त किया।

इस घटना की ओर संकेत प्रत्येक धार्मिक पुस्तक में पाया जाता है। कुरान शरीफ़ में पाया है—

व अल्लमा आदमल अस्माआ कुल्लहा।

—(सूरते बकर आयत ३१)

बिना नामों के वार्तालाप कैसे? : अर्थात् सिखाये आदम को नाम सब वस्तुओं के।

यह और बात है कि इन आयतों में फ़रिश्तों का भी वर्णन है। उनसे अल्लाह ताला बातचीत करता है और आदम को श्रेष्ठता प्रदान की है कि उसे नाम सिखाए। **फ़रिश्तों के साथ बातचीत बिना नामों के कैसे होती होगी यह एक रहस्य है। यह भी एक पृथक् प्रश्न है कि आदम को श्रेष्ठता प्रदान करने का क्या कारण था?** और फ़रिशतों को इससे वञ्चित रखने का भी क्या कारण था? आदम को स्वर्ग से निकाले जाने की कहानी पिछले एक अध्याय में वर्णन की जा चुकी है। इस अवसर पर यह भी कहा गया है—

फ़तलक्का आदमामिन रब्बिही कलमातिन।

—(सूरते बकर आयत ३७)

फिर सीखे आदम ने ख़ुदा से वाक्य।

परिणामस्वरूप यह सिद्ध है कि **कुरान में इस्लाम का अस्तित्व सृष्टि के प्रारम्भ से माना है**। कोई पूछ सकता है कि जो शंका तुम आदम को इल्हाम की विशेष श्रेष्ठता दिए जाने के सम्बन्ध में करते हो क्या वही शंका वेद के ज्ञान प्राप्त करने वालों के बारे में नहीं की जा सकती? उन्हें क्यों इस वरदान के लिए विशेषतया चुना गया। **हम सृष्टि उत्पत्ति का क्रम अनादि मानते हैं। प्रत्येक नई सृष्टि में पुरानी सृष्टि के उच्चतम व्यक्तियों को ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने को चुना जाता है। यह उनकी नैतिक व आध्यात्मिक श्रेष्ठता का स्वभाविक फल होता है**। इस सिद्धान्त में उपरोक्त शंका का कोई स्थान नहीं। मुसलमानों को कठिनाई इसलिए है कि **वे अभाव से भाव की उत्पत्ति मानते हैं**। अब अभाव की दशा में विशेष वरदान नहीं दिया जा सकता, **क्योंकि बिना योग्यता व कर्म के विशेष फल प्राप्त नहीं कराया जा सकता जिसका विशेष फल ईश्वरीय ज्ञान हो।**

फिर भी मुसलमान इस सिद्धान्त के मानने वाले हैं कि **आदम ने अल्लाह ताला से नाम व पश्चात् वाक्य प्राप्त किए थे**। इस पर प्रश्न होगा कि क्या वह ज्ञान मानवीय आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त था? **कुरान में कहा है कि नाम सभी वस्तुओं के सिखाए गए। स्वभावतः विज्ञान, सदाचार व आध्यात्मिकता यह सभी विद्याएँ उन नामों व वाक्यों में सम्मिलित होंगे**। क्योंकि मानव भले ही उन्नति के किसी भी स्तर पर उत्पन्न किया गया हो उसकी आवश्यकताएँ **वैज्ञानिक, नैतिक व आध्यात्मिक सभी प्रकार की होंगी।**

मुसलमानों का एक और सिद्धान्त है कि अल्लाह ताला का ज्ञान लोहे महफ़ूज़ (आकाश में ज्ञान की सुरक्षित पुस्तक) में रहता है। सूरते वरुज में कहा है—

बल हुवा कुरानो मजीदुन फ़ीलोहे महफ़ूज।

—(सूरते बरुज आयत २१-२२)

बल्कि वह कुरान मजीद है लोहे महफ़ूज़ के बीच। इस आयत की व्याख्या के सन्दर्भ में तफ़सीरे जलालैन में लिखा है—

इस (लोहे महफ़ूज़) की लम्बाई इतनी जितना ज़मीन व आसमान

के मध्य अन्तर है और इसकी चौड़ाई इतनी जितनी पूर्व व पश्चिम की दूरी[१] और वह बनी हुई है सफ़ेद मोती से। —**जलालैन**

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

व ओ दर किनारे फ़रिश्ता अस्त व दर यमीने अर्श।

और उसे एक फरिश्ता है बगल में रखे, अर्श (अल्लाह का सिंहासन) के दाएँ ओर।

इस लोहे महफ़ूज़ को दूसरे स्थानों पर ''उम्मुल किताब'' (पुस्तकों की जननी) कहा है। दूसरे शब्दों में तमाम विद्या का आदि स्रोत। इस सिद्धान्त के होते यह प्रश्न अनुचित न होगा कि **क्या हज़रत आदम की शिक्षा इसी लोहे महफ़ूज़ से हुई थी या इसके बाहर से?** जब सारी वस्तुओं के नाम हज़रत आदम को सिखाए गए अपनी ज़ुबानी (बोली में अल्ला मियाँ ने सिखाए तो वह लोहे महफ़ूज़ ही पढ़ा दी होगी? दूसरे शब्दों में प्रारम्भ में पूर्ण ज्ञान ही दिया होगा। यदि ऐसा कर दिया तो हज़रत आदम के बाद कोई और पैग़म्बर भेजने की आवश्यकता नहीं रहती। मगर कुरान शरीफ़ में आया है—

वलकद आतैना मूसलकिताब व कफ़ैना मिन्बादिही ब रुसुलो।

—(सूरते बकर आयत ८७)

और वास्तव में मूसा को किताब दी और लाए बाद में रसूलों को।

व इज़ा जाआ ईसा बिलबय्यनाते।

—(सूरते ज़खरुफ़ आयत ६३)

और जब आया ईसा प्रकट युक्तियों के साथ

वलकद बअसना फ़ीकुल्ले उम्मतिन रसूलन।

—(सूरते नहल आयत ३६)

और भेजें हैं हर समुदाय के बीच रसूल।

यही नहीं इन पैग़म्बरों और उनके इल्हाम पर ईमान लाना हर

१. पूर्व व पश्चिम की दूरी क्या है? रोहतक वालों के लिए देहली पूर्व में है और मथुरा वालों के लिये पश्चिम में है। पूर्व व पश्चिम में कोई विभाजक रेखा नहीं है, अतः यह दूरी वाला कथन अज्ञानमूलक है। —'जिज्ञासु'

मुसलमान के लिए आवश्यक है।

अल्लज़ीन योमिनूना बिमाउन्ज़िला इलैका वमा उन्ज़िला मिनकबलिक। —(सूरते बकर आयत ४)

जो ईमान लाए उस पर जो तुझ पर उतारा गया और उस पर जो तुझसे पहले उतारा गया।

यह मुसलमानों को अनसूजा है—अब विचारणीय प्रश्न यह रहा कि **अगर हज़रत आदम का इल्हाम सही व पूर्ण था तो उसके पश्चात् दूसरे इल्हामों की क्या आवश्यकता पैदा हो गई। हज़रत मूसा व हज़रत ईसा की पुस्तकें आजकल भी मिलती हैं उन्हीं से हज़रत मुहम्मद ने काम क्यों न चला लिया?** इस पर मुसलमान दो प्रकार की सम्मितियाँ रखते हैं। पहली यह कि हज़रत आदम मानव विकास की पहली कक्षा में थे उनके लिए इस तरह का ही इल्हाम पर्याप्त था अब वह अपूर्ण है। यही दशा उनके बाद आने वाले पैग़म्बरों व उन पैग़म्बरों के इल्हामों की है। इस मान्यता पर विश्वास रखने का तार्किक परिणाम यह होना चाहिए कि **कुरान को भी अन्तिम इल्हाम स्वीकार न करें। क्योंकि यदि मानवीय विकास सही हो तो उसकी हज़रत मुहम्मद के काल या उसके पश्चात् आज तक भी समाप्ति तो हो नहीं गई।** फिर यह क्या कि इल्हाम का क्रम जो एक काल्पनिक मानवीय विकास के क्रम के साथ-साथ चलाया जाए। वह किसी विशेष स्तर पर पहुँचकर पश्चात्वर्ती क्रम का साथ छोड़ दे। **वास्तव में यह विकास का प्रश्न ही मुसलमानों का प्रारम्भिक विचार नहीं। यह विचार उन्हें अब सूझा है।** जो लोग इस समस्या के समर्थक हैं उन्हें धार्मिक विकास की मान्यता के अन्य विषयों पर भी विचार करना होगा। धार्मिक उन्नति के अर्थ यह हैं कि पहले मनुष्य का कोई धर्म नहीं था। या कम से कम अनेक ईश्वरों का मानने वाला था, निर्जीव शरीरों को पूजता या फिर धीरे-धीरे उन्नति करके ईश्वरीय एकता का मानने वाला हुआ। परन्तु कुरान में प्रत्येक पैग़म्बर के इल्हाम का एकेश्वरवाद को एक आवश्यक भाग माना गया है। प्रत्येक पैग़म्बर अपने सन्देश में यह मान्यता अवश्य सुनाता है। हज़रत मूसा का यह सन्देश दूसरी आयतों के अतिरिक्त **सूरते ताहा आयत ५० में लिखा है।** हज़रत ईसा का सूरते

मायदा **आयत १११, में हज़रत यूसुफ का आयत १०१ में**। इसी प्रकार अन्य पैग़म्बरों के भी प्रमाण दिए जा सकते हैं। कुरान के पढ़ने वाले इन कथनों से परिचित हैं। इन सन्देशों का आवश्यक और प्रमुख भाग ईश्वरीय एकता है। यदि यह विचार इससे पूर्व के सभी इल्हामों में स्पष्ट रूप से विद्यमान था तो फिर मुसलमानों के दृष्टिकोण से धार्मिक विकास के कोई अर्थ ही नहीं रहते। **वास्तव में इल्हाम और विकास दो परस्पर विरोधी मान्यताएँ हैं। यदि बौद्धिक विकास से धर्म में उन्नति हुई है तो इल्हाम की आवश्यकता क्या है**? मुसलमानों का एक और सिद्धान्त यह है कि पहले के इल्हामों में परिवर्तन होते रहे हैं। कुछ इल्हामी पुस्तकें तो सर्वथा समाप्त हो गई हैं और कुछ में हेर-फेर हो चुका है। चलो वाद के लिए मान लो कि ऐसा हुआ अब प्रश्न यह होगा कि **वे पुस्तकें ईश्वरीय थीं या नहीं थीं ? थीं और उसी परमात्मा की देन थीं जिसकी देन कुरान है तो क्या कारण है कि वे पुस्तकें अपनी वास्तविक अवस्था में स्थिर नहीं रहीं ? और कुरान रह गया या रह जाएगा ? हेर-फेर में दोष मनुष्यों का है या (नऊज़ोबिल्लाह) अल्लामियाँ का** ? अब मनुष्य भी वही हैं और अल्लामियाँ भी वही किसका स्वभाव समय के साथ बदल गया कि आगे चलकर ईश्वरीय पुस्तकों को इस हेरा-फेरी से सुरक्षित रख सकेगा जिनका शिकार पिछली पुस्तकें होती रहीं? मुसलमानों की मान्यता है कि अल्लाताला ने कुरान की रक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया है। **पूछना होगा कि पहली पुस्तक के सम्बन्ध में यह उत्तरदायित्व क्यों नहीं लिया गया ? क्या अल्लामियाँ का स्वभाव अनुभव से बदलता है ? या पहले जान बूझकर उपेक्षा बरती गई ? दोनों अवस्थाओं में ईश्वर की सत्ता पर दोष लगता है**। कुरान को दोष से बचाने के लिए अल्लामियाँ पर दोष लगाना इस्लाम के लिए बुद्धिमत्ता नहीं। या तो अल्ला मियाँ के ज्ञान में दोष मानना पड़ता है या उसकी इच्छा में। दोनों ही अनिवार्य दोष पूर्ण अवस्थाएँ हैं दोनों **कुफ़्र (ईश्वरीय विरोधी) हैं**।

बात यह है कि सृष्टि के प्रारम्भ में इल्हाम मान लेने के पश्चात् किसी भी बाद के इल्हाम को स्वीकार करना विरोधाभास का दोषी बनना पड़ता है। **इल्हाम और उसमें हेर-फेर ? इल्हाम और उसमें परिवर्तन ? इल्हाम एक हो सकता है। वह पूर्ण होगा। जैसा कि**

परमात्मा पूर्ण है। बौद्धिक विकास का प्रश्न आए दिन की ऐतिहासिक खोजों से झूठा सिद्ध हो रहा है। प्रत्येक महाद्वीप में पुराने खण्डहरात की ख़ुदाई से सिद्ध हो रहा है कि वर्तमान पीढ़ी से शताब्दियों पूर्व प्रत्येक स्थान पर ऐसी नस्लें रह चुकी हैं जो सभ्यता व संस्कृति के क्षेत्र में वर्तमान सभ्य जातियों से यदि बहुत आगे न थीं तो पीछे भी न थीं। इस खोज का आवश्यक परिणाम धर्म के क्षेत्र में यह विश्वास है कि इल्हाम प्रारम्भ में ही पूर्ण रूप में आया था। यदि परमात्मा अपने किसी इल्हाम का रक्षक है तो उस प्रारम्भिक इल्हाम का भी पूर्ण रक्षक होना चाहिए था। उसके ज्ञान व आदेश में निरस्त होने व हेरा-फेरी की सम्भावना नहीं।

कुरान के इल्हाम होने पर एक और शंका यह उठती है कि यह अरबी भाषा में आया है—

व कज़ालिका अन्ज़ल नाहो हुकमन अरबिय्यन।

—(सूरते रअद आयत ३७)

और यह उतारा हमने आदेश अरबी भाषा में।

क्या अरबी भाषा लौहे महफ़ूज़ की भाषा है। यदि है तो उसे मानव समाज की पहली भाषा होना चाहिए था जिसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं। अन्य भाषाओं के उत्पत्ति स्थल अरबी भाषा के शब्दों को कोई भाषा विज्ञान का विशेषज्ञ स्वीकार नहीं करता है। **फिर हज़रत मूसा और ईसा को इबरानी भाषा में इल्हाम मिला था** यदि वह भी लौहे महफ़ूज़ की नकल थी तो लौहे महफ़ूज़ की भाषा एक नहीं रही। भाषाओं की जननी अरबी के स्थान पर इबरानी को मानना पड़ेगा। परन्तु प्रमाण न इबरानी के प्रथम भाषा होने का मिलता है और न अरबी भाषा होने का। यदि कुरान का इल्हाम समस्त मानव समाज के लिए होता तो उसकी भाषा ऐसी होनी चाहिए थी कि सारे संसार को उसके समझने में बराबर सरलता हो। किसी का तर्क है कि अन्य जातियाँ अनुवाद से लाभ उठा सकती हैं तो निवेदन है कि अनुवाद और मूल भाषा में सदा अन्तर रहता है। जो लोग शाब्दिक इल्हाम के मानने वाले हैं उनके लिए इल्हाम के शब्द सदा अर्थों का भण्डार बने रहते हैं जिनका स्थान और तो और उसी भाषा का किया अनुवाद भी नहीं ले सकता। अरबी भाषा

इल्हाम के समय भी तो सारे संसार की भाषा नहीं थी। **जैसे वेद की भाषा सृष्टि के प्रारम्भ में सभी मनुष्यों की भाषा थी और संसार में प्रचलित बोलियाँ वेद की भाषा से मिली जुली हैं।** भाषा शास्त्रियों की यह सम्मति है कि **मानव जाति के पुस्तकालय में वेद सबसे पुरानी पुस्तक है (मैक्समूलर) और उसकी भाषा वर्तमान भाषाओं की जननी है**। वास्तव में कुरान का अपना प्रारम्भिक विचार केवल अरब जातियों का सुधार करना था। इसीलिए कुरान में आया है—

लितुन्जिरा कौमम्मा अताहुम मन्निज़ीरिन मिनकबलिका लअल्लकुम यहतदून। —(सूरते सिजदा आयत ३)

ताकि तू डरा दे उस जाति को नहीं आया उनके पास डराने वाला तुझसे पूर्व जिससे उन्हें सन्मार्ग मिले।

यह जातियाँ अरब निवासी हैं। हज़रत मुहम्मद के सामने ईसाई और यहूदियों की मान्यता थी कि वह पुस्तकों के मालिक हैं और पैग़म्बरों के अनुयायी हैं। अरब निवासी यह दावा नहीं कर सकते थे। हज़रत मुहम्मद के कारण उनकी यह अभिलाषा भी पूरी हो गई। कोई कह सकता है कि हज़रत मुहम्मद के प्रकट होने से पूर्व क्या अरब वासियों को बिना ज्ञान या शिक्षा के रखा गया था। कुरान शरीफ़ की भाषा से तो यही ज्ञात होता है। एक और स्थान पर लिखा है—

ओहेना इलैका कुरानन अरबिय्यन लितुन्ज़िरा उम्मिल कुरा व मन होलहा। —(सूरते सिजदा रकुअ १)

उतारा हमने कुरान अरबी भाषा का कि तू भय बताए बड़े गाँव को और उसके पास-पड़ौस वालों को।

बड़े गाँव से तात्पर्य प्रत्येक भाष्यकार के अनुसार 'मक्का' है। अरब वासी जिनमें मुहम्मद साहब का जन्म हुआ उनके लिए मक्का सबसे बड़ा गाँव था। कुरान के शब्दों के अनुसार हज़रत मुहम्मद के सुपुर्द यह सेवा सौंपी गई कि वह मक्का व उसके पास पड़ौस में इस्लाम का प्रचार करें।

दूसरे समुदायों के लिए तो और पैग़म्बर आ चुके थे। अरबवासियों के लिए इल्हाम की आवश्यकता थी। सो हज़रत के सन्देश से पूरी हो गई। कुरान की उपरोक्त आयतों का यदि कोई अर्थ है तो यही।

कुरान की मान्यता तो यह भी विदित होती है कि धर्म प्रत्येक जाति का पृथक्-पृथक् है। यह इस्लाम के लोगों की ज़बरदस्ती है कि जो मज़हब अरब के लिए निश्चित किया गया है उसे अन्य देशों में जो उसे अनुकूल नहीं पाते व्यर्थ ही में उसका प्रचार कर रहे हैं। इसीलिए लिखा है—

लिकुल्ले उम्मतन जअलना मन्सकन, हुमनासिकूहो।

—(सूरते अलहज्ज रकूअ ९)

प्रत्येक समुदाय के लिए बनाई है प्रार्थना पद्धति और वह उसी प्रकार प्रार्थना करते हैं उसको।

यही नहीं हमारी इस आपत्ति को परमात्मा का न्याय समर्थन करता है कि वह अपना इल्हाम ऐसी भाषा में प्रदान करें जिसके समझने में मनुष्य मात्र को बराबर सुविधा हो। स्वयं कुरान शरीफ़ स्वीकृति देता है। चुनांचे लिखा है—

वमा अरसलनामिनर्रसूले इल्ला बिलिसाने कौमिही।

—(सूरते इब्राहिम आयत ४)

और नहीं भेजा हमने कोई पैग़म्बर परन्तु साथ भाषा अपनी के।

कुरान का यह आशय है कि वह केवल अरबवासियों के लिए निर्धारित है। इससे अधिक स्पष्टता से और किस प्रकार वर्णन किया जा सकता है।

समय पाकर निरस्त हो जाने की साक्षी भी स्वयं कुरान में विद्यमान है। अतएव फ़रमाया है—

बलइनशअना लिनज़हबन्ना बिल्लज़ी औहेना इलैका।

—(सूरते बनी इसराईल रकूअ १०)

और यदि हम चाहें (वापिस) ले जाएँ वह चीज़ कि वही (सन्देश) भेजी है हमने तेरी ओर।

कुरान के लिये नया पाठ क्या विशिष्ट था?—वास्तव में इस्लाम मानने वालों के इल्हाम के सिद्धान्त के तार्किक निष्कर्ष का वह स्वयं समर्थक नहीं। यदि यह मान लो कि प्रारम्भिक इल्हाम के पश्चात् फिर इल्हाम होने की सम्भावना है तो यह भी मानना पड़ेगा कि कोई इल्हाम पूर्ण नहीं होता। चाहे पहला इल्हाम अपने मानने वालों की उपेक्षा वृत्ति के कारण नष्ट हो जाए चाहे उनके दुराशय के

कारण उसमें हेरा-फेरी हो जाए। प्रत्येक इल्हाम में इसकी बराबर सम्भावना रहेगी, क्योंकि परमात्मा व मनुष्य जिन दो के मध्य इल्हाम का सम्बन्ध है वह प्रत्येक काल में एक से रहते हैं। परमात्मा यदि पहले इल्हाम का उत्तरदायी न रहा तो किसी दूसरे का भी नहीं होगा। यदि एक आदेश के निरस्त हो जाने की सम्भावना है तो उसके पश्चात् आने वाले अन्य इल्हाम भी इस सम्भावना से बाहर नहीं हो सकते। हमें आश्चर्य है कि अल्ला मियाँ के आदेश के निरस्त होने की सम्भावना ही क्यों? मौलाना लोग एक उदाहरण देते हैं कि जैसे एक कक्षा के विद्यार्थी ज्यों-ज्यों उन्नति करते हैं, त्यों-त्यों उनके पाठ्य पुस्तकों में भी परिवर्तन होता रहता है। इसी प्रकार हज़रत आदम के युग के लोग जैसे पहली कक्षा के विद्यार्थी थे अब के मानव अगली कक्षाओं में आ चुके हैं। उनके लिए इल्हाम पहले की अपेक्षा उच्चस्तर का होना चाहिए। हम इस तर्क का उत्तर ऊपर दे चुके हैं कि कुरान का सब से उच्च आदेश परमात्मा की **एकता के सम्बन्ध में है तथा वह पूर्व काल के पैग़म्बरों के इल्हाम में भी स्वयं कुरान के शब्दों में विद्यमान है। फिर वह कौन-सा नया पाठ है जो कुरान के लिए ही विशिष्ट था**? और वह पहले के पैग़म्बरों के इल्हाम में भी स्वयं कुरान के शब्दों में पाई जाती है। यहाँ हम इस उदाहरण का उत्तर तर्क से देंगे। समय बीतने पर पाठ्य पुस्तक बदलने की आवश्यकता उस समय होती है जब विद्यार्थी विभिन्न कक्षाओं में **एक रहें वही कक्षा उन्नति करती आगे बढ़ती जाए तो उन्हें निश्चय ही प्रत्येक कक्षा में नई शिक्षा देनी होगी। यदि मुसलमान पुनर्जन्म मानते होते कि इस समय भी वही मनुष्य जीवित अवस्था में हैं जो हज़रत आदम के समय में थे तो इस दृष्टिकोण से परिवर्तन की आवश्यकता की कल्पना की जा सकती थी।** परन्तु मुसलमानी सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक नस्ल नई उत्पन्न की जाती है। **प्रत्येक नस्ल अपने से पहली नस्ल के ज्ञान से वैसी ही अनजान होती है जैसे स्वयं पहली नस्ल प्रारम्भ में थी।** उसे नया पाठ पढ़ाने के क्या अर्थ हुए? सच्चाई यह है कि जैसा हम ऊपर निवेदन कर चुके हैं कि इल्हाम व विकास दो परस्पर विरोधी मान्यताएँ हैं। इल्हाम मानने वालों को प्रारम्भ में ही पूर्ण इल्हाम का उतरना स्वीकार करना पड़ेगा। प्रारम्भ में भाषाओं की विपरीतता का

प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि स्वयं कुरान कहता है—

मा कानन्नास इल्ला उम्मतन वाहिदतन फख्तलिफू।

—(सूरते यूनिस रकूअ २)

सृष्टि के आरम्भ में (सब) लोग एक ही समुदाय के हैं बाद में पृथक् (समुदाय) बने।

उस समय भी ईश्वर ने आदम द्वारा इल्हाम भेजा यह मुसलमानों की मान्यता है। और वह इल्हाम कुरान के शब्दों में—

व इन्नहू फ़ीउम्मिल किताबे लदैनालि अल्लहुन हकीम।

और वह (ज्ञान) है उम्मुल किताब के बीच उच्चस्तर का कार्यकौशल भरा।

'उच्चस्तर का कार्यकौशल भरा' शाब्दिक अर्थ है, यही परिभाषा वेद भगवान की है। वेद के अर्थ हैं कार्यकौशल भरा ज्ञान, भगवान् के अर्थ हैं उच्चस्तर।

धर्मों के पारस्परिक मतभेदों का **एक कारण यह है कि नया मत पुराने मत को निरस्त कहकर उसका विरोध करता है और पुराना मत नए मत को अकारण बुरा बताता है**। नए पैग़म्बर के अपने दावे के अतिरिक्त उसके पैग़ाम के ईश्वर की ओर से होने की साक्षी भी क्या है? स्वयं कुरान ने कई नबिओं (ईश्वरीय दूतों) की ओर संकेत किया है—

व मन अज़लमा मिमनिफ़्तरा अलल्लाहि कज़िबन औ काला ऊही इलय्या वलम यूहा इलैहे शैउन व मन काला सउन्ज़िलो मिसला मा उंज़िलल्लाहो। —(सूरते इनआम आयत ९३)

और उस व्यक्ति से अधिक अत्याचारी कौन है जो ईश्वर पर ही दोष मढ़ता है और कहता है मेरी ओर इल्हाम उतरा है परन्तु वही (सन्देश) उसकी ओर नहीं की गई। मैं भी उतारता हूँ उसी प्रकार (सन्देश) जो ईश्वर ने उतारा।

कुरान के भाष्यकारों ने इसका संकेत **मुसैलमा अबातील व इब्ने ईसा** की ओर माना है जिन्होंने हज़रत मुहम्मद के जीवनकाल में पैग़म्बरी का दावा किया था। अब विद्वानों के पास ऐसा कौन-सा उदाहरण है जिससे पैग़म्बरी के झूठे व सच्चे दावा करने वालों की पहचान हो सके जिससे सच्चे पैग़म्बर और झूठे नबी में अन्तर करे?

दोनों अपने आप को अल्लाह की ओर से होने का दावा करते हैं। कुरान को ईश्वरीय पुस्तक न मानने वालों की स्वयं कुरान की आयतों में बहुत आलोचना व उठा-पटक की हैं। उन पर लानतें (दुष्नाम) बरसाई हैं और पुराने समुदायों की कहानियाँ सुना-सुनाकर डराया है कि जिन दुष्परिणामों को पूर्ववर्ती पैग़म्बरों को न मानने वाले पहुँचाए गए हैं वही दशा तुम्हारी होगी। यही बात मुसैलमा अबातील व इब्ने ईसा अपने इल्हाम के दावे में प्रस्तुत करते होंगे। इसलिए यह धमकियाँ भी कुरान के इल्हामी होने का प्रमाण नहीं। सम्भव है कोई मुसैलमा अबातील और इब्ने ईसा की पुस्तकों के नष्ट हो जाने और कुरान के बचे रहने को कुरान के श्रेष्ठ होने को कुरान की महिमा बताए। सो शेष तो ऐसी पुस्तकें भी हैं जो चरित्रहीनता का दर्पण है जिनका पठन-पाठन का साहित्य लाभ केवल दुष्चरित्रों व समाज को भ्रष्ट करने वाले लोगों का मनोरंजन भरा है। इससे यह सिद्ध नहीं होता कि इन पुस्तकों की जड़ में ईश्वरीय सन्देश है। कुरान में अपने सम्बन्ध में यह वाद भी प्रस्तुत किया गया है—

व इन कुन्तुमफ़ी रैबिनमिम्मा नज़्ज़लना अला अब्दिना फ़ातूबि सूरतिन मिन्मिसलिह व अदऊ शुहदाउकुम मिन इनिल्लाहे इन कुन्तुम सादिकीन फ़इनलम तफ़अलू वलन तफ़अलू।

—(सूरते बकर आयत २३)

और यदि तुम्हें सन्देह है उससे जो उतारा हमने अपने बन्दे के ऊपर तो लाओ एक सूरत उसके मुकाबिले की और अपने साक्षियों को बुलाओ। परमात्मा के अतिरिक्त यदि तुम सच्चे हो फिर यदि न करो और न कर सकोगे।

इस आयत का उद्धरण हम किसी पूर्व अध्याय में कर चुके हैं। कोई व्यक्ति अपने लेख के सम्बन्ध में यह दावा करे कि उस जैसा लेख नहीं हो सकता और कल्पना करो कि उस जैसा लेख दावेदार के समय में कोई न बना सके तो क्या उसके इस निरालेपन से ही वह अल्लाह मियाँ की ओर से मान लिया जायेगा? **यदि ऐसा है तो प्रत्येक काल का बड़ा लेखक व महाकवि अवश्य ईश्वरीय दूत समझा जाया करे**। ईश्वरीय सन्देश होने की यह कोई दार्शनिक युक्ति नहीं। फिर भी हम इस दावे में प्रस्तुत अनुपमता की वास्तविकता

पर विचार कर लेना चाहते हैं। क्या यह अनुपमता भाषा सौष्ठव के आधार पर है जैसा मौलना सनाउल्ला साहब का विचार है? सर सैयद अहमद—जैसा विचार हम इस पुस्तक के अन्तिम अध्याय में प्रस्तुत करेंगे कुरान की भाषा सौष्ठवता के समर्थक नहीं, वे अनुपम नहीं मानते। यही दशा **अलामा शिबली नौमानी की** थी। स्वयं कुरान के भाष्यों में एक भाष्य **मौलाना फ़ैजी** का है। उसका नाम **सवाति अल इल्हाम है। वह सारी की सारी बिन्दु रहित पुस्तक है।** साहित्य रचना का यह भी तो कमाल है कि पूरी की पूरी पुस्तक बिना बिन्दु के लिख दी जाए। क्या इसलिए कि उस बिन्दु रहित भाष्य जैसी अनुपम पुस्तक लिखना अन्य लेखकों को असम्भव है उस भाष्य को ईश्वरीय सन्देश मान लिया जाए? इस दावे के सम्बन्ध में सूरते लुकमान की आयत ३ पर तफ़सीरे हुसैनी की टिप्पणी निम्न है—

आवुरदा अन्द कि नसरबिन हारिस लअनुल्लाहे अलैहे ब तिजारत ब बलादे फ़ारस आमदा बूद व किस्साए रुस्तम व असफ़न्द यार बख़रीद व मुअर्रब साख़्ता बमक्का बुर्द व गुफ़्त कि ईं कि अफ़साना आवुरदा अम शीरींतर अज़ अफसाना हाय मुहम्मद........।

कहा जाता है कि नसरबिन हारिस ईश्वरीय शाप हो उस पर व्यापार के लिए फ़ारस देश के शहरों में गया वहाँ उसने एक पुस्तक असफ़न्दयार की कहानी खरीदी और उसे अर्बी में कर दिया व कहने लगा कि यह कहानी जो मैं लाया हूँ मुहम्मद की कहानियों से अधिक रुचिकर है........।[१]

मआलिमु त्तंजील में यही कहानी सूरते लुकमान आयत ३ के सम्बन्ध में वर्णन करते हुए लिखा है—

यतरकूना इस्तमा अलकुरान।

लोगों ने कुरान का सुनना छोड़ दिया।

अत: भाषा सौष्ठवता या भाव गम्भीरता का कमाल भी किसी पुस्तक के ईश्वरीय होने की निर्णायक युक्ति नहीं। इस विवाद में

१. मूल में उपरोक्त फ़ारसी उद्धरण के अर्थ छूट गये थे। श्री पं० शिवराज सिंह जी ने दे दिये सो अच्छा किया। —'जिज्ञासु'

मतभेद होने की आशंका है और जब यह मान्यता सभी मतवादियों की है कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वरीय ज्ञान (वही) परमात्मा की ओर से हुई थी व वही मानव के ज्ञान का आदि स्रोत है तो इस पर व्यर्थ में परिवर्तन व निरस्तता के दोष लगाकर ईश्वरीय सन्देश का अपमान करना कहाँ तक ठीक है, अपितु उसी सन्देश पर सब को एकमत हो जाना कर्त्तव्य है। वह इल्हाम वेद है।[१]

यह इल्हाम लोहे महफ़ूज़ में है—अर्थात् उसकी अनादि व अनन्त काल तक के लिए रक्षा की गई है। फलतः पाश्चात्य विद्वानों की भी सम्मति जिन्होंने वेद का अध्ययन किया है यही है कि वेद में हेरा-फेरी नहीं हुई। प्रोफ़ेसर मैक्समूलर अपनी ऋग्वेद संहिता भाग १ भूमिका पृष्ठ २७ पर लिखते हैं—

हम इस समय जहाँ तक अनुसंधान कर सकते हैं हम वेदों के सूक्तों में विभिन्न सम्प्रदायों के होने का इस शब्द में प्रचलित अर्थों में वर्णन नहीं कर सकते।

प्रोफ़ेसर मैकडानल अपने संस्कृत साहित्य के इतिहास में पृष्ठ ५० पर लिखते हैं—

इतिहास में अनुपम—परिणाम यह है कि इस वेद की रक्षा ऐसी पवित्रता के साथ हुई है जो साहित्य के इतिहास में अनुपम है।

कुरान ने अपने सम्बन्ध में तो कह दिया कि इसे वापिस भी लिया जा सकता है। यह अरबी भाषा में है। एक ऐसी जाति के लिए है जिसमें पहले पैग़म्बर नहीं आया। इसका उद्देश्य मक्का व उसके पास-पड़ौस की सामयिक सुधारना है और यही स्वामी दयानन्द व उसके अनुयायियों का दावा है। उम्मुल किताब (पुस्तकों की जननी) जिसको वेद ने अपनी चमत्कारिक भाषा में वेद माता कहा है वही वेद है जो सृष्टि के आरम्भ में दिया गया था और जो सब प्रकार की मिलावटों एवं बुराईयों व हटावटों से पवित्र रहा है। **भला यह भी**

१. सब आस्तिक मत ईश्वर को पूर्ण (PERFECT) मानते हैं। उसकी प्रत्येक कृति दोषरहित पूर्ण है। मानव, पशु, पक्षी सभी जैसे पूर्वकाल में जन्म लेते थे वैसे ही आज तथा आगे भी वैसे ही होंगे फिर प्रभु के ज्ञान में परिवर्तन व हेर-फेर का प्रश्न क्यों? —'जिज्ञासु'

कोई मान सकता है कि पुस्तकों की माता का जन्म तो बाद में हुआ हो और बेटियाँ पहले अपना जीवन गुज़ार चुकी थीं?

इल्हाम के सम्बन्ध में हमारी मान्यता यह है कि परमात्मा ऋषियों के हृदयों में अपने ज्ञान का प्रकाश करता है यही एक प्रकार वही (ईश्वरीय ज्ञान) का है[१] परमात्मा सर्वव्यापक है उसके व उसके प्यारों के मध्य किसी सन्देशवाहक की आवश्यकता नहीं परन्तु कुरान का इल्हाम एक फ़रिश्ते के द्वारा हुआ है जिसने हज़रत मुहम्मद से प्रथम भेंट के समय कहा था—

इकरअ बिइस्मे रब्बिका।

पढ़ अपने रब के नाम से।

एक गम्भीर प्रश्न—दूसरे शब्दों में कुरान की शिक्षा बुद्धि के द्वारा नहीं वाणी के द्वारा दी गई है। **यह इल्हाम बौद्धिक नहीं वाचक है**। हज़रत मुहम्मद साहब को तो जिबरईल की वाणी (भाषा) में इल्हाम मिला। हज़रत जिबरईल को **किसकी वाणी (भाषा) से मिला होगा**? अल्लाह ताला तो सर्वव्यापक है उसके अंग नहीं हो सकते। स्वामी दयानन्द उचित ही लिखते हैं कि—प्रारम्भ में अलिफ़ बे पे की शिक्षा किसने मुहम्मद साहब को दी थी? आशय यह है कि यदि इल्हाम वाणी के उच्चारण से प्रारम्भ होता है तो स्वयं इल्हाम देने वाला अध्यापक बनकर पहले इन शब्दों का उच्चारण करता है जो उसके पश्चात् देने वाले की वाणी पर आए हैं तो **अल्लाह ताला यह इल्हाम अपने फ़रिश्ते की वाणी पर किस प्रकार पहुँचाता है?** यदि इस प्रश्न का उत्तर यह है कि अल्लाह ताला फ़रिश्ते की बुद्धि में अपनी बात प्रकट करता है। क्योंकि वह वहाँ उपस्थित है तो क्या वह पैग़म्बर के दिल में विद्यमान नहीं है कि वहाँ तक सन्देश पहुँचाने के लिए दूसरे दूत का प्रयोग करता है? सर्वव्यापक न भी हो जैसे कि हम किसी पिछले अध्याय में बता चुके हैं कि कुरान के कुछ वर्णनों

१. ईश्वरीय ज्ञान के प्रकाश अथवा आविर्भाव का यही प्रकार है और इस्लाम भी अब मानव हृदय में ईश्वरीय ज्ञान के प्रकाश के वैदिक सिद्धान्त को स्वीकार करता है। डॉ० जैलानी ने भी अपनी एक पुस्तक में इसे स्वीकार किया है। फ़रिशते द्वारा वही लाने को भी मानना उसकी विवशता है। —'जिज्ञासु'

के अनुसार वह सीमित है तो भी जिस शक्ति के सहारे अर्श पर बैठा-बैठा सारे संसार का काम चलाता है उसी से पैग़म्बर के हृदय में इल्हाम क्यों नहीं डालता? फ़रिश्ता अल्लाह व पैग़म्बर के मध्य एक अनावश्यक साधन है। यह दोष है इस्लामी इल्हाम के प्रकार में।

कुरान को परमात्मा की वाणी मानने में एक बात यह भी बाधक है कि परमात्मा की वाणी अटल होनी चाहिए उसमें परिवर्तन की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। परन्तु कुरान में स्पष्ट लिखा है कि उसके आदेशों में परिवर्तन होता रहा है। जैसे सूरते बकर रुकुअ १३ में लिखा है—

मानन्सरवा मिन आयतिन औ नुन्सिहाते बिख़ैरिन मिन्हा ओमितलहा।

जो निरस्त कर देते हैं हम आयतों को या भुला देते हैं हम लाते हैं उसके समान या उससे उत्तम।

कहानियाँ भी अनादि क्या ?—मुसलमानों का दावा तो यह है कि कुरान के मूल पाठ की रक्षा का उत्तरदायित्व स्वयं अल्लाह मियाँ ने अपने ऊपर ले रखा है, परन्तु कुरान न केवल निरस्तीकरण की सम्भावना प्रकट करता है, अपितु भूल जाने की भी। चलो थोड़ी देर के लिए मान लो कि कुरान का कोई वचन निरस्त नहीं होता और यह वही कुरान है जो अनादि काल से लोहे महफ़ूज़ पर लिखा हुआ है तब इन ऐतिहासिक कथाओं का क्या कीजिएगा। जो कुरान में लिखे हुए हैं। जैसे सूरते यूसुफ़ में यूसुफ़ और जुलेख़ा की कहानी है—

व रावदतहू अल्लती हुवा फ़ी बतहा अन नफ़िसही व ग़ल्ल कतेल अल बवाबा व कालत हैतालका काला मआज़ल्लाहे, इन्नहू रब्बी अहसना मसवाए इन्हू लायुफ़लिज़ोल ज़ालिमून।

—(सूरते यूसुफ आयत २३)

और फुसला दिया उसको उस स्त्री ने कि वह उसके घर के बीच था उसकी जान से और बन्द किये द्वार और कहने लगी आओ, कहती हूँ मैं तुझको, कहा, पनाह पकड़ता हूँ मैं अल्लाह की वास्तव में वह पालन करने वाला है मेरा, अच्छी तरह से उसने मेरा कहना किया। सचमुच नहीं यशस्वी बनते अत्याचारी लोग।

यदि यह ज्ञान नित्य है तो स्पष्ट है कि हज़रत यूसुफ आरम्भ से

ही पवित्रात्मा नियत किए गए और जुलैखा आरम्भ से ही अत्याचारिणी ठहरी, अब अल्लाह मियाँ का लेख भाग्य लेख है वह टल नहीं सकता। कोई पूछे ऐसा निर्धारण करने के पश्चात् इल्हाम की आवश्यकता क्या? पापी लोग आरम्भ से ही पापी बन चुके वे सुधारे नहीं जा सकते और पवित्रात्मा प्रारम्भ से पवित्रात्मा बनाए जा चुके उन्हें सुधार की शिक्षा की आवश्यकता नहीं।

कुरान का आना व्यर्थ।

यही दशा उस बुढ़िया की है जो लूत के परिवार में से नष्ट हुई थी, फ़रमाया है—

इज़्ानजय्यनाहो व अहलहू अजमईन इल्ला अजूज़न फ़िल ग़ाबिरीन।

—(सूरते साफ़्फ़ात आयत १३४-१३५)

जब हमने मुक्ति दी उनको और उनके सारे परिवार को एक बुढ़िया के सिवाय जो ठहरने वालों में थी।

हज़रत नूह का लड़का और पत्नी, हज़रत मुहम्मद के चाचा अबू लहब आदि ऐसे व्यक्तियों की चर्चा कुरान में है जिन्हें कुरान यदि नित्य है तो अज़ल (अनादि काल) से ही दौज़ख़ के लिए चुन लिया गया और पैग़म्बरों व उनके अन्य परिवार जनों को बहिश्त में स्थान मिल चुका है। कुरान के इल्हाम का लाभ किसके लिए है?

इससे हमने सिद्ध कर दिया कि न तो मुसलमानों का माना हुआ इल्हाम का प्रकार ठीक है, न इल्हामों के क्रम की मान्यता दोष रहित है। न कुरान इस सिद्धान्त के अनुसार अन्तिम सन्देश होने का पात्र ही है, न उसकी भाषा ऐसी है जो संसार भर की सभी जातियों की सम्मिलित भाषा हो, **वेद की भाषा सृष्टि के आरम्भ में तो विश्वभर की सांझी बोली थी ही इस समय भी उस पर समस्त संसारवासियों का अधिकार सम्मिलित रूप से उसी प्रकार है कि वह प्रत्येक जाति की वर्तमान भाषा का प्रारम्भिक स्त्रोत है व उन अर्थों का भण्डार है जिसका प्रकटीकरण बाद की बिगड़ी हुई या बनी हुई भाषाओं के कोष के द्वारा हो रहा है। वर्तमानकाल की प्रचलित भाषा की धातुएँ वेद की भाषाओं की धातुएँ हैं, जिनके योगिक, अर्थात् कोष के अर्थों के कारण वेद की वाणी अर्थों का असीम भण्डार बनी हुई है।** फिर वेद में ऐतिहासिक कथाएँ व घटनाएँ भी

नहीं हैं जैसे कुरान में हैं। यदि कुरान अल्लाह मियाँ की प्राचीन वाणी है व वह निरस्त न हो सके तो उसके वर्णित स्थायी नित्य पापी व पवित्रात्मा प्रारम्भ से ही पापी व पवित्रात्मा घड़े गए हैं। उनका स्वभाव बदल नहीं सकता। **इल्हाम से लाभान्वित कौन होगा ?**[१]

वास्तव में कुरान नित्य वाणी नहीं है, हमने स्वयं कुरान के प्रमाणों से सिद्ध किया है कि कुरान स्वयं को अरबवासियों के लिए जो उस समय इल्हाम के वरदान से वंचित थी। उस समय की आचार संहिता बताता है और इस बात की सम्भावना भी प्रकट करता है कि उसे वापिस ले लिया जाये। उम्मुल किताब या वेद माता की ओर संकेत है कि वह उच्चकोटि का ज्ञान भण्डार है जो सदा के लिए सुरक्षित है अत्यन्त अर्थपूर्ण है।

१. जो प्रश्न महर्षि दयानन्द जी ने एक से अधिक बार उठाया फिर हमारे शास्त्रार्थ महारथी उठाते रहे। पं० चमूपति जी ने इस ग्रन्थ में इसे अत्यन्त गम्भीरता से उठाते हुए बार-बार उत्तर माँगा है। वही प्रश्न अब इससे भी कहीं अधिक तीव्रता व गम्भीरता से मुस्लिम विचारक पूछ रहे हैं। **'दो इस्लाम'** पुस्तक के माननीय लेखक का भी यही प्रश्न है। आप यह कहिये कि पं० चमूपति उसकी वाणी से मुसलमानों से पूछते हैं, ''इस हदीस घड़ने वाले ने यह न बताया कि जब एक व्यक्ति के कर्म, भोग, सौभाग्य व दुर्भाग्य का निर्णय उसके जन्म से पहले ही हो जाता है तो फिर अल्लाह ने मानवों के सन्मार्ग दर्शन के लिए इतने पैग़म्बरों को क्यों भेजा ? असंख्य जातियों का विनाश क्यों किया ?'' दो इस्लाम पृष्ठ ३०६। आगे लिखा है, ''चोर के हाथ काटने का आदेश क्यों दिया ? जब स्वयं अल्लाह उसके भाग्य में चोरी लिख चुका था।'' —'जिज्ञासु'

सज़ा व जज़ा
(दण्ड व पुरस्कार)

प्रत्येक मत में सदाचार की आधारशिला दण्ड व पुरस्कार की मान्यताओं पर रखी गई है। मानवीय न्याय जैसे ईश्वरीय दण्ड की एक प्रतिलिपि है। मानवीय न्याय में मानवीय दुर्बलताओं के कारण पथ-भ्रष्टता पाई जाती है। परन्तु ईश्वरीय न्याय में दोष की सम्भावना नहीं। जैसे परमात्मा पूर्ण है वैसे ही उसका न्याय भी पूर्ण है।

कर्मफल सिद्धान्त क्या ? व क्यों ?—परमात्मा में न्याय के साथ-साथ दया का गुण भी पाया जाता है। इन दो गुणों का संगतिकरण कैसे हो ? ऋषि दयानन्द ने परमात्मा के न्याय को दया का समानार्थक कहा है। परमात्मा की **इच्छा में दया है व कर्म में न्याय**, परमात्मा दण्ड व पुरस्कार देता ही **कर्त्ता आत्मा को सुधारने के लिए है। शुभ कर्म का पुरस्कार आत्मोन्नति भी है और शारीरिक भी। आध्यात्मिक पुरस्कार तो आत्मोन्नति है। शुभ कार्य करने वाले की आध्यात्मिक दशा को पहले से श्रेष्ठ बनाया जाता है और शारीरिक पुरस्कार वह सुख है जो इन्द्रियों के द्वारा जिनमें मन, अर्थात् बौद्धिक उन्नति भी सम्मिलित हैं, यह अनुभव की जाती है**। यही दशा दण्ड की है। आत्मिक दण्ड आत्मा की अवनति है व शारीरिक दण्ड वह दुःख है जो इन्द्रियों के द्वारा अनुभव किया जाता है।

आर्य सिद्धान्त के अनुसार वर्तमान जीवन के सुख-दुःख इस अथवा किसी पूर्व जीवन के अच्छे-बुरे कर्मों के फल हैं। यदि ऐसा न हो तो वर्तमान जीवन के दुःख के लिए कोई उचित कारण नहीं रह जाता। बिना कारण के किसी के भाग्य में सुख देने से परमात्मा पर (मुआज़ल्ला—ईश्वर क्षमा करे) अत्याचारी होने का दोष लागू होता है। और अकारण मनुष्यों के सुख में अन्तर कर देने से अन्याय का दोष आता है।

इस्लाम के पास उत्तर नहीं—इस्लाम को मानने वाले पुनर्जन्म

नहीं मानते सो वह वर्तमान जीवन के ऐसे अनुभवों की जिनके लिए वर्तमान जीवन के कर्म उत्तरदायी नहीं, कोई उचित कारण वर्णन नहीं कर सकते जैसे अत्यन्त पवित्रात्माएँ भी दुःख पाती हैं।[१] हज़रत मुहम्मद मुसलमानों की दृष्टि में निष्पाप व्यक्तित्व हैं। परन्तु आपके पुत्र हज़रत इब्राहिम की मृत्यु हुई जिससे हज़रत को दुःख था। हज़रत ने आँसू भी बहाए, हज़रत स्वयं मृत्यु से पूर्व रुग्ण रहे। इसका कारण ?

यदि वर्तमान जीवन के सुख-दुःख अकारण प्राप्त हुए हैं तो भविष्य में भी, अर्थात् न्याय के दिन दोज़ख़ जन्नत पर कर्म के बन्धन का सिद्धान्त दार्शनिक दृष्टि से कहाँ तक युक्तियुक्त है ? या फिर मानना होगा कि संसार में तो प्रभु बिना न्याय के काम चलाता है, परन्तु न्याय के दिन अपनी कार्य पद्धति बदल लेगा। दण्ड व पुरस्कार के सिद्धान्त को मानने के पीछे जहाँ परमात्मा को न्यायकारी मानना अनिवार्य है वहाँ उसके **न्याय के गुण में अनादि व अनन्त होने का गुण मानने के लिए यह भी आवश्यक है कि कर्त्ता आत्माओं को भी अनादि व अनन्त माना जाए और** चूँकि एक जीवन के कर्मों का फल एक ही जीवन में नहीं मिल जाता, उसके लिए अधिक जन्म स्वीकार करने होंगे। मुसलमान इस जीवन के पश्चात् एक और जीवन को तो मानने वाले हैं। जिसे वह न्याय का दिन कहते हैं। वह इस जीवन के कर्मों का दण्ड व पुरस्कार का बड़ा भाग न्याय के दिन के लिए सुरक्षित रखते हैं। परन्तु इस जीवन से पूर्व किसी और जीवन को नहीं मानते। विवेक यह चाहता है कि पूर्व जीवन भी मानें और उसका नाम अगला व पिछला रख दें। पुनर्जन्म का सिद्धान्त दण्ड व पुरस्कार के सिद्धान्त का अनिवार्य

१. मूल उर्दू पुस्तक में कातिब के अल्प ज्ञान से यहाँ यह छप गया था, ''नहायत परहेज़गार लोग भी आराम पाते हैं।'' कातिब अरबी शब्द '**आलाम**' को न समझ पाया। उसने समझा यहाँ 'आराम' शब्द होना चाहिये। उसने अपनी अज्ञता से आलाम (दुःखों) की बजाय आराम (सुख) कर दिया। यह भयंकर भूल विद्वान् अनुवादक भी न पकड़ पाये। असावधानी अथवा शीघ्रता से उन्होंने भी दुःख की बजाय सुख ही अनुवाद कर दिया। आराम का तो यही अनुवाद होगा। हमने इस भूल का सुधार कर दिया है। —'जिज्ञासु'

परिणाम है। दुनिया के पश्चात् न्याय दिवस इस शृंखला की एक कड़ी है जब एक कड़ी मानी तो सारा ही क्रम मानना पड़ेगा। अन्यथा अल्लाह मियाँ का न्याय अनुत्तरदायी व अपूर्ण रहेगा और जब अभाव से भाव किया है और प्रत्येक कर्त्ता पर भाग्य लेख का बन्धन भी लगा दिया है तब तो कोई कर्त्ता, कर्त्ता रहा ही नहीं। इस्लामी दृष्टिकोण में वास्तविक कर्त्ता अल्लाह मियाँ है। तब वास्तविक अपराधी या सच्चे दण्ड भागी दूसरे क्यों हैं ?

इस्लाम में परस्पर विरोध—आइये इस न्याय पर ही एक दृष्टिपात कर लें। क्या वह न्याय उस एक कड़ी की सीमाओं में भी जो संसार को न्याय के दिन से मिलाती है, पूर्ण है या सही ? भाग्य लेख के सिद्धान्त के पश्चात् न्याय का सिद्धान्त है तो उपहासास्पद ही, परन्तु चलो इस उपहास में भी कुछ औचित्य हो तो अच्छा है। सूरते नहल आयत १११ में लिखा है—

व तवफ्फा कुल्लानफ़सिन मा अमिलत व हुमला युज़्ालिमून।

और प्रत्येक जीव को जो कुछ उसने कर्म किया उसका (फल) पूरा दिया जाएगा और उनसे अन्याय नहीं किया जायेगा।

और यदि कर्म किया ही भाग्य लेख के अधीन हो, तब ? भाग्य लेख की विवशता न हो तो नियम ठीक है।

सूरते नबा में फ़रमाया है—

जज़ाअन विफ़ाकन। —(सूरते नबा आयत २६)

बदले दिए जाएँगे कर्मों के अनुसार।

सूरते निसा में कहा है—

इन्नलाहा लायज़िलमो मिस्काले जर्रह।

—(निसा आयत ४०)

सचमुच अल्लाह एक कण के बराबर भी ज़ुल्म नहीं करता है, परन्तु इसी आयत में इसी वचन के आगे कहा गया है......

व इनतको हसनतुन युज़ इफ़्हा।

और जो शुभ हो उसे दुगना कर देता है।

शुभ काम तो जितना किया गया है उतना ही रहेगा। हाँ उसका पुरस्कार बढ़ाया घटाया जा सकता है। यही कुरान शरीफ़ के इस

वचन का आशय विदित होता है।

सूरते बकर में कहा है—

व कूलूहित्ततुन नग़फ़िरलकुम खताया कुम व सनज़ीदु लमहुसनीना।

—(सूरते बकर आयत ५८)

और कहो कि क्षमा माँगते हैं। (तो) हम क्षमा करेंगे तुम्हारी भूलों को और अधिक देंगे शुभ कर्म करने वालों को।

कुरान में शुभ कर्म का फल दोगुना मिलने का वर्णन बार-बार हुआ है। अधिक देने के अर्थ भी यही होंगे। **हमारी समझ में इसको दोगुना कर देने के अर्थ नहीं आए। यदि पुरस्कार का माप विभिन्न कर्त्ताओं की दशा में विभिन्न होता तो समझ में आ जाता कि अ व ब समान सत्कर्म करें तो अ की अपेक्षा ब को दुगना पुरस्कार मिलेगा, परन्तु यदि दोनों को समान पुरस्कार हुआ तो वह दुगना किस की अपेक्षा हुआ**? अपने आधे से? सत्कर्म और उसके पुरस्कार का आपसी लेखाजोखा सन्तुलन एक भार से तो हो नहीं सकता क्योंकि ये द्रव्य (वस्तुएँ) ही अलग-अलग हैं। सत्कर्म की एक निश्चित मात्रा के बदले में पुरस्कार की एक निश्चित मात्रा दी जाएगी। इन दो मात्राओं को असमान की अपेक्षा से समान कहना अधिक उपयुक्त है। पुण्य का सिक्का अलग है। पुरस्कार का सिक्का अलग है। कारोबार में उन निश्चित मात्राओं को जो एक दूसरे का बदल हो जाएँ समान कहा जाता है। और इसके पश्चात् इन दोनों के दो गुने भी समान हो जाएँगे। कितने पुण्य का कितना पुरस्कार मिलेगा। यह परमात्मा ने नियम बना दिया। अब इन मात्राओं को चाहे समान कह लो और चाहे एक का दूसरे को दो गुना मान लो। अन्तर शाब्दिक है वास्तविक नहीं। उदाहरण के रूप में खाण्ड का भाव एक रुपये की दो सेर कर दिया जावे। अब एक रुपया और दो सेर खाण्ड में वास्तविक सन्तुलन कुछ नहीं। परन्तु हम व्यापारी लोग इन्हें बराबर कह देंगे। कोई दुकानदार किसी मित्र को एक रुपये की चार सेर खाण्ड दे दे तो वह कह सकता है कि मैंने इसे रुपये का दुगना माल दे दिया, परन्तु वह भाव की सीमा में रहकर खाण्ड को रुपये का दुगना नहीं कह सकता। तौल के हिसाब से इन दो वस्तुओं में सन्तुलन अवश्य है,

परन्तु पुण्य व पुरस्कार दोनों तोल के गुण से रहित हैं। उपरोक्त वचनों में किसी विशेष प्रेमी के साथ रियायत का वर्णन नहीं। पुण्य व पुरस्कार का भाव बताया है। वह भाव प्रत्येक के लिए समान है। इसमें पुरस्कार को पुण्य का दुगना कहना केवल शाब्दिक रियायत है वास्तविक रियायत नहीं। चलो मुसलमान भाइयों की रियायत से यूँ मान लो कि किसी ने यहाँ हज़ार रुपया दान में दिया तो न्याय रूप में आगे उसे दो हज़ार मिल जाएँगे। परन्तु न्याय का काल तो असीम है इसमें दो हज़ार से क्या बनेगा? सीमित नेकी का फल असीम काल में दुगना भी दो तो मात्रा रहित है। इस प्रकार दान का दो गुना तो कुछ हो गया, **परन्तु किसी ने यहाँ नमाज़ पढ़ी उसका दुगना फल क्या होगा? कोई उसे दोगुने सजदे करेगा। यह बात तो हो नहीं सकती। आखिर यह दुगना क्या है?**

हाँ क्षमा की बात और है वह कितने गुना बन जाएगी या सम्भव है कि सन्तुलन की सीमा से वह भी बाहर हो। कहा है—

अफ़ल्लाहो अमासलफ़ा व मनआदा फयन्तकिमल्लाहो अनहो।

—(सूरते मायदा आयत ९५)

अल्लाह ने जो (कर्म) हो चुके वे क्षमा कर दिए और यदि कोई फिर करे तो अल्लाह ताला उससे बदला (प्रतिशोध इन्तकाम) लेगा।

एक विशेष समय से पूर्व किए गए पाप सब क्षमा कर दिए? यह क्यों? और वह भी विशेष व्यक्तियों के। इसमें न्याय कहाँ रहा? हज़रत मुहम्मद जी या अन्य पैग़म्बरों के काल में इन महान् पुरुषों के सत्संग का सौभाग्य तो मिला ही गिने-चुने लोगों को। उनमें से भी केवल कुछ व्यक्तियों को क्षमा के लिए चुन लेना और दूसरों को न सत्संग का सौभाग्य देना न उनके नैतिक कार्यों के सुधार का अवसर देना न फिर क्षमा करना ईश्वरीय न्याय व्यवस्था से दूर है—

व इन्नी लग़फ़्फ़ारून लिमनताबा व आमना व अमिला सालिहन सुम्महतदा। —(सूरते ताहा आयत ८२)

सचमुच मैं अल्लाह क्षमा करता हूँ जो तौबा कर ले और ईमान लाए अच्छे कर्म करे फिर सन्मार्ग पाए।

तफ़सीरे हुसैनी में इस आयत का आशय इस प्रकार वर्णन किया है—

तौवा करद अज़ शिरक, ईमान आवुर्द ब वहदानियत, बर सुन्नते पैग़म्बर सलअम मूज़िज़त करद यातरीके अहले सुन्नत व जमाअत गिरफ़्त व फ़रीज़हा अदा करद।

शिरक (परमात्मा के साथ औरों को भी मानने) से तौबा की, एकेश्वरवाद पर विश्वास लाया, पैग़म्बर के आचार संहिता को स्वीकार किया या पहले सुन्नत व जमाअत का मार्ग ग्रहण किया और कर्त्तव्यों का पालन किया।

अन्तिम वाक्य के अर्थ जलालैन में आए हैं—

ज़कात (दान) अदा करे व नफ़लों का सदका अदा करे।

दूसरे अर्थों में सुन्नी (मुसलमानों का एक सम्प्रदाय) हो जाने से पाप क्षमा हो सकते हैं। यह न्याय अच्छा रहा।

सूरते शूरा में लिखा है—

वल्लज़ी अतमओ अनूयग़फ़िराली ख़तायती योमिददीन।

—(शुअरा)

और आशा रखता हूँ मैं कि बख़्शेगा मेरे अपराध न्याय के दिन।

यह आशा कोई वीरता की आशा नहीं। विशेषतया जब यहाँ अपने विश्वास के अनुसार बिना कर्मों के कष्ट सहते हो, न्याय के दिन पापों के होते भी क्षमा का याचक बनाना कुछ विचित्र प्रकार का आत्मसन्तोष है।

किसी गत अध्याय में कुरान शरीफ़ के पैग़म्बरों के चरित्र का वर्णन करते हुए हज़रत मूसा के मुक्के से एक व्यक्ति की हत्या होने की घटना की चर्चा हो चुकी है। फ़रमाया है—

फ़वकज़हू मूसा फ़कजा अलैहे.........काला रब्बे इन्नी ज़लमतो नफ़सी फ़ग़फ़िरली फ़ग़फ़रालहू इन्नहू हुवलग़फ़ूरूर्रहीम।

—(सूरते कसस १५, १६)

फिर मुक्का मारा मूसा ने और समाप्त किया उसका जीवन...... (मूसा ने) कहा मैंने अत्याचार किया अपने जी पर अतः बख़्श (क्षमा) कर मुझे बस क्षमा किया उसको सचमुच वह क्षमा करने वाला दयालु है।

यह कथन किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं माँगता यदि

हत्या भी क्षमा होने लगे तो न्याय हो चुका। कहा है—

इन्नल्लाहा यग़फ़िरु ज्ज़नूबा जमीअन। इन्नहू ग़फ़ूरुर्रहीम।

—(सूरते जमर आयत ५३)

सचमुच अल्लाह क्षमा करता है सब पाप वही क्षमा करने वाला दयालु है।

लीजिए छुट्टी हुई। पाप का दण्ड ही न रहा। इस सम्पूर्ण क्षमा दान के विरुद्ध तो कुरान के भाष्यकारों ने भी विरोध किया है। तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

बग़ैर शिरक कि मुतलिक आमरज़ीदा न शवद।

शिरक के सिवाय क्योंकि यह पाप कदापि क्षमा नहीं होगा।

यह बात कि कौन-सा अपराध क्षमा के योग्य नहीं लेखक की नैतिक कल्पना के ऊपर आधारित है। भारतीय संविधान में शिरक दण्ड नहीं हत्या दण्डनीय है। सूरते मौमिन में आया है—

अल्लाहिलअज़ीज़लअलीमे ग़ाफ़िर ज़्ज़नबे व काबिले तौबे।

—(सूरते मोमिन आयत २)

परमात्मा है जानने वाला क्षमा करने वाला पापों का स्वीकार करने वाला तौबा का।

तफ़सीरे हुसैनी इस आदेश का लाभ प्रत्येक व्यक्ति को प्रदान नहीं करती है। कहा है—

हर कसे रा कि बसिदक गोयद ला इलाहाइल्लल्ला मुहम्मदुल रसूलिल्लाह।

उस व्यक्ति को जो सच्चे हृदय से कहे कल्मा (लाइलाहा मुहम्मदुल रसूलिल्लाह)।

सूरते मुहम्मद में फ़रमाया है—

व मगफरितुन मिन रब्बिहिम। —(सूरते मुहम्मद आयत १५)

और क्षमा दान हैं पालनहार उनके की।

अब पूरा बदला देने और कर्मों के अनुसार पुरस्कार देने की बात कहाँ गई? हम तो यह देख रहे हैं कि संसार में अत्यन्त पवित्र लोग भी कष्टों से बच नहीं रहे। जैसे कि हज़रत मुहम्मद जी को जो मुसलमानों की सम्मति में मनुष्य मात्र में नैतिक रूप से चुने हुए

व्यक्ति हैं और पाप की छाया भी उन पर नहीं पड़ी, स्वयं अपने पुत्र की मृत्यु का शोक सहन करना पड़ा। यदि इस संसार में ही अच्छे से अच्छे लोग संकटों में हैं जो हमारी दृष्टि में पूर्व कर्मों का फल हैं और मुसलमानों के विश्वास के अनुसार अकारण सहन करने पड़ रही हैं मुक्त नहीं हैं, तो न्याय के काल में जहाँ अच्छे-बुरे कर्म विद्यमान होंगे उनके फलों से मुक्ति कैसे होगी? **समझ में नहीं आता कि मुसलमान कर्मों के बिना भी संकट आने को तो ईश्वरेच्छा स्वीकार करते हैं और कर्मों के रहते उसके दण्ड को ईश्वरेच्छा स्वीकार नहीं करते।** अल्लाहमियाँ की यह क्षमा संसार में अत्याचार की अवस्था क्यों पसन्द करती है। भाई हमारी मानो। न तो अनावश्यक क्षमा के समर्थक हो और न ही अकारण अत्याचार के। न्याय की दृष्टि से यह दोनों ही अवस्थाएँ निषेध की हैं।

लीजिए! क्षमा करने पर ही समाप्ति नहीं इससे भी आगे बढ़ गए हैं। अल्लाह की दयालुता पूरे ज़ोरों पर है—

फ़उलाइका युब्दिलो अल्लाहो सय्या तिहिम हसनातिन।

—(सूरते फुरकान आयत ७०)

और बदल डालता है अल्लाह बुराईयाँ उनकी भलाइयों से।

तफ़सीरे जलालैन में इसकी व्याख्या ऐसे दी है—

ऐसे व्यक्ति की बुराइयों को न्याय के दिन पुण्यों से बदलेगा। बुराइयाँ तो कीं इस संसार में और न्याय के दिन उन्हें भलाइयों से बदल दिया। **यह व्यवहार किसी किया जाए? कानून की हत्या स्पष्ट है।** अब तक इतना ही ठीक था कि बुराइयाँ क्षमा हो रही हैं और भलाई के बदले पुरस्कार में वृद्धि हो रही है। किसी-किसी की बुराई-भलाई बना दी जाती थी इस कार्य पद्धति पर कोई असम्बन्ध व्यक्ति आपत्ति करे तो करे कोई नियम व मर्यादा का दीवाना दार्शनिक उंगली उठाए तो उठाए जिस व्यक्ति से यह दयालुता का व्यवहार होता है उसे इस कार्य पर आपत्ति नहीं, क्योंकि उसकी तो पाँचों अंगुलियाँ घी में हैं। और वह असम्बद्ध नियम मर्यादा भक्त दार्शनिक से भी कह सकता है कि भाई दर्शनशास्त्र किसी के सौभाग्य पर रोता है तो रोया करे तू क्यों व्यर्थ ही ईर्ष्या करता है? मुझ पर मुफ़्त में मेहरबानी होने से तेरा कुछ बिगड़ता नहीं। तेरे आँसू सहानुभूति के

आँसू तब हों जब पुण्य को क्षमा कर दिया जाए? अर्थात् उसका पुरस्कार न मिले या बुराई के दण्ड में वृद्धि हो। देखें कुरान शरीफ़ इस सम्बन्ध में क्या आदेश फ़रमाता है—

सूरते मायदा में फ़रमाया है—

यगफरो मंय्यशओ वयअज़बोमन्यशाओ।

—(सूरते मायदा आयत १८)

(ख़ुदा) क्षमा करता है जिसे चाहता है व पीड़ा पहुँचाता है जिसे चाहता है।

सूरते अहज़ाब में कहा है—

यानिसाउन्नबीओ मनयाते मिनकुन्ना बिफ़ाहिशतिन मुबय्यनतिन यज़अफ़ो लहलज़ाबो मिनअफ़ीन। —(सूते अहज़ाब आयत ३०)

ऐ नबी की पत्नियो! जो कोई आवे तुम में से साथ स्पष्ट निर्लज्जता के उसके लिए पीड़ा दुगनी की जाएँगी।

पैग़म्बर साहब की पत्नियों से यह विशेष व्यवहार क्यों? तफ़सीरे हुसैनी में कहा है—

अज़ शुमा इज़वाजे पैग़म्बरेद फ़रमावरेद मर ख़ुदाय व रसूल रा व बकुनेद एमाल शाइस्ता बदिहेम मरा ओरा अजरा दोबारा-यक बार एताअते ख़ुदाए ताला व यकबार बराए तलबे खुशनूदिए पैग़म्बर सलअम।

तुम से जो पैग़म्बर की पत्नियाँ हों आज्ञा पालन करती हों ख़ुदा व पैग़म्बर की और शुभ कर्म करती हों उसका बदला दोबारा देते हैं। एक बार ख़ुदा की आज्ञा पालन का, एक पैग़म्बर की प्रसन्नता के कारण।

सम्भव है बुराई का इनाम भी इसी कारण दोगुना निश्चित हो। क्योंकि कार्य तो एक ही बार किया गया। हज़रत पैग़म्बर इससे इसलिए तो प्रसन्न होंगे कि अल्लाह की सेवा की है उनकी खुशी का अपना अलग बदला क्यों? इस प्रसन्नता में हज़रत ने पत्नियों के कार्यों का पृथक् इनाम पा लिया। इस्लामी दर्शन मुसलमान ही समझ सकते हैं। सम्भव है कोई सज्जन कहें कि हज़रत मुहम्मद व उनके परिवार का मामला विशेष है। विचार सामान्य जन के दण्ड व पुरस्कार पर होना चाहिए। लीजिए सूरते फुरकान में फ़रमाया है—

यज़अफ़ोलहुल अज़ाबो योमलकयामतेब यख़्लुद फ़ीहल मुहानन। —(सूरते फ़ुरकान आयत ६९)

दोगुना किया जाएगा उनके लिए पीड़ाओं को कयामत (न्याय) के दिन वे सदा रहेंगे उसमें पीड़ाएँ उठाते हुए।

क्या इस आदेश के रहते भी कोई कह सकता है कि अल्लाह मियाँ कण भर भी अत्याचार नहीं करेगा? इस आदेश में किसी विशेष समुदाय को विशेषता नहीं दी गई है। और एक स्थान पर मौलाना सनाउल्ला जी के कथनानुसार इस्लाम के शत्रुओं के समूहों को दुगना दण्ड पीड़ा दिए जाने की इच्छा उनके जहन्नमी अनुयायियों को प्रार्थना के रूप प्रदान किया गया है। कफार का कोई डेपूटेशन तो न अल्लाहमियाँ की सेवा में उपस्थित हुआ था न हज़रत पैग़म्बर जी की सेवा में कि हमारे मार्गदर्शकों को कड़ी से कड़ी सज़ा दीजिए। एक काल्पनिक कयामत का नक्शा बनाकर उसमें काफ़िरों की ओर से यह प्रार्थना पत्र दिलाने के अतिरिक्त इसके और क्या अर्थ हैं कि कुरान के रचियता की अपनी इच्छा यह है? चुनांचे कहा है—

रब्बाना आतेहुम ज़िअफ़ीने मिनलअजावे बलअन हुमल अनन कबीरा।
—(सूरते अहज़ाब आयत ६८)

ऐ हमारे रब दे उनको दोगुनी पीड़ा और लानत कर उनको बड़ी से बड़ी।

मनोविज्ञान के विद्वान् जानते हैं कि किसी काल्पनिक स्थान पर किसी काल्पनिक दशा में किसी और के मुँह में डाली हुई दुआ विशेषतया जब उसकी अस्वीकृति की चर्चा भी न की जाए वास्तव में अपनी ही दुआ (प्रार्थना) होती है। इस आयत का यह आशय हमने मौलाना सनाउल्ला जी की रिआयत से स्वीकार कर लिया है अन्यथा यह आयत इससे पहली आयत से पृथक् है। और इसके अर्थों का सम्बन्ध सीधा ही कुरान के रचयिता की इच्छा से अनुमान किया जा सकता है। यह हुआ अल्लामियाँ का पाप की और उसके दण्ड की मात्रा का न्याय। अब एक पाप की केवल सम्भावना के दण्ड का उदाहरण सुनिए।

सूरते कहफ़ में केवल हज़रत ख़िज़र और हज़रत मूसा की

एक यात्रा का वर्णन है। इस यात्रा के मध्य हज़रत ख़िज़र ने एक लड़के को मार डाला। हज़रत मूसा ने पूछा—

अकतलता नफ़सनज़ किय्यतन बग़ैरे नफ़सिन।
—(सूरते कहफ़ आयत ७४)

क्या तूने मार डाला एक जान को जो पवित्र थी बिना जान के बदले के।

उस समय तो हज़रत ख़िज़र ने उन्हें डाँट दिया कि वादा के ख़िलाफ़ प्रश्न क्यों पूछते हो, परन्तु बाद में जब यात्रा समाप्त हुई तो फ़रमाया—

व अम्मल ग़ुलामो फ़कानाअववाहा मौमिनी ने फ़ख़शैना अन्युरहिक हुमा तुग़यानन व कुफ़फरन।
—(सूरते कहफ आयत ८०)

और वह जो लड़का था उसके माँ-बाप मोमिम थे, अतः डरे हम कि विजयी हो यह उन पर सरकशी व कुफ़्र में।

डर यह था कि कहीं उन्हें विद्रोही अज़र काफ़िर न कर दे। इस भय से लड़के की हत्या कर दी। यह हत्या करने वाले हज़रत खिज़र भी अल्लाह मियाँ के पैग़म्बर हैं और उनके इस कारनामे का वर्णन चमत्कारी रूप में कुरान शरीफ़ के पृष्ठों में हुआ है। आपके इस पवित्र कार्य पर अल्लामियाँ व हज़रत मोहम्मद की पुष्टि की मोहर है। यह है दयालु ख़ुदा का न्याय। कोई पूछे कि **इस सम्भाव्य विद्रोह का स्वभाव उसके अन्दर डाला किसने**? स्वयं इस चीज़ को सम्भव करते हो फिर उस सम्भावना का दण्ड देते हो और इतनी भी प्रतीक्षा नहीं करते कि वह सम्भावना कार्यरूप में परिणत हो ले।

इस लड़के के सम्बन्ध में तो आशंका ही थी, परन्तु यहाँ तो बस्तियों की बस्तियों संकटापन्न हुई हैं। जैसा कि लिखा है—

व तिलकलकरा अहलकनाहुम लम्मा ज़लमू व जअलना लिमहलकिहिम मौइदन। —(सूरते कहफ़ आयत ५९)

और यह बस्तियाँ हैं कि जब उन्होंने अत्याचार किए तो हमने उन्हें नष्ट कर दिया और हमने उनके नष्ट करने का वादा निश्चित किया था।

<u>**जब वचन ही निश्चित था तो और अत्याचार को इनकी तबाही के लिए कारण क्यों बताते हो**</u>। अल्लामियाँ का वचन तो पूरा होकर ही रहना था। चाहे वह अत्याचार करतीं चाहे न करतीं और यदि उनका अत्याचार पहले से ही निश्चित था तो फिर इस अत्याचार में भी उनका अपराध क्या? अत्याचार कराने वाले का है। फिर ऐसा कौन–सा पाप है जिसमें किसी बस्ती के सब लोग स्त्री–पुरुष, वृद्ध व युवक समान भागीदार हों। भले–बुरे सब प्रकार के लोग हर नगर में बसते हैं। सबको एक रस्सी से बाँध लेना और एक साथ विनाश के कुँए में धकेल देना अन्धेर नगरी चोपट राजा वाली कहावत है। हाँ यह हो सकता है किसी पूर्व जन्म या जन्मों के पापी एक स्थान पर एकत्रित हो जावें और उनके किसी पुराने बड़े पाप का दण्ड एक साथ दे दिया जाए। परन्तु एक ही जीवन में सबका समान पापी होना प्रत्यक्ष में दिखाई नहीं आया। इन लोगों में कुछ नवजात बच्चे भी होंगे। उन्होंने क्या पाप कर लिया था। लीजिए एक स्थान पर अत्याचार की विभीषिका का भी वर्णन कर दिया है—

व कऐनामिन करियतिन हिया अशद्दो कुव्वतन मिनकरिय तिका अल्लती अख़्रर जतका अहलकनाहुमफ़लानासिरा लहुम।

—(सूरते मुहम्मद आयत १३)

और कितनी बस्तियाँ थी जो सख़्त थी शक्ति में, तेरी बस्ती से जिस ने निकाल दिया तुझको, नष्ट किया हमने उनको और उनको सहायता करने वाला कोई नहीं हुआ।

हज़रत मुहम्मद के निकालने के अत्याचार में सारी बस्ती सम्मिलित हो यह सम्भव ही कैसे हो सकता है? परन्तु नष्ट बस्तियाँ की जाएंगी। क्यों? **उनके नष्ट होने का वचन है।**

अभाव से भाव की उत्पत्ति और भाग्य लेख की मान्यता के पश्चात् न्याय का दावा वास्तव में एक **उपहासास्पद** स्थिति है? फिर भी हम ने इस उपहास जनक स्थिति की भी समीक्षा इसलिए की है कि सम्भव है इस उपहास जनक स्थिति से भी कोई गम्भीर बात निकल आए। लिखने को तो लिख दिया है कि कर्मों के अनुसार फल मिलता है और अल्प मात्रा भर भी अत्याचार नहीं होता है, परन्तु फिर फ़रमाया है कि पुण्य का फल दोगुना दिया जाता है। **इस**

दोगुने की दार्शनिक वास्तविकता क्या है। शब्दों का ही हेर–फेर है। इस दोगुने के अर्थ और उसके कार्यान्वयन और उसके पुरस्कार की समानता एक है और यह दोगुना बदला अनन्त काल में मिलना हो तो इसकी वास्तविकता ही कुछ नहीं रहती। फिर क्षमा का वचन दे रखा है। इस्लामी सिद्धान्त के अनुसार सांसारिक दुःख–सुख बिना कर्मों के प्रदान किये गये हैं अब यदि पाप के बिना कष्ट देने में संकोच नहीं तो पाप के होते कष्ट क्यों न दिया जाएगा? यह तनिक कठिनाई से कल्पना में आने वाली बात है। फिर प्रत्येक पाप को क्षमा करने का वचन भी दे दिया गया है। यह पापों को बढ़ावा देना नहीं तो क्या है? न्याय का अन्त इसी पर हो जाता तो गिला नहीं था। यहाँ तो पाप का दण्ड भी दोगुना कर रखा है और फिर कहा है कि अत्याचार नहीं होता। यही नहीं कुफ्र की सम्भावना का बदला दिया है हत्या, और वह भी एक पैग़म्बर के हाथों से। अन्याय की सीमा ही नहीं रहती, जब एक निर्धारित वचन के कारण जो भाग्य लेख का दूसरा नाम है बस्तियों की बस्तियाँ नष्ट कर दी जाती हैं। अपराध चाहे बस्ती के एक भाग का हो, परन्तु दण्ड तो नवजात बच्चों को भी भुगतना पड़ेगा। किसी ने सच कहा है—

पूछा गुनाह क्या था? कहा बल बे सदागी!
क्या यह गुनाह नहीं न हुए तुम गुनाहगार?

अर्थात्

पूछा कि क्या था पाप तो अनायास यह कहा!
क्या पाप यह नहीं कि तुमने पाप न किया?

कयामत की रात

एकदम अल्लाह को क्या सूझा?—पिछले अध्याय में अल्लाताला के न्याय के रूपों को तो एक दृष्टि से देख ही लिया गया! क्या ठीक हिसाब किया जाता है। अब हम इस न्याय की कार्य पद्धति देखेंगे। इसके लिए कयामत के दिन पर एक गहरी दृष्टि डाल जाना आवश्यक है, क्योंकि न्याय का दिन वही है। मुसलमानों की मान्यता है कि सृष्टि का प्रारम्भ है। सृष्टि एक दिन प्रारम्भ हुई थी। पहले अल्लाह के अतिरिक्त सर्वथा अभाव था। एक दिन ख़ुदा ने क्या किया कि अभाव का स्थान भाव ने ले लिया। किसी के दिल में विचार आ सकता है कि **इससे पूर्व अल्लाह मियाँ क्या करते थे? उनके गुण क्या करते थे? जो काम पहले कभी न किया था वह अकस्मात सूझा कैसे? क्या यह अल्लामियाँ के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं था कि पहले अकेले विद्यमान थे और अब अपनी सत्ता में किसी और को भी सम्मिलित कर लिया? एकत्व से उकता गए थे क्या? वृद्धावस्था कुछ मनोरंजन चाहती थी? कुछ हो संसार पैदा हो गया। इसमें असमान तत्त्व भी रख दिए। क्योंकि उसके बिना संसार का कारोबार न चलता था। असमानता में क्या नियम कार्य करता था? प्रकटरूप से अल्लाह मियाँ की इच्छा के अतिरिक्त और कोई नियम बरता ही नहीं गया**। यह भी हुआ। **हज़रत ने आत्माएँ उत्पन्न कीं**। उनको काम करने की सामर्थ ही नहीं प्रदान की। कार्य भी निश्चित कर दिए। किसी के भाग्य लेख में पवित्रता लिखी गई। किसी के भाग्य में पाप करना। **पाप कर्म का साधन शैतान को निश्चित किया गया। दोज़ख़ भर देने का निर्णय ख़ुदाई न्यायालय से प्रारम्भ से ही कर दिया गया था, इसमें जाने वाले, जलने वाले सब निश्चित हैं।** परन्तु अब एक दिन आना है **जब अल्लामियाँ न्याय की कुर्सी को शोभा प्रदान करेंगे और कर्मों का फल दिया जाएगा। हम परेशान हो रहे हैं कि कर्म किसके? बदला क्यों?** परन्तु अल्लाह मियाँ की इच्छा है कि करे कराए तो आप ही परन्तु **बदला हमें दे। दे दें।**

इसके लिए दरबार लगाना क्या आवश्यक है? भाग्य लेख तो हमारा प्रारम्भ से ही निश्चित है फिर इस दिन नूतन क्या होगा? यदि इस दरबार लगाने का नाम ही न्याय है तो हमारा विनम्र निवेदन है कि यह न्याय का स्वांग एक ही दिन क्यों किया जाता है? कहीं इससे अल्लामियाँ के न्याय के गुण में अस्थाई होने का दोष तो लागू नहीं होगा[१]? **कयामत से पूर्व इस गुण का कोई प्रयोग नहीं और इसके पश्चात् भी कोई प्रयोग की अवस्था नहीं होगी।**

ख़ैर आइए! इस दरबार का दर्शन करें। इस दरबार की भूमिका रूप में अवस्थाएँ बयान की गई हैं—

व तरल जिबाला तहसबहा जामिदतुन वहिया तमररुमर्रा अस्सहाबे।

—(सूरते नमल आयत ८८)

और देखेगा तू पहाड़ों को कि अनुभव करेगा तू उनको जमे हुए और वह चलेंगे बादलों की भाँति।

व इज़ा रुज्जतिल अरज़ो रज्जन, व बुस्सतिल जवालो बुस्सन।

—(सूरते वाकिया आयत ४-५)

जब हिलाई जाएगी भूमि भली प्रकार और टुकड़े हों पहाड़ टूटकर।

व इज़श्शमसो कुर्रिरत व इज़न्नजूमो उन्कदिरत व इजल जवालो सुय्यरत व इज़स्समाओ कुशितत।

—(सूरते तकवीर आयत १-२-३, ११)

जब सूरज को लपेटा जाएगा और तारे गदले हो जाएँगे और जब पहाड़ चलेंगे और जब आसमान की खाल उतारी जाएगी।

सूरज लपेट दिया गया तो प्रकाश न हो सकेगा रात हो जायेगी। इसी विचार से स्वामी दयानन्द कयामत का दिन नहीं 'रात' लिखते हैं। अन्तिम आयत पर जलालैन ने लिखा है—

जैसे बकरी का चमड़ा उतारा जाता है।

व इज़स्समाउन्कतरनो, व इज़लकवाकिबो उन्तरसरत व इज़ल बिहार फुज्जिरत व इज़ल कबूरो बुइसरत।

—(सूरते इनफ़ितार आयत १-४)

---

१. डॉ० जेलानी पहले मुस्लिम विचारक हैं जो अल्लाह द्वारा प्रतिपल न्याय देना मानते हैं। देखिये उनकी पुस्तक '**अल्लाह की आयत**'। —'जिज्ञासु'

जब आसमान फट जावे, जब तारे झड़ जाएँ जब दरिया चीरे जाएँ, जब कबरें उठाई जाएँ।

कबरों का अर्थ यहाँ भाष्यकारों ने कबरों में लेटे मुर्दे किया है। वे मुर्दे शरीरों के साथ उठेंगे या इसके बिना[१] ? उठना बिना शरीर के क्या होगा ? इस्लाम के अनुयायियों का सिद्धान्त यही है कि शरीर के साथ उठेंगे। वह शरीर कहाँ से आएगा ? शरीर तो जर्जरित हो चुका और वह कब्र में मिलजुल गया। अब कब्र का उठना या शरीर का उठना एक ही बात है। और जो कबरें इससे पूर्व नष्ट हो चुकेंगी वह ? कुछ होगा। यह हुई कब्रों की बात। अब तारे। ऊपर तो तारों को गदला (बुझे हुए) ही किया था, यहाँ झाड़ दिया है और दरिया चीरने से न जाने, क्या आशय है ?

वजउश्शमसे व लकमरे। —(शूरते कयामत आयत ९)

और इकट्ठा किया जाएगा सूरज और चाँद।

इस पर तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

यानी एशां रा बयक दीगर मज्तमअ साख़्ता दर दरिया अफ़गन्द।

अर्थात् इन दोनों को इक्ट्ठा करके दरिया में डाल देंगे।

क्या उस चीरे हुए दरिया में ? लीजिए अब तो प्रकाश का कोई साधन न रहा। सूरज का ही लपेटा जाना (इसके अर्थ कुछ भी हों) प्रकाश को समाप्त हो जाने के लिए पर्याप्त है, क्योंकि चाँद भी तो सूरज से ही प्रकाश पाता है। परन्तु यहाँ सूरज चाँद सितारे सब कुछ झड़ गया है। कोई लपेटा गया है, कोई दरिया में डाल दिया है। **इसी कयामत के दिन को रात ही नहीं घुप अन्धेरी रात कहना चाहिए।**

यह सब निशानियाँ लिखते हुए हम एक बात भूल गए वह है नरसिंघे का फूँका जाना। वह पहली बार तो इन सारी अवस्थाओं के प्रकट होने से पहले बजेगा और एक बार कब्रों के उठने पर।

वनफ़ख़ा फ़िस्सूरे फ़इजाहुम मिनल अजदाते इलारब्बहुम यन्सिलून। —(सूरते यासीन आयत ५१)

और फूँका जाएगा नरसिंघा। फिर अचानक वह कबरों में से अपने परवरदिगार (परमात्मा) की ओर दौड़ेंगे।

---

१. अब श्री फारूकी आदि ने ये अर्थ बदल दिये हैं। —'जिज्ञासु'

इस आयत से तो यह स्पष्ट हो जाता है कि सारी कब्र न दौड़ेगी उसका एक भाग शरीर बनकर दौड़ेगा। परन्तु हम तो यह देख रहे हैं कि एक कब्र क्या कब्रिस्तान के कब्रिस्तान नष्ट होते जाते हैं। उनके स्थान पर शहर बस रहे हैं। यह और बात है कि पहले पहल कब्रों के खुदने से रोग फैलने की आशंका होती है। वैज्ञानिकों की सम्मति है कि मुर्दे गाड़ने की रस्म स्वास्थ्य के नियमों के विरुद्ध है। इसी बात को ध्यान में रखकर योरोप व अमरीका में मुर्दे जलाने का रिवाज बढ़ रहा है। मुर्दों के उठने की भी एक योजना बताई है—

वल्लाहल्लज़ी अरसलरींहा फ़तुशीरो सहाबन फ़सुकानहू इलाबलदिन मय्यतिन फ़अहयैनाबिहिल अरज़ा बादो मौतिहा कज़ालिकन्नशूर। —(सूरते फ़ातिर आयत ८-९)

और अल्लाह वह है जिसने भेजा हवाओं को, फिर उठाया बादलों को, फिर हाँक लाते हैं उसको शहरों की ओर फिर जीवित किया हमने उससे ज़मीन को उसकी मृत्यु के पश्चात्। इस प्रकार मुर्दे उठाए जाएँगे।

मिश्कात किताब फ़तन बाब नफ़ख़ फ़िस्सूर में लिखा है—

काला व लैसा मिनल इन्साने शैउन लायबली इल्लल उज़मा वाहिदहू व हुवा अजबुज़्ज़नबो व मिनहू यरकिबुल ख़लका योमिल कयामते।

कहा और नहीं मनुष्य में कोई ऐसी वस्तु जो पुरानी न हो जाए। एक हड्डी के अतिरिक्त और वह रीढ़ की हड्डी के नीचे की हड्डी है और इससे संसार की रचना होती है कयामत के दिन।

कहा जाता है कि यह हड्डी कयामत के दिन गले सड़े बिना सुरक्षित रहेगी। यह बीज का काम देगी जिससे सारा शरीर नवीन बनाया जायेगा। यह काम चालीस दिन की वर्षा से होगा जो अल्लाहताला भेजेगा। जो भूमि को आठ बलिश्त तक ढाँप लेगी और उसके इस काम से शरीर पौधों की भाँति उग आएँगे।

यह कयामत का प्रारम्भ है इसकी अवधि दो सूरतों में वर्णन की है—

सूरते सजदा में कहा है—

फ़ीयोमिन काना मिकदारहू अलफ़ा सिनत्तिन मिम्मात अदून।

—(सूरते सजदा आयत ४)

एक दिन में जिसकी मात्रा हज़ार वर्ष है तुम्हारे गणित से।

तफ़सीरे जलालैन में इस आयत पर लिखा है—

आशय हज़ार वर्ष के दिन से कयामत का दिन है। परन्तु सूरते मआरिज़ में हम एक और अवधि पाते हैं—

तअरजुल मलाइकतो वर्रुहो इलैहे फ़ीयोमिन काना मिकदारहू रवमसीना अलफ़ा सनतिन.......योमा यरवरजूना मिनल अजदाते सिराअनकअन्नहुम इलानुसुबिन युवफ़िफ़ज़ून।

—(सूरते मआरिज आयत ४)

चढ़ते हैं फ़रिश्ते और रूहें तरफ़ उसके उस दिन में जिसकी अवधि है पचास हज़ार साल.........जिस दिन निकलेंगे कब्रों से दौड़ते हुए जैसे किसी निशानी पर दौड़ते हैं।

इन दो संख्याओं के मतभेद का निवारण कैसे हो? पहली संख्या के साथ गुण की वृद्धि की है और वह संख्या तुम्हारी गिनती के अनुसार है सम्भव है जो अवधि मनुष्यों की गिनती में एक हज़ार वर्ष होती है वह किसी और सृष्टि की गिनती में पचास हज़ार साल हो जाती हो।

गुत्थी सुलझा ली गई—तफ़सीरे जलालैन में इस गाँठ को यह कहकर खोला है—

दूसरी सूरत में पचास हज़ार साल फ़रमाया है यह लम्बाई कयामत की काफ़िरों को अनुभव होगी।

इन पचास हज़ार वर्षों में होगा क्या? मूजिह कुरान तो पचास हज़ार पर कहता है, जब से मुर्दे निकलेंगे जब तक दोज़ख़ बहिश्त भर जाएँगे।

तफ़सीरे हुसैनी में इस स्थान पर लिखा है—

दर अरसा हाए कयामत पंजाह मौतन व मौकफ़ ख़्वाहद बूद, व ख़लायक रा दर हर मौकफ़े हज़ार साल वाज़ दारन्द, व बयाने मवाकिफ़ दर जवाहरुत्तफ़ासीर अस्त।

कयामत के मैदान में पचास पड़ाव व ठहराव होंगे। लोगों को हर ठहराव पर पचास हज़ार साल रोका जाएगा। इन ठहरावों का वर्णन जवाहरुत्तफ़ासीर में है।

अब जरा कयामत की कार्यवाही के विवरण का दर्शन करें।

चालीस दिन की बरसात से पौधों की भाँति कब्रों से उत्पन्न हुए मुर्दा मनुष्य दौड़कर न्यायालय के स्थान पर पहुँच चुके हैं। प्रत्येक को उसके भाग्य का पर्चा मिलता है। इसीलिए सूरते बनी इसराईल में आया है—

व कुल्ला इन्साानिन अलज़मनाहू ताइरतुन फ़ीउनकिही व युख़रजोलहु योमल कयामते किताबन यलकाहो मन्शूरन।

—(सूरते बनी इसराईल आयत १३)

और प्रत्येक व्यक्ति के लिए लगा दिया है हमने कर्म लेख उसका बीच उसकी गर्दन के और निकालेंगे हम उसके लिए कयामत के दिन एक पुस्तक (के रूप में) देखेगा उसको खुला हुआ।

इस पर तफ़सीरे जलालैन में लिखा है—

मुजाहिद ने कहा कि कोई बच्चा ऐसा नहीं जिसकी गर्दन में उसके एक कागज होता है उसमें यह लिखा होता है कि यह सौभाग्यशाली है या दुर्भाग्यशाली (अभागा)।

तफ़सीरे हुसैनी में इस वाक्य की भूमिका में लिखा है—

दर ज़ादुलमसीर अज़ मुज़ाहिद नकल मे कुनद।

जादुलमसीर में मुजाहिद से यह उद्धृत हुआ है।

इस कथन के बाद लिखा है—

यानी आँचे तकदीर करदा अन्द अज़ रोज़े अज़ल अज़ किरदारे ओ, लाज़िम साख्ता अन्द दर गर्दने ओ यानो ओ रा चारा नेस्त अज़ां।

अर्थात् जो भाग्य आरम्भ के दिन से उसके लिए कर्मों के लिए निश्चित कर दिए वह उसकी गर्दन में लटका दिया, अर्थात् उससे वह बच नहीं सकता।

दर ऐनुलमआनी गुफ़्ता कि तायर आं किताब अस्त कि रोज़े कयामत परां-परां बदस्ते बन्दा आयद।

तायर रूपी पुस्तक—ऐनुलमआनी में कहा है कि तायर[1] वह किताब है जो कयामत के दिन उड़ती-उड़ती बन्दे के हाथ आएगी।

१. तायर शब्द का अर्थ पक्षी है। यह पक्षी रूपी पुस्तक कैसी होगी इसकी कल्पना करना अति कठिन है। न जाने इसके पृष्ठ कितने होंगे? —'जिज्ञासु'

प्रत्येक व्यक्ति के कर्म प्रारम्भ से ही नियत हैं। अटल भाग्य ने कर्मों का लेख बना दिया। इसमें हेर-फेर तो हो नहीं सकता। इसके अनुसार ही प्रत्येक व्यक्ति ने कार्य किया होगा। अब वह कर्मों का लेखा उसके हाथ में दे दिया जाता है।

व वज़अलकिताबा। —(सूरते ज़मर आयत ६७)

और रखे जाएँगे कर्म के हिसाब।

इस कर्म लेख के हिसाब में भी बहिश्त व जन्नत में जाने वालों में परस्पर अन्तर होगा। अतः सूरते हाका में कहा है—

कअम्मा मनओ किताबहु वियमोनिही फ़यकूली अकरऊ किताबहु व अम्मामन ऊती किताबहु बिशमालिही फ़यकूलो यालैतनी लमऊते किताबिहा। —(सूरते हाका आयत १९ व २५)

तब जिसके दाएँ हाथ में उसका कर्मों का लेखा दिया जाएगा वह कहेगा लीजिए पढ़ो मेरा कर्म-लेख..........और जिसको कर्मों का लेखा बाएँ हाथ में दिया जाएगा वह कहेगा ऐ काश! न मिलता मेरा कर्मों का लेखा।

इस देने के ढंग से ही निर्णय का पता तो लग ही गया। अब आगे और कार्यवाही से क्या लाभ? दोज़ख़ वाले दोज़ख़ के लिए बहिश्त वाले बहिश्त के लिए तैयार हो गए। परन्तु कानून व्यवस्था फिर व्यवस्था है। इसे अल्लामियाँ भी निरस्त नहीं करते।

इधर तो इन भाग्य लेखों को नित्य कहा है। अब कहते हैं—

वल्लाहो यकतुबो मायुबेतून। —(सूरते निसा आयत ८१)

और अल्लाह लिखता है जो यह ठहराते हैं।

तफ़सीरे हुसैनी में इस पर लिखा है—

ख़ुदा मे नवीसद दरलोहे महफ़ूज़ या किरामुल कातिबीन ब अमरे ख़ुदा मे नवीसन्द।

ख़ुदा लोहे महफ़ूज़ में लिखता है या लिखने वालों में सम्मानीय ख़ुदा की आज्ञा से लिखते हैं।

नित्य लेख की पुष्टि की जाती है? या नया लेख लिखा जाता है? सम्भवतः पैंसिल के लेख पर स्याही या कोई रंग चढ़ाया जाता हो। इस प्रकार के स्मरण लेख रखने की उन्हें आवश्यकता होती है

जिन्हें भूल जाने का भय हो, संसार का ज्ञान रखने वाले अल्लामियाँ को इतना दफ्तर रखने की क्या आवश्यकता पड़ी है? व्यर्थ की लेखकों में श्रेष्ठों की मेहनत। इतनी मात्रा में लेखन सामग्री का अपव्यय क्यों किया जाता है?

फिर यह भी तो आवश्यक नहीं कि स्मृतियाँ कर्मों का सही रोज़नामचा हों। क्योंकि एक और जगह फ़रमाया है—

व यमहू अल्लाहो मायशाओ। —(सूरते रअद आयत ३९)

और मिटा देता है अल्लाह जो चाहता है।

तफ़सीरे हुसैनी में इस आयत पर लिखा है—

आंचे अज़ बन्दा सादिर शुवद अज़ अकवालो अफ़आल हमा रा वनवीसन्द आं दफ्तर रा बमवमाकिफ़ अरज़ रसानन्द, हक्के सुबहानहू कोलो फ़ेले कि सवाबो व ख़ताए बदां मुतफ़र्रअनेस्त महव कुनद व बाकी रा मसबत बिगुज़ारद या सैय्याते ताइब रा महव कुनद।

जो कुछ बन्दे से काम होता है उसका लेखा वाणियों व कर्मों की दशा में वह सब लिखते हैं और उस रजिस्टर को पेश करते हैं। ख़ुदा-वन्द उस वाणी व कर्म को कि कोई पुरस्कार या दण्ड उससे कल्पनीय नहीं मिटा देते हैं व शेष को लिखा रहने देते हैं या तौबा करने वाले की बुराइयों को मिटा देते हैं।

जब यह शासकीय अधिकार भी काम में आते रहते हैं तो लिखना व्यर्थ है, परन्तु हाँ, कचहरी की परम्परा का पालन होना चाहिए। अल्लामियाँ ने स्वयं या फ़रिश्तों ने लिखा और अल्लामियाँ ने संशोधन करके पुष्टि कर दी, परन्तु कचहरियों में तो साक्षी भी होते हैं। अल्लाहमियाँ की कचहरी बिना साक्षियों के कैसे रहे? फ़रमाया है—

योमा नदऊ कुल्ला अनासिन बिइमामिहिम।

—(बनी इसराईल आयत ७१)

जिस दिन बुलाएंगे सब मनुष्यों को उनके इमाम पेशवा मार्गदर्शकों के सहित।

बजाआ बिन्नबीयिन्ना व श्शुहदाए कज़ाबैनहुम बिलहक्के।

—(सूरते जुमर आयत ६९)

और लाए जाएँगे पैग़म्बर और साक्षी और निर्णय किया जाएगा उनमें न्याय से।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है कि साक्षियों से तात्पर्य—

मुराद उम्मते मुहम्मद अस्त।

तात्पर्य हज़रत मुहम्मद की उम्मत से है।

परन्तु नहीं, साक्षी कुछ और भी है—

व योमा तशहदो अलैहिम अलसनतहुम व ऐदिहिम व औजलहुम बिमा कानूयअमलून। —(सूरते नूर आयत २४)

जिस दिन साक्षी देंगी उन पर उनकी वाणियाँ और उनके हाथ और उनके पाँव। जिनसे वह काम करते थे।

व तशहदो अरजलहुम बिमा कानूयकसिबून।

—(सूरते यासीन आयत ६५)

और गवाही देंगे पाँव उनके जो कुछ वह कमाते थे।

हत्ताइज़ामाजाऊहा शहिदा अलैहिम समउहुम व अवसारूहुम व जलूदुहुम बिमाकानूयअमलून। वा कालूलजुलूदहुम लिमा शाहिदा तुम अलैना कालू अन्तकनल्लाहुल्लज़ी अन्तका कुल्लाशैअन।

—(सूरते हम सजदा आयत २०-२१)

यहाँ तक कि जब जाएँगे पास उसके, साक्षी देंगे उन पर कान उनके और आँखें उनकी और चमड़े उनके, जो कुछ करते थे और वह कहेंगे अपने चमड़ों से क्यों साक्षी दी तुमने हमारे ऊपर। वह कहेंगे बुलवाया हमको अल्लाह ने जिसने बुलवाया प्रत्येक वस्तु को।

एक एक अंग बोलेगा!—यह अन्तिम साक्षियाँ खूब रहीं, शरीरों के यह अंग कबर की मिट्टी में मिट्टी हो चुके। रहा केवल रीढ़ की हड्डी का निचला भाग। इस पर वर्षा पड़ने से शरीर उगेगा। कयामत की कचहरी में पहुँचे तो इन अंगों को वाणी भी मिल गई, क्या यह वही अंग नहीं जो संसार में थे? परन्तु अब तो मिट्टी नहीं रही। बनाएँगे किससे? यदि यह सारी वाक्य रचना केवल अलंकारिक है तो वह तो नित्य प्रति हो ही रहा है। अपराधी की आँखें अपराध की स्वीकृति तो देती हैं? कयामत में विशेष क्या होना है? **चमड़ा**

कहता है। मुझे बुलवाता है अल्लाह मियाँ। क्या वही बात बुलवाता है जो चाहता है या बोलने की स्वतन्त्रता है? स्वतन्त्रता न रही तो साक्षी विश्वसनीय न रही। अल्लाहमियाँ की इच्छा हो तो क्या स्वयं कर्त्ता अपने अपराध को स्वीकार करने को तैयार नहीं? वह विचारा तो बाएँ हाथ में कर्मों का लेखा मिलते ही काँप गया था। फिर और साक्षी की आवश्यकता क्या पड़ी थी? क्या केवल औपचारिकता पूरा करनी थी? यह तो केवल कम ज्ञान वालों के लिए होता है। **सर्वज्ञ का अपना ज्ञान पर्याप्त है फिर यहाँ तो प्रत्येक के कार्यों का लेखा स्वयं बना दिया है प्रारम्भ से ही जिससे बाल बराबर भी इधर-उधर नहीं हो सकता।** इसके बाद ख़ुदा के अपने हिसाब रखने वाले निश्चित हैं। वे इस बात के उत्तरदायी हैं कि जो कुछ भी नित्य सत्ता का लेख है वह पूरी तरह कार्यान्वित हुआ है। सम्भव है कि वह दूसरा रजिस्टर तैयार करते हों जिसकी लोहे महफ़ूज़ से मिलान की जाती हो फिर अल्लामियाँ अपने पवित्र हाथों से उसमें घट बढ़ करते हैं। नबियों व उनके समुदाय की साक्षी अलग है। फिर प्रत्येक कर्त्ता को वाणी प्रदान की जाती है और वह कर्त्ता की इच्छा के विरुद्ध पर्चा फड़वा देते हैं। साक्षी के विषय का स्वयं निर्णय देते हैं या कोई और? इसमें सन्देह है।

कचहरी की कार्यवाही पूरी है। हाँ! कमी है तो केवल वकील की व युक्ति की, भला सर्वज्ञ न्यायकारी को इसकी क्या आवश्यकता है? मगर फिर दूसरे प्रावधानों की क्या आवश्यकता? और यदि यह आवश्यकता का प्रश्न एक बार चल पड़े तो फिर **प्रारम्भ में ही अभाव से भाव में लाने की क्या आवश्यकता?** पाप कराने की भी अच्छे भले अल्लामियाँ को क्या आवश्यकता? प्रारम्भ से अन्त काल तक अल्लामियाँ की इच्छा के चमत्कार हैं। यदि अब इन साक्षियों के पश्चात् कर्त्ता को बोलने की आज्ञा हो तो वह कहे—मुझसे अल्लाह ताला ने कराया है जो सबसे कराता है—

वही कातिल वही मुख़बिर वही मुन्सिफ़ भी।
अकरिबा मेरे करें ख़ून का दावा किस पर॥[1]

---

१. अर्थात् हत्यारा भी वही है, सूचना देने वाला भी वही है और इस अपराध के निर्णय के लिए न्यायाधीश भी उसीको बनाया जाता है। मेरे सगे-सम्बन्धी मेरी हत्या का केस किस पर करें?

उर्दू के इस प्रसिद्ध पद्य का अर्थ देना हमने आवश्यक जाना। —'जिज्ञासु'

अंगों ने साक्षी देने को दे दी, अब उन पर भी 'फ़तवा' ख़ुदाई आदेश लागू होता है। फ़रमाया है—

कल्लइल्लन लम यन्तही लनसफ़अन, नासियतुन काज़िबतिन ख़ातियतिन। —(सूरते अलक आयत १५-१६)

निश्चय ही हम उसको पेशानी के साथ घसीटेंगे वह पेशानी जो अपराधी व झूठी है।

दण्ड की विचित्र प्रक्रिया!—ऊपर मनुष्य को उसके अंगों से पृथक् कर दिया था। अनुमान हुआ था कि आर्य दर्शन की भाँति कुरान शरीफ़ भी मानव को चेतन कर्त्ता और उसके अंगों को अचेतन साधन निर्धारित करता है, **परन्तु पेशानी (सिर का अग्र भाग) को दण्ड दिये जाने से अनुमान होता है कि सम्भव है नास्तिकों के सिद्धान्त के अनुसार यहाँ भी मस्तिष्क को कर्त्ता मानते हों।** क्योंकि आत्मा का स्वरूप कुरान शरीफ़ में वर्णन नहीं किया गया। यदि पेशानी भी शरीर के दूसरे अंगों की भाँति आत्मा से पृथक् है तो इस विचारी को दण्ड के लिए क्यों चुना गया? क्या दण्ड देते समय दूसरे अंगों को जो सरकारी साक्षी बने थे बरी कर दिया जाएगा? सांसारिक न्यायालयों में यह परम्परा है ख़ुदाई न्यायालय में भी सम्भव है ऐसा ही हो। इस दशा में नरक की पीड़ा उठाने वाले मनुष्य का रूप व दशा क्या होगी? **वाणी छूट गई, कान नहीं, आँखें निरस्त, चमड़ा अलग हो गया। पाँव भी गये। पेशानी भी बिना चमड़े की होगी जो घसीटी जायेगी। यदि कुछ अंगों को इसलिए छुट्टी मिल जाए कि उन्होंने सत्य साक्षी दी है और कुछ इसलिए कि उनका दुरुपयोग हुआ है तो दण्ड की पात्र केवल आत्मा ही रह जाए जो दर्शन के अनुसार उचित है, अचेतन के दण्ड के क्या अर्थ?**

बहिश्त (स्वर्ग)

मुसलमानों के पास अपने धर्म की ओर लालच देने वाला बौद्धिक आधार केवल बहिश्त (स्वर्ग) की कल्पना है। यह वह स्थान है जहाँ पर प्रत्येक निष्पाप मुसलमान जाएगा। वहाँ दुःख का सर्वथा अभाव है, सुख ही सुख है और सुख भी ऐसा जो कभी समाप्त नहीं होगा।

कुरान में लिखा है—

अल्लज़ी अहल्लना दारलमुकामते मिनफ़ज़लिही ला यमस्सुना फ़ीहा नसवुन वला यमस्सुनाफ़ीहा लग़ूबुन।

—(सूरते फ़ातिर आयत ३५)

जिसने उतारा हमको सदा रहने वाले घर में, हमें उसमें कोई परिश्रम नहीं करना पड़ता और न उसमें हम कभी थकान अनुभव करते हैं।

वहाँ के सुख बिना परिश्रम के प्राप्त होते हैं और उसका मज़ा किरकिरा नहीं होता फिर वह असीम है। फिर फ़रमाया है—

उलाइ का असहाबुल जन्नता हुम फ़ीहा ख़ालिदून।

—(सूरते बकर आयत ८२)

वे रहने वाले हैं जन्नत के वह उसमें सदा रहेंगे।

तिलका हदूदुल्लाहे वमन एतुएल्लाहा व रसूलहू यदख़िलदू जन्नता तजरी मिनतहतिहल अनहारो ख़ालिदीना फ़ीहा व जालिकन फ़ौज़ुल अज़ीम। —(सूरते निसा आयत १३)

यह ख़ुदा की सीमाएँ हैं जो आज्ञा पालन करेगा ख़ुदा व उसके रसूल की उसे (ख़ुदा) स्वर्ग में प्रविष्ट करेगा जिसके नीचे नहरें चलती हैं। उनमें वह सदा रहेगा और यही सबसे बड़ी सफलता है।

व अम्मल्लजीना सइदू फ़फ़िलजन्नते ख़ालिदीना फ़ीहा मादाम तिस्समावाते वल अरज़ो। —(सूरते हूद आयत १०७)

और जो लोग सौभाग्यशाली बनाए गए हैं वे जन्नत में हैं जब

तक कि रहे ज़मीन और आसमान।

एक विरोधाभास—कयामत के वर्णन में नरसिंहा फूंका जाते ही आसमान व ज़मीन के नष्ट हो जाने का वर्णन किया जा चुका है। परन्तु यहाँ फ़रमाया है कि बहिश्त में निवास उसी समय तक रहेगा जब तक ज़मीन व आसमान रहेंगे। बहिश्त में जाना ही होगा जब कयामत हो जाएगी। इन दोनों वचनों में स्पष्ट विरोधाभास है। ज़मीन एक बनी हुई वस्तु है और जो वस्तु बनी होती है वह नष्ट भी अवश्य होती है। यदि बहिश्त में निवास की अवधि भूमि के बने रहने की अवधि तक है तो बहिश्त सदा तक रहने वाला न रहा। इस बात पर ध्यान न भी दें कि ज़मीन का बहिश्त से सम्बन्ध भी क्या है? क्या जन्नत के निवासी भूमि पर ही रहेंगे? अथवा कोई और रचना भूमि पर लाई जाएगी?

हमने ऊपर निवेदन किया था कि कुरान में पुण्य का फल दोगुना किए जाने का वचन है। यदि कोई मनुष्य सारी आयु पुण्य ही करता जाए तो भी उसकी मात्रा सीमित ही रहेगी। यदि इस सीमित मात्रा को दुगना करके इसके लाभ प्राप्ति का काल असीम कर दिया, अर्थात् असीम काल तक सारी लाभ प्राप्ति का आनन्द पुण्य का दोगुना ही रहा तो बहिश्त के मज़े में क्या मिठास रहेगा? मिठास का प्रश्न अलग है। दोगुना का अर्थ शायद दोगुना न हो, कई गुना हो। आओ पहले यह देखें कि जन्नत के भोगों में मिलना क्या है? फ़रमाया है—

जन्नाते अदनिन मुफ़त्तहतन लहुमुल अबवाबे मुत्तकईन फ़ीहे बिफ़ाकिततिन कसीरतिनव्वशराबिन, व इन्दहुम कसरातुतरफ़े अतराबुन। —(सूरते साद आयत ५०-५१-५२)

बाग है हमेशा रहने वाले, खुले हैं द्वार उनके लिए उसमें तकिया लगाए होंगे। मँगवाएंगे बहुत मेवे और पीने की चीजें और निकट होंगी लजीले नयनों वाली समवयस्क।

खुले द्वार बताते हैं कि कोई असीम वस्तु नहीं।

फ़असहाबुल मैमनते.......अलासुरुरिन मौज़ूनतिन मुत्तकईना अलैहा मुतकाबिलीना, यतूफ़ी अलैहिम विल्दानुन मुरवल्लिदूना वि अकवाबिन व अबारोका व कासिन मिन मुईन। लायुसद्दऊना अनहा वला युन्जफ़ूना व फ़ाकिहतिन मिम्मा यतरवर्रिऊना व लहुमे तैरिन मिम्मा यश्तहून व हूरुन ऐनुन कअमसालिल्लोलु-एलमकनून लजाअन्बिमा कानूय अमलून.......व फ़रशिन मरफ़ू-अतिन इन्ना अन्श अनहुन्ना इन्शाअन फ़हअलना हुन्ना अबकारन, अरबन अतराबन लिअस बिलयामीन।

—(सूरते वाकिया आयत ८-१०,१५-२३,३४-३५,३८)

तो दाहिने हाथ वाले लोग, कैसे हैं, दाहिने हाथ के?.........जड़ाऊ तख़्तों के ऊपर बैठे हैं तकिया लगाएँ। आस-पास घूमेंगे उनके लड़के हमेशा रहने वाले प्यालों के साथ और आफ़्ताबों के और साफ़ शराब के प्यालों के और उनके सिर न दुखते हैं न (नशे में) बहकते हैं। और उनकी पसन्द के मेवे और मन चाहें पंछियों के मांस के और उनके लिए स्त्रियाँ हैं गोरी बड़ी आँखों वाली, जैसे छुपे हुए मोती हैं.......और ऊँचे बिछौने, सचमुच हमने इन स्त्रियों को एक प्रकार से उत्पन्न किया है हमने कुमारियों..........पतियों वाली समवयस्क दाहिनी ओर वालों के लिए।

उलाइका लहुमजन्नातो अदनिन तजरी मिन तहतिहितमुल-अनहारो युहल्लूना फ़ीहा मिनअसा विरामिन ज़हबिन व यलबिसूना सियावान ख़ुज़रन मिन सुन्दुसिन व इस्तबुरिमिन मुत्तकईनाफ़ीहा अललअराइके निअमस्सवाबो व हसुनत मुरतफ़िकन।

—(सूरते कहफ़ आयत ३०)

ये लोग हैं उनके लिये बाग हमेशा रहने वाले नीचे नहरें चलती हैं, उन्हें गहने पहनाए जाएँगे और कंगन सोने के और पहनेंगे पतले हरे रंग के कपड़े और गाढ़े रेशम के वहाँ तकिए लगाकर तख़्तों पर बैंठेंगे अच्छा है पुण्य फल व अच्छा विश्राम स्थल—

युताफो अिलैहिम बिकासिन मिनमुई न बैजाओलज्जतिन लिलशारिबीन.......वइन्दहुम कसरातुत्तर फे ऐनुन कअन्हुन्ना बेजुन मकनून........। —(सूरते साफ़ात आयत ४५-४९)

फिराया जाएगा उन पर प्याला उत्तम सफ़ेद शराब का पीने में लज़ीज़ है पीने वालों के लिए.........उनके पास होंगी नीची दृष्टि

वाली बड़ी आँखों वाली जैसे अंडे छुपे हुए हैं।

इन हूरों के साथ सम्बन्ध क्या होगा? फ़रमाया है—

व जव्वजनाहुम बिहूरिन एनिन।

—(सूरते दुख़ान आयात ५४)

और ब्याह देंगे हम उनको मोटी आँखों वाली हूरों के साथ शेष रहे ग़िलमान (सुन्दर लड़के) उनका सम्बन्ध दास का विदित होता है और कहा है—

व यतूफ़ो अलैहिम विलदानुन मुख़ल्लिदून इज़ारऐतहुम हसिब-तहुमलौलुअन मनसूरा............व हल्लू साविरामिन फ़िज़्ज़तिन व सकाहुम रब्बु हुमशरावन तहूरा।

—(सूरते दहर आयत १९-२१)

और फिरेंगे उनके आस-पास लड़के हमेशा रहने वाले। जब तू देखेगा उनको कल्पना करेगा मोती बिखरे हुए। और पहनाए जाएँगे कंगन चाँदी के और पिलाएगा रब उनका उनको पवित्र शराब।

पवित्र शराब

अल्लामियाँ के हाथ में चीज़ अच्छी दी है। परन्तु सम्भव है सांसारिक शराब व जन्नत की शराब में केवल नाम की समानता हो, नहीं! कहा है—

व बशिरल्लज़ीना आमनू व अमिलुस्साहिलाते इन्ना लहुम जन्नातिन तजरी मिन तेहतिहल अनहारो कुल्लमा रूज़िकू मिनहा मिनसमरतिन रिज़कन कालू हाजल्ल जी रूज़िकना मिनकबलो व आतू बिहीमुतशाबिहा वलहुम फीहा अजवाजुन मुतहहरतुन व हुम फ़ीहा ख़ालिदून। —(सूरते बकर आयत २५)

और जो ईमान लाते हैं उन्हें शुभ सन्देश दे जो शुभ काम करते हैं कि उनके लिए बाग है जिनके नीचे नहरें बहतीं हैं। जब उन्हें उस फल का भाग दिया जाएगा जो उनका भोग्य पदार्थ है तो कहेंगे यह वही है जो हमें पहले भी दिया गया था और वह उसी के समान दिये जायेंगे और उनके लिए स्त्रियाँ हैं पवित्र........वह वहाँ सदा रहने वाले हैं।

पवित्र (पाकीज़ा) की व्याख्या तफ़सीरे जलालैन में की है— वह मासिक धर्म व गन्दगी से मुक्त (पाक) हैं।

इन सभी भोग विलासों को देखकर एक विलासी धनवान के महल की कल्पना हो सकती है कि उनमें नहरें, सोने और चाँदी के आभूषण, पतले व गाढ़े रेशम के वस्त्र, जड़ाऊ तख्त, मेवे, शराब, पंछियों का मांस, लड़के जैसे मोती बिखरे हुए, शराब के प्याले हाथों में लिए फिर रहे हैं। पास में स्त्रियाँ बैठी हैं। मोटी आँखों वाली, गोरी, सुन्दर जैसे छुपे हुए मोती या अण्डे, उनसे विवाह भी कर दिया गया है। केवल सांसारिक भोग-विलास की पराकाष्ठा है। **हाँ! वर्तमान काल के विज्ञान द्वारा आविष्कृत कोई वस्तु वहाँ नहीं रखी गई।** सो उस समय के अरब में ऐसी कोई चीज़ थी ही नहीं। और फिर स्पष्ट कहा है कि सांसारिक उच्च भोग्य पदार्थों के समान ही वे सब पुरस्कार हैं। सम्भव है कि किसी भोगी विलासी के मुँह में इन वर्णनों से पानी भर आए। आध्यात्मिकता के साधक लोग तो इससे नाक भौं सिकोड़ लेंगे। सांसारिक भोग्य पदार्थ अपने आप में हेय वस्तु नहीं हैं। उनका एक सीमा के **अन्दर उपयोग लाभदायक है**। उचित है। परन्तु यहाँ तो कुछ मर्यादा ही निश्चित नहीं और फिर वह स्वाद तो मनोरंजन का ही साधन होता है जिसके लिए परिश्रम करना पड़े। परन्तु बहिश्त में परिश्रम का नाम व निशान ही नहीं। जब उपहार सांसारिक पदार्थों जैसे दिए हैं तो उनमें रहकर स्वास्थ्य को सुरक्षित करने के साधन भी तो वैसे ही कर देना था। **परिश्रम व उद्यम वैभवीय दोषों के साधन भी तो वैसे ही कर देना था, परिश्रम व उद्यम वैभवीय दोषों के सुधारक होते हैं।** स्वर्ग में दोषों के तो सारे साधन उपस्थित हैं, परन्तु सुधार का कोई साधन उपलब्ध नहीं इसीलिए महर्षि ने फ़रमाया है कि—"**सदा का सुख भी दुःख हो जाता है।**" चौदहवाँ समुल्लास वाक्य १०४।

बहिश्त में खाने-पीने व विवाह का वर्णन तो कर दिया जिस से प्रकट है कि स्त्री पुरुष के सम्बन्ध वहाँ विद्यमान रहते हैं, परन्तु विवाह का जो फल है अर्थात् सन्तान उसका कोई वर्णन नहीं। जलालैन ने मासिक धर्म को गन्दगी कहकर उड़ा दिया है। लड़के वहाँ पहले ही विद्यमान हैं और उन्हें सदा लड़के ही रहना है। भला यह किस लिए? सेवा युवक भी कर सकते थे, बूढ़े भी। बिखरे हुए

मोतियों से वहाँ क्या तात्पर्य है जिनके सुपुर्द सेवा भी यह लगी हुई है कि प्याले भर-भर के पिलाते जावो ?

मल-मूत्र से सड़ांध होगी तो—आनन्द भौतिक है तो इन के भौतिक परिणामों से उपेक्षा भी सम्भव नहीं। इतने खाने-पीने पर जहाँ परिश्रम का अवसर नहीं, स्पष्ट परिणाम है रोग। वह होगा या नहीं ? **मूत्र पुरीष होगा या नहीं होगा तो उसके शुद्ध करने का साधन भी कर दिया होगा**। इससे दुर्गन्ध भी उठेगी। मांस खाना है तो वधशाला भी चाहिए। यह वध करने की सेवा किसके सुपुर्द होगी। और रक्त व अन्य गंदगियाँ सड़ांध उत्पन्न नहीं करेंगी ? भंगी व झाड़ू वाले किनसे बनाये जाएँगे। बहिश्तियों में से या दोज़खियों में से ? मौलाना सनाउल्ला फ़रमाते हैं—

स्त्रियों को क्या मिला ?—यह बेगार काफ़िरों से ली जाएगी। अच्छा है, किसी बहाने बहिश्त में तो जायेंगे, परन्तु क्या दोज़ख भी उनके साथ जाएगा ? या थोड़ी देर के लिये छूट्टी मिलेगी। पुरुषों के लिए यह सारी सुविधा कर दी मगर जायेंगी मुसलमान स्त्रियाँ भी। क्योंकि कहा है—

वअदल्लाहु लमौमिनीना बलमौमिनाते जन्नाते।

—(सूरते तौबा आयत ६९)

और वचन दिया है अल्लाह ने मुसलमान मर्दों व स्त्रियों से जन्नत का।

उनका विवाह होगा या कुंवारी रहेंगी ? और वह भी पवित्र शराब पक्षियों के मांस से लाभान्वित हुआ करेंगी या नहीं ? हूरें उनके किस काम आयेंगी ? विवाह के! सम्भव है कोई साहब कहें कि मुसलमान स्त्रियों का विवाह उनके भूतपूर्व पतियों से होगा। कई ऐसी मुसलमान स्त्रियाँ भी तो हो सकती हैं जो विवाह से पूर्व मर चुकी हों। परन्तु बहु विवाह वहाँ भी वैध है। यदि विवाहित पत्नी और पति के कर्मों में अन्तर होने के कारण एक बहिश्त में व एक दोज़ख में चला गया तो विवाहिताओं को विधवा घोषित करना तो सम्भवत: है, अत्याचार है[१]। बूढ़े मोमिनों (मुसलमानों) का उनकी सम वयस्क

१. ये सब प्रश्न अब मुसलमान विद्वान् भी उठा रहे हैं। मौलाना न्याज़ फ़तहपुरी व अनवरशेख़ की भी अब यही शंकायें हैं। —'जिज्ञासु'

हूरों से विवाह कर देने से क्या लाभ है ? शरीर वही संसार वाला फिर से उत्पन्न किया जाना है तो बूढ़ों के अंगों का तो यहाँ पर्याप्त ह्रास हो चुका होगा।

यह हुईं बहिश्त की नैतिक व सांस्कृतिक कठिनाईयाँ। अब इस पर एक दार्शनिक दृष्टि डाल लें। कहा है कि ग़िलमान इसमें सदा रहेंगे। यही दशा हूरों की है और दोनों आत्माओं वाले हैं। प्रश्न होता है कि जब ऊपर बहिश्त के निवास को—

जज़ाउन विमा कानू यअमलून। —(सूरते वाकिया)

किये गये कर्मों का पुरस्कार कहा है **तो हुरें व ग़िलमान (छोकरे) वहाँ किस कार्य के कारण पहुँचे हैं**। मौलाना सनाउल्ला लिखते हैं। बुराई न करने के कारण। मौलाना साथ ही फ़रमाते हैं—

कम आयु के बच्चे जो युवक होने से पहले ही मर जाते हैं वह भी जन्नती होते हैं, तो क्या यह सबसे बड़ा पुण्य का काम नहीं कि **किसी को युवक बनने से पूर्व ही उसे जन्नत भेज दिया जाए ?** जीवित प्राणियों की सृष्टि में एक श्रेणी को बिना कर्म के जन्नत में बसाना और एक श्रेणी पर कर्मों का बन्धन डालना न्याय नहीं। अब और एक सवाल भी होता है कि क्या ये हूरें और ग़िलमान कयामत के बाद उत्पन्न होंगे या वहाँ पहले से ही विद्यमान हैं ? कुरान में बहिश्त में आदम के जाने का वर्णन है सो वह बहिश्त पूरे साज़ो सामान के साथ उस समय होगा और एक स्थान पर फ़रमाया है—

फ़ीहा अनहारुन मिन माइन ग़ैरा आसिनिन व अनहारुन मिनल्लबने लम यतग़ैय्यरात अमहू व अनहारुन मिनरवमरिन लज़्ज़तिन लिलशारिबीन व अनहारुन मिनअसुलिन मुसफ़्फ़ा।

—(सूरते मुहम्मद आयत १५)

और उसमें नहरें हैं पानी की जो सड़ता नहीं और नहरें हैं दूध की जिसका स्वाद बदलता नहीं और स्वादिष्ट शराब की नहरें हैं पीने वालों के लिये और शुद्ध शहद की नहरें हैं।

''हैं'' के अर्थ हैं **इस समय विद्यमान हैं**। इससे भी अधिक स्पष्ट हूरों का वर्णन निम्न प्रकार है—

लम यतसिहुन्ना इन्सुन कललहुम वलाजान।

—(सूरते रहमान रकूअ आयत ६)

और इससे पहले उनको किसी मनुष्य या जिन ने छुवा नहीं है।

यदि हूरें उत्पन्न होते ही बहिश्ती मर्दों को दे दी जातीं तो यह कहने की क्या आवश्यकता थी कि वह अछूती हैं? और पहले से विद्यमान होने की दशा में तो स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न पैदा होता है कि वहाँ क्या करती हैं? यदि उनकी उत्पत्ति का उद्देश्य मोमिनों के मनोरंजन के अतिरिक्त और कुछ नहीं तो पूर्व का जीवन व्यर्थ हुआ क्योंकि कयामत से पूर्व वहाँ अल्लाह की सत्ता के सिवा और कोई है ही नहीं। इस बहिश्त की एक झाँकी का वर्णन कुरान में इस प्रकार आया है—

कीला अदख़ुलुल जन्नता काला या लैता कौमीयामलून बिमाग़फ़राली रब्बी व जअलनी मिनमुकर्रिमीन।

(अल्लाह) ने कहा प्रविष्ट हो जन्नत में, बोला कैसा अच्छा होता कि मेरी कौम जानती कि मेरे रब ने मुझे (जन्नत) बख़्शी और मुझे सम्माननीयों से बनाया है।

भाष्यकार इस घटना को एक मोमिन की कथा बताते हैं जो आज से पहले बहिश्त में जा चुका है। **तब तो बहिश्त पहले से है।** वहाँ वालों को किन कर्मों के पुरस्कार स्वरूप वहाँ जीवन मिला है? बुरे काम करने वालों ने भी कब कहा था कि हमें बुरे काम करने दो? एक तो पैदा करो फिर बुरा पैदा करो, **भाग्य लेख के बल पर बुरे काम कराओ**। फिर सदा के लिये दोज़ख़ में भी भेज दो। इस पर दावा यह है कि जुल्म नहीं करते!

भोले-भाले कम बुद्धि वाले ग्रामीण या जंगलों में रहने वाले जिन्होंने बाग की शक्ल तक नहीं देखी हो, कष्ट में जीवन बिताते हों, दरिद्रता के कारण न घरबार का सुख प्राप्त हो, न पेट भर खाने को मिले उनके लिए जन्नत की हवाओं व स्वादिष्ट भोजनों व सफ़ेद स्वादिष्ट शरबतों, कंगनों, पतले व गाढ़े रेशमी वस्त्रों और यदि वासना की भावना अधिक हो तो समवयस्क सौन्दर्य की मूर्तियों का आकर्षण हो सकता है। और यदि जिन लोगों को यह भोग-विलास यहाँ प्राप्त है वह उनके कड़वे प्रभावों से परिचित हैं ही। लाख कहो कि बहिश्त की शराब से सिर में दर्द नहीं होता होगा।

परन्तु यह तो फ़रमा दिया कि वह मज़े।

अतवाबिही मुतशाबिहिम। —(सूरते बकर)

यहाँ के मज़ों से मिलते-जुलते हैं। वह कहां मानने लगे कि शराब और सिर का दर्द न लाए। बहकने व अनर्गल प्रलाप पर विवश न करे! चलो एक बार शराब में वह विशेषता ही सही, शेष हूरें और ग़िलमान और पक्षियों का गोश्त (मांस), रेशम और कंगन उनका परिणाम तो वहाँ भी वही होगा जो यहाँ है। और यहाँ फिर इन भोगों की कुछ मर्यादा है वहाँ मर्यादा नहीं और पराकाष्ठा कभी नहीं होती। **किसी विवेकी के लिए यह भी एक रहस्य है कि जो वस्तु यहाँ मर्यादा में बरती हुई स्वयं इस्लाम में निषिद्ध है,** शराब पीना और वह भी अमर्यादित।[१]

व अनहारुन मिन ख़मरिन। —(सूरते मुहम्मद आयत १५)

शराब की नदियाँ हैं जो पीने वालों के लिए स्वादिष्ट हैं।[२]

बहिश्त में प्रविष्ट होते ही (शराब की नहरें) क्या पुण्य बन जाएँगी।

यह भी समझ में नहीं आता कि चाहे जाएँ सारी पवित्रात्माएँ ही, परन्तु फिर एक परहेज़गार और दूसरे परहेज़गार के पुण्यों में, दर्जे में अन्तर है **सबको एक-सी ईश्वरीय देने किस हिसाब से मिल जाएँगी? क्या कुरानी हिसाब में परहेज़गारी के हर दर्जे का दोगुना बहिश्त का आनन्द है**? फ़रमाया यह भी है कि प्रत्येक पाप माफ़ किया जा सकता है। पाप क्षमा का अर्थ है दण्ड न देना, परन्तु इस पाप से जो स्वभाव में **पाप की वृत्ति उत्पन्न हो गई वह तो बिना साधना के नष्ट नहीं हो सकती।** इन सब प्रकार के स्वभावों के लोगों को एक से भोग-विलास किस मात्रा से मिलेंगी? **और जो भेदभाव किया तो असमानता भी तो एक दुःख है**। छोटा धनवान बड़े धनवान से निर्धन है। कम सुख में रहने वाला अधिक सुख में रहने की अपेक्षा दुःख में ही है? और इस असमानता के होते अगर

---

१. अनवर शेख़जी ने इस प्रश्न को भी उठाया है। —'जिज्ञासु'
२. इस आयत के मूल में अर्थ छूट गये थे। —'जिज्ञासु'

पाप क्षमा कराए हुए चोर उचक्के भी वहाँ पहुँचे तब तो न जाने वहाँ क्या-क्या राजनीति का प्रबन्ध करने की आवश्यकता होगी?

कोई भला आदमी बहिश्त को जिस दृष्टिकोण से देखे उससे भ्रम व भ्रान्ति में पड़ता है। कोई आकर्षण अनुभव नहीं करता और जिन लोगों को आध्यात्मिकता (रुहानियत) की लगन लगी है उनकी दृष्टि में सांसारिक या उन जैसी पारलौकिक भोग सामग्री का लालच एक फन्दा है जिससे वह दूर ही रहना चाहते हैं। हम आश्चर्यचकित हैं कि कुरान ने यह भोग-विलास का जाल बिछाया किस लिए? परहेज़गारों को सद्ज्ञान देना था और सामान जो इकट्ठा किया है मद्य पीने वालों की अवस्था के अनुकूल है। ज़ौक महाकवि ने कहा है—

कब हक परस्त ज़ाहिद जन्नत परस्त है।
हूरों पै मर रहा है यह शहवत परस्त है॥

(अर्थात्) यह सत्य का पुजारी भगत जन्नत का पुजारी नहीं है यह तो जन्नत की सुन्दरियों पर मर रहा है, अतः यह कामाग्नि में जल रहा है।

और ग़ालिब फ़र्माते हैं—

ताअत में ता रहे न मै व अंगबीं की लाग।
दोज़ख़ में डाल दो कोई लेकर बहिश्त को॥

(अर्थात्) शरीर में शराब व सौन्दर्य के देखने की शक्ति तो बाकी ही नहीं इसीलिए हमारे लिए तो अच्छा यही है कि इस स्वर्ग को भी जाकर नरक में डाल दे ताकि नष्ट हो जाए।

मज़हब, धर्म और प्रस्तुत करे हूरें और ग़िलमान। और जड़ाऊ तख़्त! शराब और पंछियों के मांस। ग़ालिब ने इस बहिश्त की सत्ता ही स्वीकार नहीं की। केवल एक कल्पना मानकर कहा है—

ख़ूब मालूम है जन्नत की हकीकत लेकिन।
दिल के बहलाने को 'ग़ालिब' यह खयाल अच्छा है[१]॥

हम इतना भी नहीं मानते, इस शराब व कबाब हूरों व प्यारों से

१. इस्लामी बहिश्त का सर्वाधिक व सुकठोर खण्डन मिर्जा ग़ालिब ने किया है जिसे मुसलमान झूम-झूम कर पढ़ते हैं। —'जिज्ञासु'

दिल भी बहलाया तो कुछ आध्यात्मिक उन्नति का साधन न किया **इससे नैतिक दृष्टिकोण से पतन ही होगा। पाप एक शारीरिक होता है दूसरा बौद्धिक। हूरों, प्यालों, शराब कबाब की कल्पना ही मानसिक पाप है**। इससे पृथक् रहने व ऊँचा उठने का नाम ही धर्म है और कुरान ने इसी को......।

व फ़ौज़ुल अज़ीम। —(सूरते निसा)

बड़ी सफलता निर्धारित किया है। क्या कहें—

इधर हम स्वर्ग भोग-विलासों का विवरण देखते हैं उधर पढ़ते हैं—

व बश्शिरल्लज़ीना आमनू व अमिलुस्साहिते इन्नलहुम जन्नातुन।
—(सूरते बकर)

और शुभ सन्देश दे दे उन्हें जो ईमान लाए जिन्होंने कर्म किए अच्छे और उनके लिए जन्नतें हैं।

कहाँ सफ़ेद दाढ़ी वाले मूँछे कटवाए हुए सिर मुण्डे हुए वृद्ध लोग, माला हाथ में दिन-रात नमाज़ के आसन पर सिर झुकाए रहने वाले नमाज़ी, रोज़ा रखने वाले, कहाँ मोटी-मोटी काली-काली आँखों वाली गोरी हूरें बिखरे हुए मोती से लड़के जो शराब के प्याले और आफ़्ताबे लिए फिर रहे हैं। जड़ाऊ तख़्त और रेशम, शराब व कबाब, लगता है हज़रत मौलानाओं से मज़ाक हुआ है। ज़ौक की बात मान ली गई है—

ज़ौक जो मदरसे के बिगड़े हुए हैं मुल्ला।
उनको मैख़ाने में ले आओ संवर जाएँगे॥

एक आकर्षण है कि अल्लामियाँ ख़ुद पिलाएँगे, परन्तु नाम तो फिर भी शराब ही है। लाख बिखरे हुए मोतियों के हाथ से हो या अल्लामियाँ के विशेष हाथ से मौलाना लोग इन्कार कर देंगे।

पुराणों की कहानियों में बड़े-बड़े महापुरुषों को ऐसे प्रलोभन लालच में डालने का वर्णन है। इस प्रलोभन में दैवीय हाथ काम कर रहा होता है। साधक की सफलता इसी में समझी जाती है कि वह प्रलोभन का शिकार न बने। इन्द्रियों का दमन करे यदि यही आशय

कुरान की इस वर्णन शैली का है तो मौलानाओं से यह सिफारिश की जाए कि भाई ज़रा सम्भलकर रहना। किसी ने डरते-डरते कहा है।[1]

माना कि पहुँच जाएँगे जन्नत में मुत्तकी।
पर बाँ ये मुत्तकी रहें मौला! यकीं नहीं॥

अर्थात् मान लिया कि परहेज़गार पवित्रात्मा लोग बहिश्त में पहुँच जायेंगे परन्तु ये वहाँ पवित्र ही बने रहेंगे, मेरे मौला! ऐसा विश्वास नहीं होता।

१. सत्यार्थप्रकाश के आधार पर इस अध्याय में बहिश्त व दोज़ख़ का जो दार्शनिक विवेचन किया गया है निष्पक्ष पाठक, सत्यान्वेषी बंधु इसे दार्शनिक दृष्टि से पढ़ेंगे तो उनको पता चलेगा कि ये सब प्रश्न पूरे विश्व में मुस्लिम व मुस्लिमेतर विद्वानों ने भी उठाये हैं। कुरान की आयतों को एक ओर रखकर उनके अर्थों पर विचार करते हुए उनकी समीक्षा पर पूर्वाग्रहमुक्त होकर कोई सोचेगा तो वह इस दार्शनिक चर्चा से लाभान्वित होगा। अपने आपको सत्य के बहुत निकट पायेगा। इस अध्याय में उठाये गये सभी प्रश्न अब मुसलमान लेखकों की पुस्तकों में मिलते हैं। डॉ० जेलानी ने जन्नत व हूरों की इन कहानियों का 'आसान इस्लाम' बताया है। —'जिज्ञासु'

दोज़ख़-नरक

दोज़ख़ (नरक) बहिश्त (स्वर्ग) का परस्पर विरोधी है। यह है काफ़िरों का घर (जो मुसलमान नहीं उनका निवास स्थान) फ़रमाया है—

व इन कुन्तुम फ़ीरैबिन मिन्मानज़्ज़लना अलाअब्दिना फ़ातू बिसूरतिन मिसिललिहव अदऊ शुहदाउकुम मिनदूनिल्लाहे इन कुन्तुम सादिकीन फ़इनलम तफ़अलूव लन तफ़अलू फ़त्तकुन्ना-रल्लती वकूदुहन्नासोवलहिजारतो उइद्दत लिलकाफ़िरीन।

—(सूरते बकर आयत २४-२५)

यदि तुम्हें सन्देह है (कुरान पर) जो हमने उतारा है अपने भक्त पर तो बनाकर लाओ उसके समान कोई एक सूरत (अध्याय) उस जैसी और बुलाओ अपने साक्षियों को ईश्वर के अतिरिक्त (जो भी हों) कि यदि तुम सच्चे हो। यदि तुम न बनाओ सचमुच तुम नहीं बना सकोगे। तो डरो उस अग्नि से जिसका ईंधन आदमी और पत्थर हैं और वह काफ़िरों के लिए तैयार की गई है।

काफ़िर इस्लाम की परिभाषा में अमुस्लिम को कहते हैं और यह दण्ड वर्णन किया जा रहा है केवल कुरान पर विश्वास न लाने का। **यदि कुरान के ईश्वरीय होने में सन्देह है तो इस पर तर्क न करो** वैसी रचना करो और यह अल्लाह का आदेश है कि नहीं बना सकोगे। अब नरक अग्नि तैयार है। यह तो सोच लेना था कि ईश्वरीय सन्देश को स्वीकार करने में **बुद्धि की कठिनाईयाँ भी बाधक हो सकती हैं क्या इनका इलाज दोज़ख़ है ?** दण्ड सदा बुरे विचार का होता है। **कोई बिना बुरी इच्छा के ईमानदारी से कुरान के ईश्वरीय होने से इन्कार करे तो ? और वह सच्चरित्र हो तब ?**

वत्तकू यौमन लातजज़ी नफ़नसु अन नफ़िसन शैअन वला युकबलो मिन्हा शफ़ाअतुन वला यूख़जो मिन्हा अदलुन बलाहुम युन्सरुन। —(सूरते बकर आयत ४८)

और डरो उस दिन से जब कोई जीव किसी भी जीव पर भरोसा नहीं करेगा न उसकी कोई सिफ़ारिश स्वीकार की जाएगी। न कोई बदला लिया जाएगा और न उन्हें सहायता मिलेगी।

तफ़सीरे हुसैनी में अन्तिम वाक्य पर लिखा है—

व नबाशंद काफ़िरां कि यारी दादा शवन्द।

और काफ़िरों को कोई किसी प्रकार सहायता नहीं दी जाएगी। परन्तु क्यों? क्या वह अल्लामियाँ की रचना नहीं है? न्यायालय के यह नियम तो बड़े उत्तम हैं कि सब अपने ऊपर ही भरोसा करें सिफ़ारिश व बदला न हो, फिर यह जो बार-बार लिखा है—

व मन ज़ल्लज़ीतशफ़आ इन्दहू इल्ला बिइज़निही।

—(बकर २५५)

कौन है जो उससे सिफ़ारिश कर सके, परन्तु उसकी आज्ञा से (कर सकता है)। यह आज्ञा से सिफ़ारिश करने के क्या अर्थ हैं? यदि हाकिम या न्यायाधीश की अपनी इच्छा क्षमा करने की है तो क्षमा कर दे किसी और पर अहसान क्यों करना कि आ सिफ़ारिश कर और मैं मान लूँ? **अहले इस्लाम इन आदेशों से हज़रत मुहम्मद की सिफ़ारिश का आदेश ग्रहण करते हैं**—

आयत ४८ का अनुवाद तफ़सीरे हुसैनी में इस प्रकार किया गया है—

वतरसीद अज़ अज़ाव रोज़े कि दरां रोज़ हक गुज़ारी न कुनद व नतवानद हेच नफ़से मोमिना अज़ नफ़से काफ़िरा, चीज़े रा अज़ मकाफ़ात या किफ़ायत न कुनद। हेच कस चीज़े अज़ अज़ाब पज़ीरफ़्ता नशवद अज़ नफ़से काफ़िरा, बराए ओ दरख़्वास्ते बरां तकदीर कि कसे शफ़ाअत कुनद व गिरफ़्ता न शवद अज़ां नफ़से काफ़िरा फ़दिया।

डरो उस दिन के अज़ाब (दुर्गति) से कि उस दिन न्याय न छुड़ाएगा और छुड़ा न सकेगा नहीं कोई मोमिन काफ़िर से कुछ बदले में या कोई बचाव नहीं करेगा। दुर्गति से कुछ, मंजूर नहीं होगी। काफ़िर से इस सम्बन्ध में प्रार्थना इस विषय में कि कोई सिफ़ारिश करे और काफ़िर से फ़दिया (प्रतिफल) न लिया जाएगा। तो क्या मोमिन के लिए यह सब कुछ हो जाएगा? अच्छा न्यायालय

है! दोज़ख़ की आग का वर्णन तो ऊपर हो ही चुका है। इसमें और क्या होगा? फ़रमाया है—

सुम्मा इन्नकुम अय्युहज़्ज़ालुनल मुकज़्ज़िबूनाल आकिलूना मिनशजरिन मिनज़कूमिन फ़मालिऊना मिन्हल बुतूना। फ़शारिबूना अलैहे मिनल हमीम फ़शारिबूना शुरबल हीमे।

—(सूरते वाकिया आयत ५१-५५)

फिर तुम वह हो जो पथभ्रष्ट हो व झुठलाते हो, सचमुच खाओ थूहर के पेड़ से, भरो उससे पेट फिर उस पर गर्म पानी पिओ व पिओ जैसे प्यासा ऊँट पीता है।

दोज़ख़ को आग का स्थान कहा है **इसमें थूहर ठहर सकेगी क्या? जल न जाएगी, पानी तो गर्म हो ही जाएगा।**

सूरते फ़जर में दोज़ख़ के लाए जाने का वर्णन है। यह उद्धरण किसी पिछले अध्याय में दिया जा चुका है।

व जाआ यौमइज़िन बिजहन्नम।

—(सूरते फ़जर आयत २३)

और उस दिन जहन्नम को लाया जाएगा।

इससे सिद्ध है वह **कोई सीमित वस्तु का नाम है**। इस आयत पर तफ़सीरे हुसैनी की टिप्पणी भी पीछे लिखी जा चुकी है। इसे यहाँ दोहराना अनावश्यक न होगा।

ख़बरस्त हफ़्ताद हज़ार ज़माम बाशदमर दोज़ख़ रा व हफ़्ताद हज़ार फ़रिश्ता बर हर ज़मामे शुदामे कशन्द व दोज़ख़ अज़ ख़शमे काफ़िरां मे जोशद व मे ख़िरोशद।

उद्धृत है कि दोज़ख़ की सत्तर हज़ार बागें हैं और सत्तर हज़ार फ़रिश्ते हर बाग पर एकत्रित होकर उसे खींचते हैं और दोज़ख़ काफ़िरों के गुस्से से जोश में आता है और शोर मचाता है।

कोई जन्नत, है क्या?

पेशानी घसीटे जाने का वर्णन ऊपर आ चुका है कहा है—

लनस्फअन बिन्नसियतिन। —(सूरते अलक आयत १५)

घसीटेंगे हम पेशानी।

अल्लामियाँ स्वयं पेशानी घसीटेंगे यह तो बड़ी कृपा है।

कोई पवित्रात्मा इससे ननुनच न करेगा। परन्तु फिर फ़रिश्ते किस काम आएँगे। एक और स्थान पर कहा है—

खुज़ूहो फ़अतिलूहो इला सवाइलहजीमे सुश्मासबतू फ़ोका रासिही मिन अज़ाबिल हमीम। —(सूरते दुखान ४७-४८)

पकड़ो उसको फिर घसीटो उसके दोज़ख़ के बीचों बीच फिर डालो उसके सिर पर गरम पानी का संकट।

यह आदेश किसे दिया गया इसका वर्णन नहीं, नरक की पीड़ा का वर्णन करते-करते अनायास यह आदेशात्मक रचना आ गई है। सम्भवतया यह आदेश फ़रिश्तों को किया जाता होगा और दण्ड की उग्रता के जोश में अल्लामियाँ स्वयं घसीटने लगते होंगे। किसी अत्याचार की भावना से ग्रस्त अधिकारी की-सी भाषा प्रतीत होती है। जो चपरासी के आने की प्रतीक्षा नहीं कर सकता और स्वयं दण्डनीय अपराधी पर हंटर बरसाने लगता है। थोड़ी शान कम होती है, परन्तु अपराधी के भाग्य जाग उठते हैं।

कहा तो था कि हम रंच मात्र भी अत्याचार नहीं करते हैं, परन्तु दोज़ख़ की अवधि भी वही निश्चित है जो जन्नत की। फ़रमाया है—

असहाबुन्नार व हुमखालिदून फ़ीहा।

—(सूरते बकर रुकुअ ३४)

दोज़ख़ वाले वह सदा उसी में रहते हैं।

कोई सारी आयु पाप ही करता जाए तो भी पाप की मात्रा सीमित रहेगी। दण्ड यदि इतना ही नहीं उससे दुगना भी दिया जाए। जैसा कयामत के वर्णन में कह चुके हैं फिर भी उसके लिए हमेशा की आग में झोंक देना घसीटते जाना, थूहर से पेट भरवा-भरवा कर गरम पानी पिलाते जाना, और दोज़ख़ी पर गरम पानी लोढाते जाना। क्या न्याय है? हाँ यह और बात है कि आग को धीमा कर दिया जाए आँच इतनी रह जाए कि सीमा रहित अवधि में अपराध की गर्मी के बराबर वा उससे दोगुनी हो सके पानी व थूहर का अनुपात भी वही हो और घसीटने में ज़ोर उतना ही खर्च किया जाए कि सदा के लिए केवल एक बार ही घसीटा जा सके। दयालु परमात्मा से कुछ दूर तो नहीं। यह दण्ड क्या होगा? उल्टा

प्यार हो जाएगा। अल्लामियाँ के हाथों यह नख़रों भरा दण्ड मिले। हम बहिश्त में भी हों तो भी हमारे मुँह में पानी भर आए कि काश हम दोज़ख़ में होते। तभी तो कहा है—

हाँ सितमगर तुझे कहने में मज़ा आता है।
लुत्फ़ में लुत्फ़ सितम सा तेरे पालूँ तो कहूँ॥

अर्थात् हाँ! तुझे अन्यायी कहने में बड़ा आनन्द प्राप्त होता है। तेरे अत्याचार में यदि मैं आनन्द ही आनन्द पा लूँ तो फिर कहूँ।[1]

कई बार किसी बड़े कृपालु प्रेमी के हाथों यातना, झाड़ व तिरस्कार पाकर व्यक्ति प्रसन्न होता व इतराता है।

१. यह भावार्थ मूल में नहीं दिया गया। —'जिज्ञासु'

जिहाद (धर्मयुद्ध)

जिहाद के सिद्धान्त ने इस्लाम को तलवार का धर्म बना दिया है[1]। इस्लामी परम्पराओं के अनुसार मुसलमानों के लिए, यदि उनमें शक्ति हो तो अमुस्लिमों पर आक्रमण करना, उनसे लड़ना और उन्हें मार डालना अथवा वे धार्मिक कर (जज़िया) देना स्वीकार करें तो ज़िम्मी (शरणागत) बना लेना धार्मिक कर्त्तव्य है। इसमें सन्देह नहीं कि कुरान में यह शिक्षा है कि—

व कातिलू की सबीलिल्लाहै अल्लज़ीना युकातलूनकुम।

—(सूरते बकर १९०)

और लड़ो ईश्वर के मार्ग में उनसे जो तुमसे लड़ते हैं।

परन्तु तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है कि—

ईं हुकुम ब आयते सैफ़ मन्सूख़ अस्त।

यह आदेश आयते सैफ़ द्वारा निरस्त किया गया है।

मुज़िहुल कुरान की टिप्पणी इस आयत पर यह है—

यह जो फ़रमाया है कि जो तुमसे लड़े उनसे लड़ो और अत्याचार न करो इसके अर्थ यह हैं कि लड़ाई में लड़कों, स्त्रियों व बूढ़ों को लक्ष्य बनाकर न मारे, लड़ने वालों को मारे।

जलालैन में कहा है—

यह आयत आगामी आयत से निरस्त हो गई।

अर्थात् लड़ने का आदेश केवल आत्मरक्षा के निमित्त ही नहीं, अपितु आक्रमणकारी युद्ध व झगड़ा करने का आदेश है।

---

१. आज विश्व में इस्लामी आतंकवाद फैला हुआ। मुस्लिम संस्थाओं व मौलवियों ने इन जिहादियों आतंकवादियों के विरुद्ध कोई फ़तवा नहीं दिया। न इनका उग्र विरोध किया है। यह जिहादी चिन्तन की ही तो उपज है। भारत में ही जिहादियों के विरुद्ध सामूहिक रूप से इस्लामी जोश से मुसलमानों ने कुछ भी नहीं किया। यदा कदा कुछ लोग गोलमोल शब्दों में आतंकवाद की निन्दा करते हुए जिहाद की अपनी व्याख्या कर देते हैं। —'जिज्ञासु'

कुरान में एक स्थान पर यह भी कहा गया है—

अफ़अन्ता तकरिहुन्नासो हत्ता यकूनुल मौमिनीम।

—(सूरते यूनुस आयत ९९)

ऐ मुहम्मद क्या तू लोगों पर उनके मुसलमान बनाने के लिए बलात्कार करेगा।

यह स्पष्ट ही अत्याचार का निषेध है। परन्तु इस पर भी भाष्यकारों ने लिख रखा है कि इस **निषेध को आयत सैफ़ ने निरस्त कर दिया है**। पाठक को यह आयत पढ़कर यह विचार भी होगा कि अल्लामियाँ को यह आदेश देने की आवश्यकता क्यों पड़ी ? क्यों हज़रत मुहम्मद से पूछताछ की गई ? क्या हज़रत मुहम्मद की इच्छा बलात्कार करने की थी ? यह इच्छा किसके आदेश से उत्पन्न हुई ? और क्या यह सम्भव नहीं कि विवश अल्लाह के प्यारे ने अपनी इच्छा अल्लाह मियाँ से मनवा ही ली हो ? भाष्यकारों का विचार है कि **निषेध जहाँ भी हुआ परिस्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण हुआ है।** अल्लाह मियाँ प्रतीक्षा करा रहे थे, जब परिस्थितियाँ अत्याचार करने के अनुकूल हो गईं तो वह आदेश भी प्रदान कर दिया और अब इन सब आदेशों के अर्थ यही लिए जाते हैं कि बिना किसी झिझक व संकोच के अपनी ओर से ही आक्रमण करो। अतएव हदाया जो सुन्नी सम्प्रदाय की प्रामाणिक संहिता है उसमें जिहाद (धर्मयुद्ध) के अध्याय का प्रारम्भ ही इन शब्दों से हुआ है—

व कत्तालुल कुफ़्फ़ारो बाजिबुन व इनलम यब्तदिओ विही।

और काफ़िरों से युद्ध करना कर्त्तव्य है चाहे वे अपनी ओर से प्रारम्भ न भी करें।

सर अब्दुल रहीम जो बंगाल हाईकोर्ट के जज रहे उन्होंने एक पुस्तक लिखी है '**मुस्लिम जुरिस्परोण्डेंस**', अर्थात् 'इस्लामी आचार संहिता' जिसे न्यायालयों में भी इस्लामी आचार संहिता पर प्रामाणिक पुस्तक माना जाता है। उसमें लिखा है—

"मक्का के काफ़िरों ने जो व्यवहार हज़रत रसूल से किया था उससे अनुमान किया जाता है कि इस्लाम को सदा अमुस्लिमों से शत्रुता व पक्षपात से **प्रतिशोध व ख़तरों की आशंका है**। इसलिए इस्लाम की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए इस्लामी राज्य यदि उसमें

ऐसा करने का सामर्थ्य है तो किसी पराए या विरोधी या अमुस्लिम राज्य के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर सकता है।'' —पृष्ठ ३९३

कुरान में फ़रमाया है—

या यत्तखिज़ुल मौमिनूना लकाफ़िरीना औलियाआ मिन दूनिल मौमिनीना व मन यफ़अलो ज़ालिका फ़लैसा मिनल्लाहे फी शैइन इल्ला अनतत्तकू मिनहुम तुकता।

—(सूरते आले इमरान आयत २८)

इस पर जलालैन की टिप्पणी यह है—

यदि किसी भय के कारण बचाव के दृष्टिकोण से मित्रता का वचन भी कर दिया जाए और दिल में उसके ईर्ष्या व शत्रुता रहे तो इसमें कोई हानि नहीं......जिस स्थान पर इस्लाम ने पूरी शक्ति नहीं पकड़ी है वहाँ अब भी यह आदेश चालू है.......काफ़िर की मित्रता ख़ुदा के क्रोध व अप्रसन्नता का कारण है।

जहाँ शत्रुता कर्त्तव्य हो जाए मित्रता उचित भी हो तो धोखाधड़ी के रूप में, वहाँ न्याय व प्रेम ही क्या है? अच्छे या बुरे सभी धर्मों में पाए जाते हैं। अमुस्लिम सज्जन भी हों तो भी उसके विरोधी रहो, यह कहाँ का सदाचार है?

यही बात सूरते निशा में फरमाई है—

या अय्युहल्लज़ीना आमनूला तत्तखिज़ुल काफ़िरीना औलिया-आमिन दूनिल मौमिनीन। —(सूरते निसा आयत १४४)

ऐ वह लोगो! जो ईमान लाए हो मत चुनो काफ़िरों में से मित्र केवल मुसलमानों को ही मित्र बनाओ।

आजकल की राजनीतिक कठिनाईयों का बीज इस आयत में स्पष्ट मिल जाता है। हर काफ़िर का स्थान दोज़ख़ निश्चित करने के पश्चात् ऐसी शिक्षाएँ आवश्यक हैं। जिन लोगों को अल्लाह ताला ने बनाया ही दोज़ख़ का ईंधन बनाने के लिए है उनसे मित्रता का सम्बन्ध कैसे अपनाया जा सकता है? वे तो ईश्वरीय क्रोध के पात्र हैं, उनका जीवन हो या मृत्यु समान है। उनके जीवन का मूल्य ही क्या? फ़रमाया है—

वक्तलुहुम हैसो तक्फ़िफ़तमूहुम व रवरिजूहुम मिन हैसो अख़र-जूकुम वलफ़ितनतो अशद्दो मिनल कतले।

—(सूरते बकर आयत १९१)

और मार डालो उनको जहाँ भी पाओ उनको और निकाल दो उनको जहाँ से निकाल दिया तुमको और कुफ्र कत्ल से भी बहुत बुरा है। —(अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन)

यह आयत **कातिलू फ़ीसबीलिल्लाह** के बाद आई है जिसमें कहा था जो तुमसे लड़े उनसे ही लड़ो। परन्तु जलालैन फ़रमाते हैं—

यह आयत अगली आयत द्वारा निरस्त (निरर्थक) कर दी गई है। अब अगली आयत वही है जिसका अनुवाद हमने ऊपर दिया है। इस पर जलालैन की टिप्पणी यह है—

और उनको जहाँ भी पाओ मारो और निकालो उनको मक्का से जैसे कि उन्होंने तुमको निकाला। (अतएव मक्का विजय के वर्ष में उन्हें निकाल दिया) और हरम (हजकाल) में जब तुम हज की अवस्था में हो, लड़ने से, जिसको तुम बुरा समझते हो इस्लामी परम्परा के विपरीत आचरण बहुत बुरा है।

सूरते इन्फ़ाल में कहा है—

व कातिलूहुम हत्तालातकूनो फ़ितनतुन व यकूनुद्दीना कुल्लहू लिल्लाहे। —(सूरते इन्फ़ाल आयत ३९)

और लड़ो उनसे यहाँ तक कि न शेष रहे काफ़िरों का उपद्रव व उनका वर्चस्व समाप्त हो जाये और सारा समुदाय अल्लाह के दीन (मत) में मिल जाये। —(अनुवाद शाह रफीउद्दीन)

जलालैन की टिप्पणी है—

और काफ़िरों की हत्या करो यहाँ तक कि इस्लाम विरोधी कोई भी विचारधारा मतभेद का नामो-निशान तक न बच पाए और सर्वत्र अल्लाह का दीन वहदहूला शरीक (कल्मा पढ़ने वाला) ही फैल जावे उसके सिवा किसी और की पूजा न रहे।

आगे फ़रमाया है—

या अय्युहन्नबियो हुर्रिंजल मौमिनीना अललकिताले इनयकुन आशिरुना सबिरुना यग़लिबू मियतैने। —(इन्फ़ाल)

ऐ पैग़म्बर मुसलमानों को (काफ़िरों से) लड़ने पर उत्तेजित करो यदि तुम में धीरज वाले (और मुकावले पर) जमने वाले बीस आदमी भी होंगे तो वह दो सौ पर अपनी विजय प्राप्त कर लेंगे।

—(टिप्पणी जलालैन)

सूरते तौबा में है—

या अय्युहल्लज़ीना आमनू कातिलुल्लज़ीना यनूतकुम मिनल-कुफ़्फ़ारे व लयजिदूफ़ीकुम ग़िलज़तन।

—(सूरते तौबा आयत १२३)

ऐ लोगो! जो ईमान लाए हो, लड़ो उन लोगों से जो तुम्हारे पास रहने वाले काफ़िर हैं। ऐसा होना जरूरी है कि वे तुम्हारे अन्दर कठोरता पावें।

अर्थात् सर्वप्रथम उन काफ़िरों से लड़ो जो तुमसे मिले हुए हैं फिर उनसे जो उनके निकटवर्ती हैं इस प्रकार एक के बाद दूसरे सभी काफ़िरों का मुकाबला करो।

सूरते फ़ुरकान में है—

फ़लाततअल काफ़िरीना व जाहदाहुम जिहादनकबीरन।

—(सूरते फ़ुरकान आयत ५२)

और काफ़िरों का कहना मत मान बल्कि उनके साथ बड़ा धर्मयुद्ध कर।

तफ़सीरे हुसैनी में जिहाद की परिभाषा दी है—

या ब कुरआन या ब इस्लाम या ब शमशीर या ब तरके इताअते एशां।

कुरान, इस्लाम या तलवार के बल पर अथवा उनकी अधीनता को छोड़ देने पर।

सूरते तहरीम में कहा है—

ता अय्युहन्नबिओ जाहिदलकुफ़्फ़ारा वलमुनाफ़िकीना वग़ालज़्ोअलैहुम। —(सूरते तहरीम)

ऐ पैग़म्बर काफ़िरों से धर्मयुद्ध कर (साथ वाणी के) उन पर विजय पाने के लिए उन पर लड़ाई कर उन्हें झिड़क व क्रोध कर।

सूरते सफ़ में आया है—

इन्नल्लाहा यहिब्बुल्लज़ीना युकातिलूना फ़ी सबीलिही सफ़्फ़न। —(सूरते सफ़्फ़ आयत ४)

वास्तव में ख़ुदा अपनाता है उनको जो गिरोह बनाकर उसके मार्ग में युद्ध करते हैं।

सूरते आले इमरान में है—

या अय्युहल्लज़ीना आमिनू असबरु वसाबिरु व राबितू।

—(सूरते आले इमरान आयत २००)

ऐ ईमान वालों धैर्य रखो परस्पर दृढ़ता व विश्वास रखो और युद्ध में लगे रहो। —(अनुवाद शाह रफीउद्दीन)

हम ऊपर प्रकट कर चुके हैं कि मुसलमान धर्माचार्यों के मत में युद्ध केवल आत्मरक्षा के निमित्त ही कर्त्तव्य नहीं, अपितु यदि सामर्थ्य हो तो स्वयं दूसरे पर आक्रमण करने का भी आदेश है। सारे युद्ध का रोक देना तो कठिन है। अत्याचार के विरुद्ध युद्ध करने की आज्ञा दी जा सकती है, परन्तु इस्लामी आचार संहिता में इस सीमा को स्वीकार नहीं किया गया है। इस सीमा के साथ भी युद्ध का ढंग ऐसा होना चाहिए कि अनावश्यक कठोरता न बरती जाए। हत्या भी करनी पड़े तो बर्बरता पूर्वक न हो। परन्तु कुरान ने तो फ़रमाया है—

सउलिकीफ़ी कुलूबिल्लज़ीना कफ़रुरुअबो फ़जरिबू फ़ौकलअअनाके वज़रिबू मिनहुम कुल्ला बनानिन।

—(सूरते इनफ़ाल आयत १२)

मैं काफ़िरों के दिल में आतंक डालूँगा अब मारो उनकी गर्दनों पर और काटो उनकी बोटी-बोटी।

गर्दनें तो उनकी आत्मरक्षा में काटी होंगी अब उंगलियों के पोर-पोर काटने में कैसी आत्मरक्षा हुई? यह अत्याचार व प्रतिशोध की पराकाष्ठा है। सूरते मुहम्मद में फ़रमाया है—

फ़इज़्ा लकीतुमुल्लज़ीना कफ़रु फ़लरव रिंकाबिन हत्ता इज़्ा अतरब्नतमूहुम। —(सूरते मुहम्मद आयत ४)

फिर जब तुम भेंट करो उनसे जो काफ़िर हुए बस काट दो उनकी गर्दनें यहाँ तक कि चूर-चूर कर दो उनको।

—(अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन)

व माकाना लिमौमिनिन अन यकतुला मौमिनून इल्ला ख़ताअन व मनकतला मौमिननख़ताअन फ़तहरीरो मोमिनतिन वदिय्यतुन मुसल्लम तुन इला अहलिही इल्लाअन यस्तद्दिू। फ़अनकाना मिनकौमिन उदुव्वकुम..........व मन यक्तुला मौमिनन मुअतमिदन फ़जज़्ाउहू जहन्नमा खालिदन फ़ीहा व गज़बल्लाहो

अलैहे व लअनहू। —(सूरते निसा आयत ९२, ९३)

मुसलमानों को मुसलमान का मारना उचित नहीं, परन्तु अनजाने में, परिणामत: एक मुसलमान को आज़ाद करना है व खून की क्षति-पूर्ति अदा करना उसके घर वालों को, परन्तु यह कि दान कर देवे अत: यदि होवे उस कौम से जो दुश्मन है तुम्हारे......और जो कोई मुसलमान जानकर मार डाले वहाँ उसका फल है कि दोज़ख़ में सदा के लिए रहेगा और क्रोध अल्लाह का उसके ऊपर और लानत है।

इतना पक्षपात!—इन आयतों ने जिहाद की वास्तविकता को और स्पष्ट कर दिया है यदि जिहाद आत्मरक्षा की लड़ाई है और प्रतिशोध में विरोधी की जाति की हत्या की जा रही हो तो उस जाति में चाहे जो कोई मुसलमान हो चाहे अमुस्लिम समानरूप से वध करने योग्य होगा, परन्तु नहीं अमुस्लिम की हत्या जानकर करना भी कर्त्तव्य है और मुसलमान की हत्या यदि भूल से भी हो जाए तो उसका रक्त का बदला प्रायश्चित। इससे अधिक पक्षपात और क्या हो सकता है और यदि खून का बदला व प्रायश्चित न करे तो उसका दण्ड क्या? वही दोज़ख़।

इस प्रकार के रक्तपात व हत्या में अपनी ओर के लोग भी मारे जायेंगे और रुपया भी खर्च होगा। इसकी व्यवस्था निम्नलिखित आयत में की है—

व लातकूल्लू लिमन्युकतलो फ़ो सवीलिल्लाहे अमवातुन बल अहयाउन। —(सूरते बकर आयत १४९)

और जो ख़ुदा के मार्ग में मारे जाते हैं उन्हें मरा हुआ मत कहो, अपितु वह जीवित है।

जलालैन में टिप्पणी में लिखा है—

हरे पक्षियों के लिबास में हैं जो जन्नत में चुगते हैं।

यदि धर्म प्रचार बलपूर्वक न हो तो व्यर्थ का रक्तपात व हत्या काण्ड क्यों हो? और क्यों मरे हुओं को व्यर्थ ही जीवित कहें और बहिश्त में उन्हें पक्षी बनाएँ?

सूरते तौबा में आया है—

व लाकिनिर्रसूलो वल्लज़ीना आमन् मअहूजाहिदू विअम-

वालिहिम व अनफ़ुसिहिम व उलाइकालहुमल ख़ैरातो।

—(सूरते तौबा आयत ८८)

परन्तु रसूल और जो लोग ईमान लाए उसके साथ, जिहाद किया उन्होंने अपने धन और अपने जीवन व व्यक्तित्व सहित और भलाईयाँ उन्हीं के लिए हैं।

फिर फ़रमाया है—

इन्नल्लाहश्तरा मिनउल मौमिनीना अनफ़ुसहुम व अमवालहुम व अन्ना लहुम जन्नता युकातिलूना फ़ीसबीलिल्लाहे फ़यकतलूना व युकतिलून। —(सूरते तौबा आयत १११)

सचमुच अल्लाह ने ख़रीद ली है मुसलमानों से उनकी जानें और माल उनके, इस मूल्य पर कि उनके लिए बहिश्त (दे दिया) है। वे ख़ुदा के मार्ग में लड़ेंगे।

ख़ुजमिन अमवालिहुम सदकतन तुतहिरहुम व तुन्ज़की हिमविहा। —(सूरते तौबा आयत १०३)

उनकी सम्पत्ति में से दान ले लें कि पवित्र करें उनको (प्रकट रूप में) और शुद्ध करे तू उनको साथ उनके (आन्तरिक रूप से)।

मज़हब के लिए त्याग ऐसे भी—अब यदि मुसलमानों को केवल अपने जानोमाल मज़हब पर बलिदान करने का आदेश हो तो फिर भी ठीक है, क्योंकि अमुस्लिमों से लड़े बिना यह दोनों वस्तुएँ मज़हब को भेंट की जा सकती हैं। जैसे ताऊन के समय पीड़ितों की सहायता करें। आपत्तिग्रस्त लोगों की सहायता में अपनी जान जोखिम में डालें। परन्तु इस्लाम के इतिहास में इस प्रकार के उदाहरण नहीं मिलेंगे (कि ऐसे सेवा कार्य के लिए किसी ने अपनी जान व माल भेंट किया हो।)[1] यह जानें व यह माल इस्लाम पर कैसे सत्य सिद्ध होंगे? फ़रमाया है—

व ग़नहनो नतरब्बसो बिकुम अन्युसीबुकुसुल्लाहो विअज़ाबे मिनइन्दही औविएदेना। —(सूरते तौबा आयत ५२)

और हम प्रतीक्षा करते हैं तुम्हारे लिए कि अल्लाह पहुँचाए पीड़ा अपने पास से या तुम्हारे हाथों से।

---

१. कोष्ठक में दिये गये शब्द अनुवादक ने व्याख्या के लिए दिये हैं।
—'जिज्ञासु'

तफ़सीरे हुसैनी में इस अन्तिम वाक्य की व्याख्या ऐसे की है—

अज़ नज़दीके ख़ुद चूं सैहा व रजफ़ व ख़सफ़ ता हलाक शवेद या बिरसानद अज़ाबे बशुमा ब दस्तहाए मा कि शुमा रा बसबब कुफ़्र बकतल रसानेम।

अपने पास से (पीड़ा) जैसे सूरज ग्रहण, चन्द्र ग्रहण से मृत्यु हो जावे या तुम्हें पीड़ा पहुँचाए हमारे हाथों ताकि तुम्हें कुफ्र के कारण वध करें।

इन ख़ुदाई फ़ौजदारों को देखना कि अल्लामियाँ ने कुफ्र दण्ड का आदेश नहीं दिया है कि काफ़िर को वध कर दो। क्या व्यंगोक्ति है? लड़ाई में यह मरें तो जीवित हैं और जो काफ़िर मरें तो उन पर क्रोध व दण्डादेश हुआ है। मृत्यु तो भाई दोनों की एक समान है इसका नाम बलिदान है तो, और दण्डादेश है तो—

यह तो जीवनों का प्रयोग, माल (सम्पत्ति) का भी सुन लीजिए। फ़रमाया है—

या अय्युहल्लज़ीना आमनू ला तरख़ुनुल्लाहा वर्रसूला।

—(सूरते इन्फ़ाल आयत २६)

ऐ लोगो! जो मुसलमान बने हो, विश्वासघात अल्लाह व रसूल से मत करो (धन मत छुपाओ)।

इस पर मूज़िहुल कुरान में लिखा है—

अल्लाह व रसूल की चोरी यह है कि काफ़िरों से छुपकर मिलें अपनी सम्पदा व सन्तानों को बचाने के लिए.........और यह भी है कि लूट के (युद्धों के) माल को छुपाकर रखें, सेना के सरदार को न प्रकट करें।

मुसलमानों की जानें व माल अल्लाहमियाँ की सम्पत्ति हुए मगर अब अल्लाहमियाँ कर्ज़ भी चाहता है। कहा है—

मनज़ल्लज़ी युकरिज़ोल्लाहा करज़न हसनन फ़यजइफ़हू।

—(सूरते बकर आयत २४५)

भला कौन है जो ऋण दे ख़ुदा को अच्छा ऋण फिर वह उसके लिए उस ऋण को दोगुना करे।

इस कर्ज़ की व्याख्या मूज़िहुल कुरान में की है—

धर्मयुद्ध (जिहाद) में खर्च करें।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

अबू अलदहद्दाह अंसारी पेश आमद व गुफ़्त वा रसूलिल्लाह ख़ुदा ईं करज़ चिरा मेतलबद, आंहज़रत फ़रमूद कि मेख़्वाहद कि ता शुमा रा ब वास्ताए आँबबहिश्त बिबुरद। अबूअलदहद्दाह गुफ़्त या रसूलिल्लाह मरा दोख़रामस्तान हस्तन्द व बहतरीन ख़रा मस्तान जनीमा नाम दारद अगर आंरा बकरज़ ख़ुदा दहम शुमा ज़ामिने बहिश्त मन मेशवेद, सैय्यद आलम फ़रमूद कि मन ज़ामिन मेशवम कि हक सुबहानहू दहचन्दा दर रियाज़े जिनां बतो अरज़ानी दारद। गुफ़्त ए सैय्यद, बशर्तें आंकि फ़रज़न्दाने मन व मादरे एशां बा मन बा मन बाशद। ख्वाजा आलम फ़रमूद कि आरे चुनीं बाशद।

अबू अलदहद्दाह अंसारी सामने आया और कहा कि या रसूलिल्लाह ख़ुदा यह कर्ज़ क्यों माँगता है। आं हज़रत ने फ़रमाया कि ख़ुदा चाहता है कि तुम्हें इसके द्वारा स्वर्ग में ले जाए। अबूअलदहद्दा ने कहा या रसूलिल्लाह मेरे पास दो **नख़लिस्तान** हैं उनमें से उत्तम का नाम जनीमा है, यदि उसे ख़ुदा को कर्ज़ दे दूँ तो क्या आप मेरे लिए बहिश्त के ज़ामिन (उत्तरदायी) होते हैं? सरवरे आलम ने फ़रमाया कि मैं उत्तरदायी होता हूँ कि सच्चा ख़ुदा बहिश्त में दस गुना तुझे देगा। कहा ऐ पैग़म्बर! इस शर्त पर कि मेरे लड़के व उसकी माँ भी मेरे साथ हो, फ़रमाया हाँ ऐसा ही होगा।

धर्मयुद्ध के लिए रुपये की ज़रूरत होती है। सरकार भी युद्ध के लिए कर्ज़ लेती है। अल्लाह मियाँ ने भी तो क्या बुरा किया? सरकार भी सूद का वचन देती है यह भी स्वर्ग में कई गुना दिये जाने का वचन है और केवल देने वाले को नहीं उसकी सन्तान व सन्तानों की माता को वहाँ ले जाने का वचन है। एक नख़लिस्तान के बदले में एक परिवार का परिवार स्वर्ग में, यह दयालुता है या आवश्यकता, ब्याज की दर बढ़ रही है।

यही बात सूरते माइदा में फिर फ़रमाई है—

व अकरज़ुतुमुल्लाहो करज़न हसनतन लउकुफ़िरन्ना अनकुम सियातिकुम व लअदरिवलन्नकुम जन्नातिन।

—(सूरते मायदा आयत १२)

और ऋण दो तुम अल्लाह को अच्छा, निश्चय ही मैं तुम्हारी बुराई दूर करूँगा और तुम्हें जन्नतों में प्रविष्ट करूँगा।

धर्मयुद्ध (जिहाद) में ख़र्च कर दिया। अब चाहे पाप किए भी हों सब दूर, ऊपर जो फ़रमा आय हैं। ले माल इनसे धर्मादे में ताकि तू इन्हें शुद्ध पवित्र कर दे।

यह माल किस काम में ख़र्च होता है फ़रमाया है—

व अइदूलहुम मस्ता अतुममिन कुव्वतिन व मिनरिबा तिलाहैले, तुरहिबूना बिहि अदुव्वाल्लाहो व अदुव्वकुम............वा मातुनफ़िकू मिनशैइनकी सबीलिल्लाहे युवाफ़्फ़ा अलैकुम व अन्तुमला तुज़्लिमून। —(सूरते इन्फ़ाल आयत ५९-६०)

और जो तुम कर सको उनके लिए तैयारी करो शक्ति से और घोड़ों से और उनके द्वारा अल्लाह के शत्रुओं को डराओ और अपने शत्रुओं को डराओ.............और जो तुम व्यय करोगे अल्लाह के मार्ग में अल्लाह तुम्हें पूरा कर देगा। और तुम पर अत्याचार नहीं किया जाएगा।

इस्लामी शासन के काल में अधिकतर देशों में ग़ैर मुस्लिमों के लिए घोड़े की सवारी और हथियारों का प्रयोग निषिद्ध घोषित किया जाता रहा है। इसकी आधारशिला मुसलमान धर्माचार्यों ने इसी आयत को निश्चित किया है और इन सारे साधनों की आवश्यकता धर्मयुद्ध (जिहाद) के लिए है। काफ़िरों के हाथ में इन सभी साधनों को छोड़ना धर्मयुद्ध के नियमों की स्पष्ट आज्ञा का उल्लंघन है।

जान व माल ख़ुदा के मार्ग में ख़र्च करने का बदला अब तक परलोक के लिए रहा है, अर्थात् मृत्यु के पश्चात् सम्भव है कोई इस दूर के वचन के भरोसे इतना त्याग करने को तैयार न हो इसका भी फल बतलाया है—

व अदकुमुल्लाहो मग़ानिकसीरतन ताख़ुज़ूनहा।

—(सूरते फ़तह रकूअ ३)

और वचन दिया है तुमको अल्लाह ने बहुत लूटों का, कि उनको प्राप्त करोगे।

व आलमू अन्नमा ग़निमतुम मिनशैअन व अन्नल्लाहे ख़मसहू व लिर्रसूले। —(सूरते इन्फ़ाल आयत ४१)

और इस बात को समझलो कि जो कोई वस्तु तुम लूटकर लाओ उसमें से पाँचवाँ भाग अल्लाह के और रसूल के लिए (निर्धारित) है।

व यसइलूनका अनिल अनफ़ाले, कुलिल अनफ़ालो लिल्लाहे वर्रसूले बत्तकुल्लाहा। —(सूरते इन्फ़ाल आयत १)

तुमसे लूटों के माल के सम्बन्ध में पूछते हैं लूटें ख़ुदा के लिए और रसूल के लिए हैं इसलिए ख़ुदा से डरो।

अर्थात् ख़ुदा व रसूल का हिस्सा दो। और शेष तुम ले जाओ यही नहीं कुछ और भी है। फ़रमाया है—

ओ मा मलकत एमानहुम। —(सूरते अलमोमिनून रकूअ १)

और वह (लूटी हुई स्त्रियाँ) तुम्हारे दाएँ हाथ इन स्वामी बनें।

यह एक परिभाषा है कुरान की जिसका अनुवाद प्रत्येक भाष्यकार ने युद्धों में हाथ लगी हुई स्त्रियाँ किया है और वे लौंडियों (दासियों) के रूप में रखी जा सकती हैं।

गैर मुस्लिम के लिए केवल वध का ही आदेश नहीं है यदि वे धार्मिक कर (जज़िया) दे दें तो उसे प्रजा बनाकर रखा जा सकता है।

कातिलुल्लज़ीना लायोमिनूना बिल्लाहे व लाबिलयोमि लआरिवरे वला युहर्रिमूनामा हर्रमल्लाहो व रसूलहू। वलायदीनूना दीनलहक्के मिल्लज़ीना उतुल किताबो हत्तायअतुलजतियता अनयदिव्वहुम साग़िरुन। —(सूरते तौबा आयत २९)

जो मुसलमान नहीं बन जाते उनसे युद्ध करो, जो अल्लाह पर ईमान नहीं लाते और जो न्याय के दिन (कयामत) पर विश्वास नहीं लाते उनसे और सच्चे दीन (इस्लाम) का पालन नहीं करते जो जिन बातों को, हराम नहीं करते जो अल्लाह ने हराम किया है और उसके रसूल ने और उनमें से जिन्हें ख़ुदा ने किताब दी है जब वह आज्ञापालक हों और अपने हाथ से कर जज़िया दें और दुर्गति स्वीकार करें।

जलालैन की टिप्पणी इस आयत पर यह है कि—

उन लोगों को जो अल्लाह और कयामत पर विश्वास नहीं

रखते उनको मारो–काटो (अर्थात् रसूलिल्लाह सल्लम के प्रति भी अविश्वासी हैं, क्योंकि अल्लाह व कयामत पर विश्वास रखते तो रसूल पर भी विश्वास रखते) और जिन वस्तुओं को अल्लाह व उसके पैग़म्बर ने हराम (अवैध) निश्चित किया है जैसे शराब पीना। उसको हराम नहीं मानते और इस्लाम धर्म स्वीकार नहीं करते जो सच्चा दीन है व सब दीनों को निरस्त करने वाला है। ये लोग यहूदी व नसरानी हैं जिनको आसमानी किताब दी गई यह कदापि मुसलमान न होंगे फलतः जो कर उन पर लगाया जाएगा प्रति वर्ष अपमानित होकर उसे देंगे और इस्लामी शासन के अधीन विवशता में होंगे।

कुरान में जो यह सुविधा है कि कर (जज़िया) लेकर अपनी प्रजा बना लो ईसाइयों व यहूदियों तक ही सीमित है, परन्तु बाद के धर्माचार्यों (इस्लामी आचार संहिता के प्रणेताओं) ने इसे समस्त गैर मुस्लिमों के लिए सामान्य बना दिया है। अतएव हदाया (इस्लामी आचार संहिता) में लिखा है—

फ़इन्नमतनिऊ दऊहुम इललजियते फ़इन बज़लूहा कुलहुम मालिल मुसलिमीन।

यदि इस्लाम स्वीकार करने से अस्वीकृति दें तो उन पर कर निर्धारित किया जाए यदि उन्होंने स्वीकार कर लिया तो उनके लिए सुरक्षा है, जैसा मुसलमानों के लिए है।

अल्लाहमियाँ का पक्षपात

मनुष्यों में पक्षपात पाया जाता है और यह उनकी कमज़ोरी है। सच्चा धर्म पक्षपात से ऊँचा उठना सिखाता है। वह मानव मात्र के साथ समानता का व्यवहार करना सिखाता है। इस शिक्षा में सर्वाधिक प्रेरक परमात्मा की कल्पना है। धर्म प्रचारक कहा करते हैं कि देखो परमात्मा पापी से पापी को जीवित रहने की सुविधा देता है। अपनी सत्ता को न मानने वालों को भी एकदम नष्ट नहीं कर देता है। उदाहरण है कि पापी को मारने के लिए पाप बलि है। दुराचारी अपनी ही हानि सबसे अधिक करता है। परमात्मा का यह स्वभाव नहीं कि निम्न स्तर के लोगों की भाँति अपने अधीनस्थों पर बरस पड़े। परन्तु यदि किसी सम्प्रदाय में परमात्मा को भी पक्षपाती, श्रेष्ठ कर्मों का नहीं, विशेष जातियों का प्रकट किया गया हो तो उस मत के अनुयायियों के पक्षपात को चिकित्सारहित समझना चाहिए। या तो उन्हें परमात्मा का स्वरूप बदलना होगा या वे जब तक उस सम्प्रदाय के अनुयायी हैं अवश्य क्षुद्र हृदय और पक्षपाती बने रहेंगे। कुरान शरीफ़ में लिखा है कि अल्लाहमियाँ क्षुद्र हृदय मनुष्यों की इस दुर्बलता से ऊपर नहीं उठ सका। फ़रमाया है—

इन्नल्लाह जामिअल मुनाफ़िकीन व लकाफ़िरीन फ़ी जहन्नमा जमीअन। —(सूरते निसा आयत १४०)

सचमुच अल्लाह एकत्रित करने वाला है **मुनाफ़िक़ों (जो इस्लाम में विश्वास न रखें)** व **काफ़िरों (इस्लाम विरोधियों)** को सबको जहन्नम में।

सीमित कर्मों का असीम फल!—जहन्नम की परिस्थिति का वर्णन हम ऊपर कर चुके हैं। अल्लामियाँ के न्याय में एक बड़ा दोष यह है कि **वह विविध पापों में अन्तर नहीं करता। पापियों के प्रकार में असाधारण अन्तर होता है। उनके दण्ड विधान में भी उसी प्रकार से अन्तर होने चाहिए।** मगर सबके

लिए आग, गरम पानी, थूहड़ और इसी प्रकार के अन्य एक समान दण्ड निर्धारित है। सम्भव है किसी किसी को थूहड़ क्षमा हो जाए या गर्म पानी न पिलाया जाए, परन्तु फिर अवधि असीम है। सीमित पाप के लिए असीमित कैद! यह भी हुआ। अब कहते हैं सब काफ़िर, अर्थात् गैर मुस्लिम और अविश्वासी जिन्होंने झूठ-मूठ का इस्लाम स्वीकार कर लिया है, परन्तु दिल से मुसलमान नहीं हैं सब दोज़ख़ में जाएँगे। **यह तो सम्भवतः कोई कट्टर से कट्टर मुसलमान भी दावा नहीं कर सकता कि जो मुसलमान नहीं वे नैतिक व आध्यात्मिक रूप से अच्छे होते ही नहीं**। उन्हें दोज़ख़ में बिठाने का क्या अर्थ? **पहले तो इस्लाम की मान्यता है कि जो होता है वह पहले से ही निर्धारित है**। काफ़िर स्वेच्छा से काफ़िर थोड़ा ही है। लोहे महफ़ूज़ के लेख ने उन्हें काफ़िर निर्धारित किया है इसमें उनका दोष क्या? अल्लाह ने जैसा बना दिया बन गए, यह अल्लाहमियाँ का अत्याचार है कि अपनी प्रजा में से किसी को (अकारण) जन्नत में जाने के लिए और किसी को दोज़ख़ में जाने के लिए चुन ले और इसी प्रयोजन से उन्हें क्रमानुसार मुस्लिम व काफ़िर बना दे। चलो फिर नियम का स्वांग रचाया तो है कि बुरे काम वाले दोज़ख़ी होंगे और सदाचार वाले बहिश्ती होंगे।

तो पापों का ठेका काफ़िरों को दे देता—यदि अल्लाहताला यह भी विशेषता बना देता कि सदाचारी केवल मुसलमानों में से होंगे और पापों का ठेका काफ़िरों को ही दे देता तो उन्हें क्रमशः बहिश्त व दोज़ख़ का उत्तराधिकारी बनाने में न्याय का पलड़ा सही माना जाता, परन्तु अब तो यह भी नहीं बुरे मुसलमान भी हैं अच्छे काफ़िर भी हैं तो इनके पुरस्कार व दण्ड में अकारण भेदभाव कोरा पक्षपात है। यह बात सूरते बनी इसराईल में आई है—

वजअलना जहन्नमालिल काफ़िरीना हसीरन।

—(सूरते बनी इसराईल आयत ८)

और बनाया हमने काफ़िरों के लिए जहन्नम को बन्दीगृह।

चलो माना मुसलमान अल्लाहमियाँ के विशेष प्यारे सही, गैर

मुस्लिम भी तो उसी ने बनाए हैं। इन विचारों को पूरा बहिश्त न सही उनके उत्तम कर्मों के लिए (कोई नित्य प्रति के अनुभव के आधार पर यह तो कह ही नहीं सकता कि गैर मुस्लिमों में नैतिकता का अभाव है) कुछ तो अच्छा फल देता और यदि वर्तमान जगत् परलोक का पूर्वाभास है तो यहाँ तो **अल्लाह ने अपने पुरस्कार मुसलमानों के लिए विशेष सुरक्षित किए नहीं हैं आगे भविष्य में ईश्वरीय गुणों के इतिहास में नए अध्याय का प्रारम्भ हो तो और बात है।**

सूरते आले इमरान रकुअ १४ में मुसलमानों को कहा है—

बलिल्लाहो मौलाकुम व हुवा रवैरुन्नासिरीन।

अतः अल्ला तुम्हारा ही काम बनाने वाला मालिक है और वह सर्वश्रेष्ठ सहायक है।

इससे किसी को क्या ईर्ष्या है? मुसलमानों का काम बना दिया करे, परन्तु केवल उन्हीं का ही न बनाए। आक्षेप तो इस वाक्य में आए इस वचन पर है कि जिससे अल्लाह का मुसलमानों का ही रक्षक मालिक होना पक्षपात की निशानी बन जाता है और—

यमहक्कल काफ़िरीन। —(रकुअ २)

काफ़िरों को मिटाने वाला है।

यह भी सन्तोष की बात है कि संसार का कारोबार इस कुरान की आयत के अन्तर्गत नहीं चल रहा है। काम सबके बन व बिगड़ रहे हैं इसमें धार्मिक विशेषता नहीं है। सूरते इन्फ़ाल में और कड़ाई से कहा है—

व यक्त आ दाबिरल काफ़िरीन। —(सूरते इन्फ़ाल आयत ७)

और काफ़िरों की अल्लाह जड़ें काटने वाला है।

काफ़िर होंगे तो दोज़ख़ रहेगा—जड़ कट जाए तो दोज़ख़ की ज़रूरत ही क्या रहेगी? और यदि दोज़ख़ को सदा ही रहना हो तो यह जड़ कटेगी क्यों कर?

सूरते बकर में आया है—

फ़लअनतुल्लाहे अलल काफ़िरीन।

—(सूरते बकर आयत ८९)

अतः ख़ुदा काफ़िरों पर अनंत फटकार करता है।

इस खोखली फटकार से क्या लाभ ? हज़रत इकबाल ही फ़रमाते हैं—

रहमतें[१] हैं तेरी अग़यार[२] के काशानों[३] पर।
बिजलियाँ गिरती हैं बेचारे मुसलमानों पर॥
क्या ग़ज़ब है कि है अग़यार के घर हूरो[४] कसूर[५]।
और बेचारे मुसलमानों को फ़कत वादाए हूर[६]॥

सूरते अहज़ाब में मुसलमान स्त्री-पुरुषों को अकारण पीड़ा व कष्ट देने का निषेध किया है—

और जो मुसलमान स्त्री-पुरुषों को बिना अपराध के पीड़ा पहुँचाते हैं बस उन्होंने बहुत बड़ा दोष व पाप किया............वे फटकार लानत किए गए, जहाँ पाए जाएँ, कत्ल किए जाएँ।

—(सूरते अहज़ाबु आयत ५८ व ६१)

भेदभाव न होता तो क्या हानि थी ?—मुसलमानों को अकारण दुःख देने से अल्लामियाँ को अप्रसन्न होना ही चाहिए। परन्तु क्या अमुस्लिमों को अकारण दुःख देने वालों को भी कोई दण्ड कुरान शरीफ़ में वर्णन किया गया है ? यदि यही मोमिनों व मोमिनात (उनकी स्त्रियों) के स्थान पर मानव मात्र को यह कह दिया गया होता तो क्या हानि थी ? यह तो पीड़ा की बात है, हत्या के सम्बन्ध में यही भेदभाव बरता है। फिर दावा यह है कि यह सार्वभौमिक शिक्षा है।

स्पष्ट कहा गया है कि अल्ला को काफ़िरों से शत्रुता है—

अल्लाहो उदुव्वुन लिलकाफ़िरीन।

—(सूरते बकर आयत ९८)

अल्ला काफ़िरों का शत्रु है।

इस विशेषता का कारण क्या है ? कारण केवल यह है कि—

१. कृपाएँ, (२) मुसलमानों के अतिरिक्त, (३) निवास स्थान, (४) अप्सराएँ, (५) शराबों के प्याले। ६. डॉ० इकबाल के अत्यन्त लोकप्रिय व प्रसिद्ध काव्य 'शिकवा' से ये पंक्तियाँ उद्धृत की गई हैं। ('जिज्ञासु') ७. ये दो आयतें यहाँ (मूल) नहीं दिया गया। —'जिज्ञासु'

इन्नद्दीना इन्दा लिब्लाहे लइसलामो।

—(सूरते आल इमरान आयत १९)

वास्तव में सम्प्रदाय अल्लाह का (केवल) इस्लाम (ही) है। इस पर जलालैन में लिखा है—

वे दूत व दीन कहाँ गये ?—इसके अतिरिक्त अल्लाह के दरबार में कोई सम्प्रदाय स्वीकार्य नहीं—ऊपर तो कहा था, मूसा को किताब दी, ईसा को किताब दी सब जातियों के पास ईश्वरीय दूत भेजे, कुरान उस जाति में भेजा जिसमें इससे पूर्व कोई डराने वाला नहीं आया था, अब इस्लाम के अतिरिक्त और सम्प्रदाय ही ईश्वरीय नहीं रहे ? हज़रत मुहम्मद के धर्म प्रचार के पूर्व के लोगों का क्या बना ? और जो हज़रत के धर्म प्रचार के सम्बन्ध समय भी किसी और दूसरे देश में हज़रत का सन्देश पाने से वंचित रहे उनके लिए ईश्वरीय सम्प्रदाय के द्वारा लाभान्वित होने का क्या अवसर है ?

सूरते आराफ़ में फ़रमाया है—

इन्ना हाउलाए मुतबर्रुन मा हुम फ़ीहे व बातिलुन माकानू यामिलून।

वास्तव में यह लोग जिस सम्प्रदाय में भी हैं झूठे हैं, और जो कुछ भी करते हैं वह झूठ हैं। —(अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन)

किसी भी पूरे सम्प्रदाय को झूठा निर्धारित कर देना सच्चाई से परे होता है। वस्तुतः मज़हब तो प्रारम्भ से ही अल्लामियाँ की साक्षी के अनुसार अल्लामियाँ का ही इल्हाम (सन्देश) भेजा हुआ ही परम्परा से चला आता है। लोगों ने इसमें हेरफेर कर लिया सही। यद्यपि इस बात में स्वयं मुसलमान विद्वानों में मतभेद है। कुछ मुसलमान विद्वानों का विचार है कि अल्लाह के भेजे गये दैवीय सन्देश में मनुष्य अर्थों में हेर-फेर कर लें तो कर लें। शाब्दिक हेर-फेर नहीं कर सकता। परन्तु चलो मान लिया किसी प्रकार का हेर-फेर धोखा करने वाले लोगों ने कर लिया तो क्या वह सारे का सारा सम्प्रदाय झूठा हो जाएगा। **स्वयं मुसलमानों के विभिन्न सम्प्रदायों में नियमों व रीति-रिवाजों का मतभेद है। क्या इस मतभेद के कारण इस कथन के अनुसार इस्लाम झूठा सम्प्रदाय नहीं कहलाएगा।** स्वामी दयानन्द के ये शब्द स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

किसी सम्प्रदाय में सभी लोग बुरे या भले नहीं हो सकते यह एकांकी आदेश देना बड़ी भारी मूर्खता है।

सब में कुछ न कुछ सत्य हैं—और यदि यह सत्य स्वीकार कर लिया जाए कि प्रत्येक सम्प्रदाय में सत्य भी है और उसके साथ झूठ का मिलान भी हो गया है तो इससे जहाँ सम्प्रदायों का परस्पर विवाद समाप्त हो जाता है वहाँ यह मिथ्या व सच्चाई से दूर विचार भी आधारहीन हो जाता है कि अल्लाहमियाँ की ओर से केवल एक ही सम्प्रदाय है और दूसरे नितान्त शैतानी मिलावटें हैं और किसी विशेष सम्प्रदाय के लिए बहिश्त सुरक्षित है और दूसरों के लिए दोज़ख़ तैयार कर रखा है। ऋषि दयानन्द का यह कथन भी हृदय पटल पर उतना ही चित्रित करने योग्य है जितना निम्न उद्धरण—

''किन्तु जो धार्मिक हैं वे सुख और जो पापी हैं वह सब मतों में दुःख पावेंगे[१]।''

सभी सम्प्रदायों की सच्चाई परमात्मा का सन्देश है और उसमें भूलों की मिलावट मानवीय हस्तक्षेप, इस मानवीय मिलावट के विरुद्ध आवाज़ उठाओ और प्राचीन ईश्वरीय सन्देश का प्रचार करो।

१. सत्यार्थप्रकाश चतुर्दश-समुल्लासः समीक्षा आठवीं देखिये। यह ऋषि दयानन्द की एक निराली, अद्‌भुत, असाम्प्रदायक व वैज्ञानिक देन है कि पापी जहाँ भी हैं जिस मत में है वे सब दुःख पायेंगे और धर्मात्मा सज्जन जहाँ भी हैं जिस मत में भी हैं सब सुख पायेंगे। सुख व दुःख की कसौटी कर्म हैं।
—'जिज्ञासु'

शिरक : प्रभु सत्ता में मिलावट

मुसलमानों का दावा है कि उनका मत विशेषतया एकेश्वरवादी मत है। अर्थात् उसमें परमात्मा की एकता पर बहुत बल दिया गया है। मुसलमानों के दृष्टिकोण में सबसे बड़ा पाप ही ईश्वर में मिलावट है। धार्मिक मौलानाओं की सम्मति है कि सब पाप क्षमा हो सकते हैं, परन्तु ईश्वर में मिलावट परमात्मा से विद्रोह है। उसे क्षमा नहीं किया जा सकता। जहाँ कुरान में अल्लाहमियाँ को स्पष्ट बुराइयों को क्षमा करने वाला **'ताइबुज़्ज़नूबुल जमीआ'** कहा है वहाँ कुरान के भाष्यकारों ने लिख दिया है कि—शिरक के अतिरिक्त। हम यहाँ इस दार्शनिक विवाद में नहीं पड़ेंगे कि क्या वास्तव में शिरक और अपराधों से निकृष्टतम पाप है? यदि शिरक के तार्किक परिणामों पर विचार करें और देखें कि एक परमात्मा के स्थान पर अनेक परमात्मा को मान लेने से मनुष्य क्या-क्या पाप कर सकता है तब तो सम्भव है कि शिरक का अपराध अत्यन्त भयानक प्रतीत होता है। **परन्तु मनुष्य जैसा उसका स्वभाव इस समय पाया जाता है अपने सभी मन्तव्यों से दार्शनिक रूप से प्राप्त होने वाले नैतिक दोषों का शिकार होता नहीं। और जहाँ तक शिरक की मान्यता का दर्शन से सम्बन्ध है यह मान्यता झूठी अवश्य है, परन्तु ऐसी नहीं कि उसके मानने वाले की हत्या ही कर दी जाए।** दण्ड तो केवल नैतिक अपराधों का ही दिया जा सकता है। यदि वे अपराध कार्यरूप में परिणत हो जावें। तो मानवी न्यायालय से भी उसका दण्ड होगा व ईश्वरीय न्याय व्यवस्था से भी। **यदि वह केवल मानसिक कल्पना तक ही सीमित रहें तो दण्ड परमात्मा देगा।** मानव की पहुँच लोगों की कल्पनाओं तक नहीं। मान्यताओं के सम्बन्ध में उपदेश व शिक्षाएँ, लेख व भाषण को सुधार का साधन बनाया जा सकता है, किन्तु उन्हें कार्यरूप में किसी का गला काटने के लिए नहीं कहा जा सकता। मान्यताओं का आध्यात्मिक परिस्थितियों पर साधनों से प्रभाव पड़ता है उसमें जहाँ उपास्य का एकत्व अथवा बहुत्व अपना प्रभाव डाले

बिना नहीं रहते वहाँ उपास्य के कल्पित गुणों से कहीं अधिक प्रभाव सिद्ध होता है। परमात्मा की कल्पना में दया, न्याय, ज्ञान व ज्ञान जैसी विशेषताओं की कल्पना सम्मिलित हो तो मानव उन रंगों में रंगा जाता है और यदि एक उपास्य सत्ता भी पक्षपाती, अत्याचारी, अस्थिर स्वभाव, अव्यवस्थित, अपने आपे से बाहर हो जाने वाली हो तो उपासक पर वासनात्मक भावनाएँ अधिकार जमा लेती हैं।

उपास्य के गुणों पर विचार—इस्लाम के मानने वालों ने एकेश्ववाद को जितना महत्त्व दिया है **आर्यसमाज इस सम्बन्ध में उनके स्वर के साथ स्वर मिलाता है**। इस शर्त के साथ कि शिरक सामाजिक अपराध नहीं और वैधानिक रूप से उस पर कोई दोषारोपण नहीं होना चाहिए और इस परिवर्धन के साथ कि शिरक के समान ही उपास्यदेव के गुणों पर भी दृष्टिपात करना चाहिए। **यदि इस्लाम प्रेमी इस दृष्टिकोण से अपने उपास्यदेव की कल्पना की जाँच-पड़ताल करें सम्भव है वे अपने को शिरक मानने वालों से कम दोषी न पावें।**

अल्लाह के साथ भी क्या-क्या है—इस अध्याय में हमें देखना यह है कि **कहीं कुरान शरीफ़ में ही तो शिरक की शिक्षा नहीं दी गई ?** स्वयं मुसलमान तो आर्यसमाजियों को भी अनेकत्वादी कहने से नहीं चूकते। और वे यह आरोप हमारे ऊपर इसलिए लगाते हैं कि हम विद्यमान केवल परमात्मा को ही नहीं आत्माओं और प्रकृति को भी मानते हैं। यदि अल्लामियाँ के अतिरिक्त किसी भी अन्य तत्व को विद्यमान मानना शिरक है तो मुसलमान बहुत बड़े अनेकत्ववादी (मुशरिक) हैं। **नित्यता के गुण में शैतानों फ़रिश्तों दोज़खियों बहिश्तिओं आदि सब अल्लाहमियाँ के साथी हैं। उत्पत्ति कर्त्ता होने में भी कुरान शरीफ़ अल्लाहमियाँ को उत्पादकों में उत्तम अर्थात् और दूसरे उत्पादकों से श्रेष्ठ निर्धारित करता है जिसके अर्थ यह है कि उत्पादक और भी है। अब इन सब विद्यमान सत्ताओं पर फ़रिश्तों, शैतानों, जहन्नम वालों व जन्नत वालों के रूप में ईमान लाना कुफ्र इस्लाम अथवा है ?** या इस ईमान से शिरक (अनेकत्ववाद) सिद्ध होता है या नहीं ? कुराने करीम फ़रमाता है—

वमनयकफ़ुरो बिल्लाहे व मलाहकतिही व कुतुबिही व रूसुलुही वलयोमिल आख़िरे फ़कदज़ल्ला ज़लालन बईदा।

—(सूरते निसा आयत १३६)

और जो नहीं मानता अल्लाह और उसके फ़रिश्तों, उसकी किताबों और पैग़म्बरों और कयामत के दिन को, वास्तव में वह पथभ्रष्ट है, अत्यन्त ही पथभ्रष्ट है।

मुसलमानों का दावा रहा है कि हम केवल अल्लाह पर ईमान लाते हैं यहाँ ईमान का आशय व उद्देश्य एक नहीं कई एक है।

हमारे और मुसलमानों के ईमान में इतना अन्तर अवश्य है कि हम ईश्वर के अतिरिक्त सत्ताओं को भी अनादि काल से स्वयं सत्तारूप विद्यमान (अनादि) मानते हैं और मुसलमान नित्य, अनादि सत्ता केवल अल्लामियाँ को और शेष सबको अल्लामियाँ द्वारा बनाया हुआ (उत्पन्न) मानते हैं। इससे उन्हें भाग्य का सिद्धान्त मानना पड़ता है। जिससे वे आत्मा वाली उत्पन्न सत्ताओं के कर्मों, गुणों, अवस्थाओं की असमानता का उत्तर दे सकें।

इसका दार्शनिक परिणाम यह होता है कि अल्लामियाँ में सबसे पहले तो अन्यायी होने का दोष आता है कि **उसने केवल अपनी इच्छा से ही अपनी विभिन्न रचनाओं को असमान बना दिया**। उनके सुख-दुःख का उत्तरदायित्व भी उस पर पड़ता है और फिर उनके कर्मों व स्वभावों की असमानता का उत्तरदायित्व भी अल्लाहमियाँ का हो जाता है और अचेतन वस्तुओं के सम्बन्ध में भी प्रश्न पैदा होता है कि **वर्तमान चेतन सत्ता में चेतनता के अभाव का गुण कहाँ से उत्पन्न होता है** ? अपने में से या कहीं बाहर से ? **अपनी पूर्ण चेतना में से अचेतना को कैसे उत्पन्न किया ?** दोष का स्रोत कौन है ? आर्यसमाज के त्रैतवाद का नित्य सिद्धान्त इस रहस्य को सरलता से सुलझा देता है। अहले इस्लाम कहते हैं कि नित्यता परमात्मा का गुण है इसमें परमात्मा के अतिरिक्त किसी सत्ता को शरीक नहीं करना चाहिए। प्रश्न यह है कि क्या अनात्वि परमात्मा का गुण नहीं है ? इसमें अन्य को क्यों सम्मिलित करते हो ? इस प्रश्न पर हम अपनी पुस्तक **''जवाहिरे जावेद''** में सविस्तार विचार कर चुके हैं यहाँ इतनी ही उपरोक्त

समालोचना पर्याप्त होगी।

बड़ा छोटे के सामने झुकता है—हमारे सिद्धान्त के अनुसार एकेश्वरवाद के अर्थ हैं। परमात्मा का आज्ञापालन में शरीक किसी को न करना। सबसे बड़ा सामर्थ्य उसी का है। सबसे बड़ा ज्ञान उसी का है। सबसे बड़ी नैतिक व आध्यात्मिक श्रेष्ठता उसी की है। **परमात्मा की इस महानता के आगे मनुष्य का स्वभाविक गुण है कि वह नम्रता धारण करे**। बड़ी शक्ति वाले के सामने छोटी शक्ति वाला झुकता है। बड़े विद्वान् के सामने छोटा विद्वान् झुकता है। बड़ी नैतिकता वाले के सामने छोटी नैतिकता वाला झुकता है। बड़ी आध्यात्मिकता वाले के सामने छोटी आध्यात्मिकता वाला झुकता है। यह बात मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों में भी देखी जाती है। फिर परमात्मा में तो इन गुणों की परिपूर्णता है। उसकी आज्ञा का पालन सर्वोच्च कर्त्तव्य है। इस आज्ञा पालन का फल स्वयमेव पालक को प्राप्त होता है। छोटे स्तर पर आज्ञा पालन मानवों की भी की जाती है, परन्तु इस आज्ञापालन का व परमात्मा के आज्ञापालन की कोई तुलना नहीं। परमात्मा की आज्ञापालने, परमात्मा के आगे झुकने और मनुष्यों की आज्ञापालन व उनके आदेशानुसार काम करने में कोई समानता नहीं। शिरक इसमें हैं कि इन आज्ञापालन की कोटियों को समान माना जाए, परन्तु कुरान में तो एक स्थान पर नहीं बीसियों स्थानों पर परमात्मा की आज्ञापालन के साथ ही रसूल (मुहम्मद सा०) की आज्ञापालन का बराबर वर्णन है यही नहीं उनकी आज्ञा न पालने पर दण्ड है। जैसा कि कहा है—

व मनयुतीइल्लाह व रसूलहियदख़िलहु जन्नातिन तजरीमिन-तहतिह अनहार ख़ालिदीना फ़ीहा व ज़ालिकल फ़ौज़ोल अज़ीम व मन यअसिल्लाहा व रसूलहु व यतअद्दाहुदूदहू यदख़िल हुनारन ख़ालिदन फ़ीहा व लहू अज़ाबुन मुबीन।

—(सूरते निसा आयत १३-१४)

जो ख़ुदा व उसके पैग़म्बर की आज्ञा का पालन करे उसको जन्नत में प्रविष्ट करेगा जिनके नीचे नहरें बह रही हैं और वे उसमें सदा रहेंगे और यह बड़ी (जीवन की) सफलता है, और जो अवज्ञा करेगा की ख़ुदा की और रसूल और उसकी सीमाओं का उल्लंघन करे (ख़ुदा) उसको दोज़ख़ की आग में प्रविष्ट करेगा। वह उसमें ही

सदा रहेगा और उसके लिए बड़ी पीड़ा है।

फआमनू बिल्लाहे व रसलिहि।

—(आल इमरान आयत १७४)

अतः अल्लाह व उसके रसूलों पर ईमान लाओ।

व अतीउल्लाहा व उतीउर्रसूला।

—(सूरते मायदा आयत ९२)

और आज्ञापालन करो अल्लाह व उसके रसूल की।

व अलीउर्रसूल लअल्लकुम तुरहमून।

—(सूरते नूर आयत ५५)

और आज्ञापालन करो रसूल का सम्भव है तुम्हें क्षमादान मिले[१]।

याअय्युहन्नासो कदजाअकुम रसूला बिलहक्के मिनरब्बिकुम फआमनू।

—(सूरते निसा आयत ६६)

ऐ लोगो! तुम्हारे पास पैग़म्बर सच्चाई के साथ आया तुम्हारे पालनहार की ओर से अतः ईमान लाओ (उस पर)।

कुल इनकुन्तुम तुहिब्बूनल्लाहा फ़त्ताबिऊनी युहिब्बुकुमल्लाहो व यगफ़िर लकुम ज़ुनूबिकुम। —(सूरते आले इमरान आयत ३०)

कह दे वास्तव में यदि तुम अल्लाह को चाहते हो तो मेरे अनुयायी बनो, चाहेगा तुम्हें अल्लाह और तुम्हारे पाप क्षमा कर देगा।

व मन यशाकिकिर्रसूला मिनबादे मातबय्यना लहु लहुदा व यत्तबिआगैरा सबीलिलमोमिनीना नवल्लिहू व नसलिहि जहन्नमा, व साअत मसीरा।

और जो विद्रोह करे रसूल से इसके बाद भी कि आदेश प्रसारित हुआ और मुसलमानों के अतिरिक्त लोगों का अनुसरण करे। हम उसे फेरेंगे जिस ओर वह फिरा है और उसे दोज़ख़ में दाख़िल करेंगे और वह बुरी जगह है।

ग़ैर मुस्लिमों को दोज़ख़! रसूल की आज्ञा न पालन करने वाले को दोज़ख़!! किसी वैचारिक दृष्टि से रसूल का आदेश अनुकूल न हो तो दोज़ख़ में भेजने योग्य है!!!

दण्ड व पुरस्कार के अध्याय में हम हज़रत रसूल की पवित्र

---

१. कई भाष्यों में इसका अर्थ क्षमा की बजाय दया किया गया है। दया का भाव क्षमा भी है। —'जिज्ञासु'

पत्नियों की हज़रत रसूल की स्वामी भक्ति का दोगुना फल मिलने के वचन का वर्णन कर चुके हैं। **एक फल इसलिए मिलना है कि अल्लाहमियाँ की प्रसन्नता इसमें है और एक फल इसलिए कि हज़रत पैग़म्बर भी प्रसन्न है। कर्म एक ही परन्तु अल्लाहमियाँ इससे प्रसन्न हुए उसका फल अलग और हज़रत रसूल प्रसन्न हुए उसका फल अलग और अभी शिरक नहीं हुआ!**

रसूल की आज्ञापालन किस लिए बढ़ा दी?—सम्भव है मुसलमान सज्जन कहें कि हज़रत रसूल का आदेश अल्लाह के आदेश के अतिरिक्त और कुछ नहीं। तो फिर यह कहने में क्या हानि थी कि जो अल्लाह की आज्ञा का पालन करे वह बहिश्त में जाएगा। रसूल की आज्ञापालन को इसमें बढ़ाने की क्या आवश्यकता थी? **हज़रत का अपना अस्तित्व भावुक, बौद्धिक और कर्म करने वाला है या नहीं? यदि नहीं तो अल्लाह व रसूल में भेद क्या है? रसूल को ही अल्लाह मान लेने में हानि क्या है? और यदि कोई व्यक्ति इस दार्शनिक अन्तर को दृष्टिगत रखते हुए केवल अल्लाह पर ही ईमान लावे और रसूल को कल्मा में सम्मिलित न करे तो उसको स्वर्ग मिलेगा कि नहीं?**

कल्मा में जिबरईल क्यों न हो?—यदि रसूल केवल कार्य का साधन मात्र है तो साधन पर ईमान लाने की क्या आवश्यकता? कोई कहे, अल्लाह का आदेश बिना रसूल के मनुष्य तक नहीं पहुँचता है और यदि उन्हें भी फ़रिश्तों के माध्यम की आवश्यकता है तो **कल्मा में अल्लाह व रसूल के साथ जिबरईल का नाम क्यों न बढ़ा दिया जाए। फिर हज़रत जिबरईल को वह सन्देश किस प्रकार पहुँचता है? यदि उपास्य के साथ उसके सभी उपकरणों पर ईमान लाना भी मुक्ति के लिए आवश्यक है तो उन उपकरणों की कोई सीमा न रहेगी और कल्मा इतना लम्बा हो जाएगा कि आदि से अन्त तक पढ़ो समाप्त ही न हो।**

एक और दार्शनिक प्रश्न है उस पर विचार करो। मनुष्यों को कुरान का सन्देश पहुँचाने के लिए हज़रत मुहम्मद को अल्लाह मियाँ ने चुना क्यों? यह चुनाव आरम्भ में ही हो चुका था या बाद में? चलो किसी कारणवश, सम्भवतया बिना कारण वह चुनाव कर लिया गया। क्या सम्भावना भी किसी और के चुनाव की थी या

नहीं? यदि थी तो हज़रत मुहम्मद के अस्तित्व की विशेषता न रही। जो कोई रसूल की पदवी पर चुना जाता उसका नाम कल्मे में आ जाता। और यदि कोई और नाम भी कल्मे का अंग हो सकता था तो क्या दार्शनिक रूप से यह अधिक उत्तम स्थिति नहीं कि विशेष नाम वहाँ रखा ही न जाए। क्योंकि महत्त्व तो यहाँ रिसालत के पद की है, व्यक्ति विशेष की नहीं।

दोष यह है कि कुरान में अल्लाह और रसूलों में भेदभाव न करने की आज्ञा है। जैसे निम्न आयत में है—

इन्नल्लज़ीना यकफ़रुना बिल्लाहे व रुमुलिहि व युरीदूना अनयफ़रकूनल्लाहे व रुसुलिहि व यकूलन नोमिनोबि बअज़िन व नुकफ़ुरा बिबाज़िन व युरीदून अनयत्तरवजूं बैना ज़ालिका सबीलन, उलाइका-हुमुल काफ़िरुना हक्कन। व अअतदना लिलकाफ़िरीना अज़ाबन मुहीनन।

—(सूरते निसा आयत १५०-१५१)

सचमुच जो इन्कार करते हैं अल्लाह व उसके रसूलों से और यह चाहते हैं कि अल्लाह व उसके रसूलों में भेदभाव करें और जो चाहते हैं कि हम कुछ बातों पर विश्वास करते हैं और कुछ बातें हमें स्वीकार नहीं और कोई बीच का रास्ता मानना चाहते हैं वही काफ़िर हैं वास्तविक और हमने तैयार किया है कठोर पीड़ा दण्ड काफ़िरों के लिए।

लीजिए काफ़िरों की परिभाषा स्पष्ट हो गई। वह जो अल्लाह व उसके रसूलों में भेदभाव करते हैं। एक पर विश्वास करें और दूसरे को अस्वीकार करें वह दोज़ख़ी है। तभी तो मुसलमान गाया करते हैं—

मैराज की रतियां हक ने कहा तू और नहीं मैं और नहीं।
है मीम का परदा क्या परदा मैं और नहीं तू और नहीं॥

एक और पद्य प्रसिद्ध है—

अल्लाह के पल्ले में वहदत के सिवा क्या है?
जो कुछ हमें लेना है ले लेंगे मुहम्मद से[१]॥

---

१. कुछ ऐसे गाते सुनाते हैं—'लेना है सो ले लेंगे हम अपने मुहम्मद से।'
—'जिज्ञासु'

शरीक नहीं किया, एक ही कर दिया—और अभी मुसलमान बहदत परस्त (एकेश्वरवादी) हैं। वास्तव में यदि अन्तर समझकर अनुसरण करते कि अल्लाह के अनुसरण का रसूल की आज्ञापालन से कोई तुलना नहीं। तब तो सच्चमुच दो की आज्ञापालन हो जाती। यहाँ तो एक ही सांस में दोनों की आज्ञापालने पर बल दिया है और कहा है कि भेदभाव मत करो, **शरीक तो नहीं किया दोनों को एक कर दिया है। अब शिरक कहाँ रहा ? यह तो पूरी एकता है।**

अब अल्लाह व रसूलों में अन्तर तो नहीं रहा और हज़रत आदम भी रसूल थे सर्वप्रथम रसूल, जिन्हें 'अस्माए कुल्लाहा' (सम्पूर्ण ज्ञान) सिखाए गए पूरे नाम। हाँ बाद में फिर कहा—

फ़तलका आदमामिन रब्विही कलमातुन।

कुछ बातें सीखे थे, अस्तु रसूल होने के नाते उनमें और अल्लामियाँ के बीच में भी अन्तर नहीं करना चाहिए। तो जब फ़रिश्तों को आज्ञा दी कि—

असजिदुल आदमा। —(सूरते बकर आयत ३४)

सजदा करो (सिर झुकाओ) आदम को।

तो इसी आशय से कहा होगा कि अल्लाह व रसूल में भेदभाव करने वाला काफ़िर है। शैतान ने भेदभाव किया और सजदा करने से इन्कार कर दिया और वह।

काना मिनल काफ़िरीन। —(सूरते बकर रुकुअ ३४)

और वह काफ़िरों में से ही एक था।

निर्धारित किया गया। वास्तव में भेदभाव करने वाला मुशरिक है। उसने दो माने और एक मानने वाला एकेश्वरवादी ! अच्छी तौहीद (एकेश्वरवाद) है, तब तो वहदत (एकेश्वरवाद) की सत्ता भी माननी पड़ेगी। इसी विचार से तो कहा होगा—

व मनकान उदुव्वुन लिल्लाहे व मलाहकतिही व रुसुलिही व जिबराईला व मीकाईला, फइन्नल्लाहो उदुव्वुन लिलकाफ़िरीन।

—(सूरते बकर आयत ९८)

जो शत्रु है ख़ुदा का और फ़रिश्तों का और रसूलों का और जिबराईल का व मैकाईल का, वास्तव में अल्लाह काफ़िरों का शत्रु है।

रसूल की शत्रुता तो समझ में आई, अल्लाह फ़रिश्तों, जिबराईल और मैकाईल की शत्रुता के क्या अर्थ हैं ? यही कि उनकी शत्रुता से अल्लाह दुश्मन हो जाता है। परन्तु वह शत्रुता कुछ समझ से ऊपर की बात है। जैसे स्वयं अल्लाह मियाँ की, अल्लाह के पश्चात् बताए हुओं की शत्रुता भी अल्लाह की ही है। प्रतीत होता है कोई मन्त्रिमण्डल है एक का राज नहीं।

फ़रिश्ते

विगत अध्याय की समाप्ति पर फ़रिश्तों का वर्णन आया है कि उनका शत्रु अल्लामियाँ का शत्रु है। यह फ़रिश्ते क्या हैं? फ़रमाया है—

अलन्यकफ़ियकुम अन्यमुद्दिकुम रब्बूकुम बिसलासते आला-फ़िमिनल मलाइकते। —(सूरते आले इमरन आयत १२४)

क्या यह नहीं सन्तुष्ट करेगा कि सहायता करे तुम्हारा रब तुम्हारे साथ तीन हज़ार फ़रिश्तों के साथ।

बदर के संग्राम में मुसलमानों की सहायता के लिए ३ हज़ार फ़रिश्तों के आने का वर्णन है। इनकी सहायता से मुसलमानों ने सफलता प्राप्त की। **युद्धों का तो अहले इस्लाम को बाद में भी सामना करना पड़ा, परन्तु यह फ़रिश्तों की सेना कहीं और भी आई हो ऐसी प्रमाणिक चर्चा और कहीं नहीं आई**। फ़रिश्तों में लड़ने की शक्ति है यह और बात है कि इसका प्रयोग फिर नहीं हुआ। सम्भव है तब भी न हुआ हो यही बात निम्न आयत में कही गई है।

व अनज़ल बिजनूदिन लमतरोनहा।

—(सूरते तौबा आयत २६)

और उतारी सेना नहीं देखी उनको तूने।

हज़रत पैग़म्बर ने भी वह सेना नहीं देखी। वह आए, लड़े, मुसलमानों को विजय दिला गए और पता भी न लगा कि आए थे।

यह तो एक सेवा हुई जो एक समय उनसे ली गई। सामान्यतया वह क्या करते हैं? लिखा है—

तअरजुलमलइकातो वरूहो इलैहेफ़ी योमिन कानमिकदारहू ख़मसीना अलफ़ासिनतिन। —(सूरते मआरिज आयत ४)

फ़रिश्ते व रूहें (आत्माएँ) उसकी ओर चढ़ते हैं उसके उस दिन में जिसकी अवधि है पचास हज़ार बरस।

युदब्बिरूल अमरामिनस्समाए इलल अरज़े सुम्मायअरजो इलैहे फ़ीयोमिन कान मिकदारहू अलफ़ा सनतिन मिम्मातअदून।

—(सूरते सजदा आयत ५)

आसमान से कार्यों की व्यवस्था करता है भूमि की ओर फिर चढ़ता है उसकी ओर एक दिन में जिसकी अवधि तुम्हारे हिसाब से एक हज़ार वर्ष है।

हमारे हिसाब से हज़ार वर्ष या पचास हज़ार वर्ष फ़रिश्तों का एक दिन है। परस्पर विरोध का वर्णन हम पहले कर चुके हैं। अल्लामियाँ के आसमान पर रहने के कारण इन कारिन्दों की आवश्यकता पर भी विचार किया जा चुका है। कयामत में फरिश्तों का वर्णन है—

वलमलको अला अरजाइहा व यहमिलो अर्शारब्बि का फ़ौकहुम योमयिज़ुन समानियतुन। —(सूरते हाका आयत १७)

और फ़रिश्ते उसके ऊपर दिशाओं में होंगे और आठ फ़रिश्ते तेरे रब का तख्त अपने ऊपर उठाए होंगे।

यह आठ व्यक्ति कैसे होंगे इसका वर्णन पहले किया जा चुका है उनकी सूरतें पहाड़ी बकरे जैसी होंगी।

योमा यकूमुरूहो वलमलाइकतो सफ़्फ़न।

—(सूरते निसा आयत ३८)

उस दिन खड़ी होंगी आत्माएँ और फ़रिश्ते पंक्तिबद्ध।

जिबरईल जो इल्हाम लाता (है) और जिसने मरियम को बिना पति के पुत्र का समाचार दिया था उसका वर्णन विगत अध्यायों में किया जा चुका है। इसकी आवश्यकता, आवश्यकता के न होने पर भी संक्षिप्त टिप्पणी की जा चुकी है। अन्त में मलिकुल मौत (मृत्यु का फरिश्ता) का वर्णन भी कर दें।

कुलयतवफ़्फ़ाकुम मलकोल मौतिल्लज़ी वक्किलाबिकुम।

—(सूरते सजदा आयत ११)

कि अधिकार पालेगा तुम पर मृत्यु का फ़रिश्ता जो तुम पर नियत किया गया है।

लौतरा इज़ा यतवफ़्फ़ाल्लज़ीना कफ़रूलमलाइकतो

यज़्रिबूना वजूहहुम व अदबारहुम व ज़ूकुअज़ाब लहरीक।

—(सूरते इन्फ़ाल आयत ५०)

क्या ही अच्छा हो कि तू देखे जब जान निकालते हैं उन लोगों की फ़रिश्ते कि जो काफ़िर हुए, मारते हैं उनके मुँह पर और पीठ पर और (कहते हैं कि) चखो पीड़ा जलने की।

मृत्यु के लिये फ़िरशता क्यों ?—मौत के लिए फ़रिश्ता नियत करने की क्या आवश्यकता है? **जब अल्लामियाँ हर स्थान में व्यापक हैं और लोगों को मार व जीवित कर सकते हैं तो उसके और मनुष्यों के बीच में एक और बिचौलिये की क्या आवश्यकता है? आसमानों पर बैठे हुए को इसकी आवश्यकता हो सकती है। सर्वव्यापक को नहीं** जैसे इल्हाम के लिए फ़रिश्ते को माध्यम बनाने से प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि फ़रिश्ते और अल्लामियाँ के मध्य और कौन बिचौलिया होगा? वैसे ही मलिकुल-मौत (मृत्यु के फ़रिश्ते) के बारे में भी यही प्रश्न उत्पन्न होता है कि यदि उसे मारना उद्देश्य है तो किसे इस काम पर नियत किया जाए? **क्योंकि कुरान में कहा है कि अल्लामियाँ के अतिरिक्त और कोई सत्ता विद्यमान नहीं।**

कुल्लो शैउनहालिकुन इल्ला वजहहू।

—(अलकसस रकूअ ९)

उसका नाश कौन करेगा ?—जब सब नाशवान हैं और प्रत्येक के नाश के लिए **मलिकुल-मौत** बिचौलिए का काम देता है तो उसके अपने विनाश के लिए माध्यम कौन-सा होगा? सच यह है कि यदि परमात्मा के प्रत्येक कार्य के लिए उसके व उसके कर्म के बीच माध्यम मान लो तो फिर बिचौलियों की सीमा ही नहीं रहेगी। **अच्छा यह है कि उसके लिए बिचौलिया स्वीकार ही न करो उस स्वतन्त्र कर्त्ता को बिना वास्ता (माध्यम) के स्वतन्त्र कर्त्ता ही रहने दो।**

कुरान का ज्ञान

(प्रकृति के नियम)

ईश्वरीय ज्ञान की एक कसौटी—किसी पुस्तक के नित्य या दूसरे शब्दों में इल्हामी (ईश्वरीय) होने की एक कसौटी यह है कि उसमें जितने भी वर्णन हों प्रकृति के **दृश्यमान नियमों के अनुकूल हों**। मनुष्य कभी किसी प्रकृति के नियम से परिचित हो जाता है और कभी उसे भूलकर कल्पना व भ्रम के आधार पर मिथ्या भ्रमों की कल्पना करता है। परमात्मा सर्वज्ञ होने से इस दोष से रहित है और इसीलिए परमात्मा की पुस्तक में कोई भी ऐसी बात नहीं हो सकती जिसका खण्डन प्रकृति के नियम करते हों, **संसार की सारी कार्यशाला परमात्मा के ज्ञान की प्रयोगशाला ही तो है**। कुरान के भविष्य ज्ञान के सम्बन्ध में हम विगत अध्यायों में बहुत कुछ लिख चुके हैं पाठकों ने देख लिया कि **तर्क व दर्शन कहाँ तक कुरान की कल्पनाओं का साथ दे सकता है**? कहीं-कहीं ऐसे उद्धरण भी दिए जा चुके हैं जिनका प्राकृतिक नियमों से स्पष्ट विरोध पाया जाता है। यहाँ इस विषय की कुछ आयतें का वर्णन करेंगे और **न्याय पाठक पर छोड़ेंगे कि क्या वह पुस्तक जो ऐसे प्रकृति नियमों से विरुद्ध वर्णनों से भरी पड़ी हो ईश्वरीय पुस्तक हो सकती है?**

सूरते बकर आयत २२ में आया है—

अल्लज़ी जअला लकुमुअरजा फ़िराशन व स्समाआबिनाअन।

—(सूरते बकर आयत २२)

ख़ुदा वह है जिसने तुम्हारे लिए भूमि को बिछौना, आसमान को छत बनाया।

आसमान को छत केवल कवि कल्पना की भाँति ही नहीं कहा।

सूरते रअद में फ़रमाया है—

अल्लाहुल्लज़ी रफ़अस्समावाते बग़ैर अमदिन तरौनहा।

—(सूरते रअद आयत २)

अल्लाह वह है कि जिसने आसमानों को बिना स्तम्भों के ऊँचा उठाया जो तुम देख सकते हो।

तफ़शीर में आता है—इस आयत पर तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

लाज़िम मे आयद कि सतून अस्त लेकिन मरई शुमा नेस्त।

सिद्ध होता है कि स्तम्भ तो हैं, लेकिन तुम उन्हें देख नहीं सकते।

यही बात सूरते लुकमान में कही है—

ख़लकस्समावाते बग़ैर अमदिन तरोनहा।

—(लुकमान आयत ९)

उत्पन्न किया आसमानों को बिना सतूनों के जो तुम देखते हो। आसमान का फटना भी फ़रमाया है—

व इज़स्समाओ इन्फ़तरत व इज़ल कवाकिब इन्तशरत व इजल बहारे फ़ुज्जिरत व इज़लकबूरो बुअसिरत।

—(सूरते इन्फ़ितार आयत १-४)

जब आसमान फट जावे और जब तारे झड़ जावें जब दरिया चीरे जावें जब कबरें ज़िन्दा होकर उठाई जायें।

व योमातशक्ककोस्समाओ बिलग़मा मे।

—(सूरते फ़ुरकान आयत २३)

और जिस दिन फट जायेगा आसमान बदली से।

तफ़ीरे हुसैनी में फ़रमाया है—

बशिगाफ़द आसमानहा बसबब अबरे सफ़ेद कि बालाए हफ़्त तबका आसमास्त, व ग़लज़े ओ बराबर हमा समावात व ओ गिरांतर अस्त अज़हमा आस्मानहा व हक्के सुबहानहू इमरोज़ ओ रा बकुदरत निगाहदाश्ता, रोज़े कयामत ओ रा बर आसमान्हा अफ़गन्द, व बहर आसमाने कि रसद। आं आसमान शगाफ़्तागरदद।

फट जाएँगे आसमान **सफ़ेद बादल के कारण जो सात तबका (दर्जा) आसमान के ऊपर है और जिसका आकार सात आसमानों के समान है और वह भारी है सब आसमानों से और हक्केताला (महान् प्रभु) ने उसे अपनी शक्ति से रोका हुआ है।** कयामत के

दिन उसे आसमानों पर गिराएगा और वह जिस आसमान पर पहुँचेगा वह आसमान फट जाएगा।

वन्शक्कतेस्समाआ फहियायोमइजिन।

—(सूरते हाका आयत १६)

और फट जाएगा आसमान और वह दिन सुस्त होगा।[1]

लीजिए आसमान चलता भी है। सात आसमानों का वर्णन कुरान में भाष्यों में तो आ ही गया अब कुरान की आयतों में देखिए—

अलमतो कैफ़ा ख़लकल्लाहो सबअस्समावातिन तिबाकन व जअलकमरा फ़ीहन्ना नूरन व जअलश्शमसा सिराजन।

—(सूरते नूह आयत १४-१५-१६)

क्या नहीं देखा तुमने अल्लाह ने सात आसमान ऊपर नीचे पैदा किए और बनाया चाँद उनके बीच में प्रकाश और बनाया सूरज को दीपक।

अब छत एक न रही सात हो गयीं। उनके बीच में चाँद व सूरज रखे गए। इस पर प्रश्न होगा कि इन नक्षत्रों के प्रकाश इन छत्तों के बीचों बीच रुक नहीं जाते? सम्भव है कोई कहे कि यह छतें साफ़ व शुद्ध शायद शीशों की हैं। कुरान फ़रमाता है—

व इज़स्समा ओ कुशितत। —(सूरते तकवीर आयत ११)

जब आकाश की खाल उतारी जाए।

तफ़सीरे जलालैन में कहा है—

जैसा कि बकरी का चमड़ा उतारा जाता है।

ऐसे आसमान से पानी उतरने का जिक्र आए तो क्या समझा जाये, कहा है—

अन्ज़ला मिनस्समाए माअन। —(सूरते रअद आयत १७)

उतारा आसमान से पानी।

इन ठोस छतों में पक्केपन के कार्य के कारण पानी पहुँचने की सम्भावना नहीं यह पानी तो वहीं से गिराया जाएगा।

अलमतरा अन्नल्लाहा यस्जुदलहू मिनस्समावाते व मिनस

---

१. 'फ़तह-उल-हमीद' व फ़ारुकी जी के अनुवाद में ''वह उस दिन निर्बल (कमज़ोर) होगा।'' यह अर्थ दिये हैं। —'जिज्ञासु'

अरज़े वश्शमसोबलकमरो वन्नजूमोवल जिबालो वश्शजरो।

—(सूरते हज १८)

क्या नहीं देखा तूने कि अल्लाह को सजदा (नमन) करते हैं वे लोग जो आसमानों में हैं, और वह जो ज़मीन में है और सूरज, पहाड़ और वृक्ष।

हम इस लेख में अलंकार समझ लेते, परन्तु उपरोक्त वर्णन रहते हुए इसको अलंकार नहीं समझा जा सकता। चन्द्रमा और सूरज के निकलने और डूबने को और पहाड़ों व वृक्षों के साए को भ्रमवश सजदा (नमन) समझा गया है। **अन्य स्थानों पर साए के बढ़ने व घटने को अचम्भा समझा है। प्राकृतिक नियमों से अज्ञानी होने के कारण मनुष्य कल्पनाएँ कर बैठता है।** इसमें वह विवश है। हाँ ईश्वरीय रचना में यह भ्रमों का समावेश नहीं हो सकता। यह हुई आसमान की दशा। सूरज का भी सुन लीलिए।

इज़श्शमसो कुव्विरत। —(सूरते तकवीर आयत १)

जब सूरज लपेटा जाए।

सूरते कहफ़ में ज़ुलकरनैन (फरिश्ता) का वर्णन है—

हत्ताइज़ा बलगा मग़रिबश्शमसे वजदहात ग़रुबाफ़ी ऐनिन हमिय्यतिन। —(सूरते कहफ़ आयत ८५)

यहाँ तक कि जब वह पहुँचा सूरज के अस्त होने के स्थान पर और पाया उस सूरज (एक) कीचड़ के स्रोत में डूबता है।

कुरान के रचयिता के विचार में पश्चिम कोई स्थान है जहाँ सूरज कीचड़ के गड्ढे में जा गिरता है। **आजकल के मौलाना लिखते हैं—ज़ुलकरनैन ने अज्ञानवश ऐसा समझा और कुरान ने उसे ज्यों का त्यों लिख दिया।** कुरान की ऐतिहासिक शुद्धता तो प्रशंसनीय है, परन्तु कहीं पाठक इस वर्णन पर कुरान की सम्पुष्टि की मोहर न समझ बैठे भ्रान्ति का निवारण भी तो कर देना आवश्यक था जो करना चाहिए था। **कहीं तो लिखा होता कि सूरज के डूबने का स्थान कीचड़ नहीं। पानी में सूरज का जा पड़ना कुरान के व्याख्याकारों पर ऐसा छा गया है कि प्रत्येक स्थान पर ऐसा ही वर्णन आया है।**

वजअश्शमसा वलकमरा।

और इकट्ठा किया जायेगा सूरज और चन्द्रमा।

तफ़सीरे हुसैनी में इसकी व्याख्या की है—

यानी एशां रा बयक दीगर मुजतमअ साख़्ता दर दरिया अफगन्द।

अर्थात् उन्हें आपस में इकट्ठा करके दरिया में डाल देंगे। आसमानों की बातें हो लीं। अब ज़मीन की सुनिए—

इज़ा रुज्जतेल अरज़ो रज्जन व बुस्सतिल जिबालोबुस्सन।

—(सूरते वाकिया आयत ४)

जब हिलाई जाएगी ज़मीन व टुकड़े हो पहाड़ टूटकर। अगली पंक्ति में दूसरे शब्दों में इस समय स्थिर व शान्त है। इस हिलने के साथ पहाड़ों का टूटना क्या है?

वजअलना फ़िल अरज़े रवासिया अन तमीदा बिहिम।

—(सूरते अंबिया आयत ३१)

ज़मीन के बीच पहाड़ बनाए हैं ताकि ऐसा न कि हो वह हिल जाए।

व अलका फ़िलअरज़े रवासिया अन तमीदा बिकुम।

—(सूरते लुकमान आयत १०)

पहाड़ों को ज़मीन के बीच में डाला ऐसा न हो कि हिल जाए।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

व दर मौज़िह अज़ ज़िहाक नकल मेकुनद कि हक्कासुब-हानहू नौज़दह कोह रा मेख़े ज़मीन करद ता बर जाए बरएस्तद।

और मौजह में जहाक से उद्धृत है कि हक ताला ने उन्नीस पहाड़ भूमि के लिए कीलों के रूप में बनाए ताकि एक स्थान पर ठहरें।

चमत्कार के अध्याय में कई प्रकृति नियमों के विरुद्ध कार्यों का वर्णन किया जा चुका है। जिन्हें अल्लामियाँ की निशानियाँ कहा गया है। ऐसे प्रसंगों में आयत या निशानी का अर्थ चमत्कार होता है। वर्णित अध्याय में जितनी निशानियों का वर्णन हुआ है वे अल्ला मियाँ के चमत्कार हैं। एक दो चमत्कार और वर्णन किए हैं—

अलम तरा अन्नल्लाहा यूलिजुल्लैला फ़िन्निहारे वन्निहारो

फ़िल्लैले............. अलमतरा अन्नलकुलका तजरी फ़िलबहारे बि निअमतिल्लाहे लियुरीकुम मिन आयातिही।

—(सूरते लुकमान आयत २८-३०)

क्या नहीं देखा तूने कि अल्लाह प्रविष्ट करता है रात को दिन में व दिन को रात में.....क्या न देखा तूने कि नौकाएँ चलती है दरियाओं में ख़ुदा की कृपा से ताकि तुमको कुछ अपने करिश्मे दिखाएँ।

भोले-भाले अरब निवासियों की दृष्टि में दिन के पीछे रात और रात के पीछे दिन होना और ठोस नौका का नदी के स्तर पर चलना चमत्कार था। ईश्वरीय निशानियाँ थी। वह बेचारे क्या जानें कि भूमि घूम रही है और उसका जो भाग सूरज के सामने आता है वह प्रकाशित हो जाता है, जो भाग उससे ओझल हो जाता है वहाँ रात होती है। उनकी दृष्टि में सूरज गन्दे कीचड़ में जा डूबा और फिर बाहर लाया गया। उन्हें **आर्थमिडीज** का यह सिद्धान्त कहाँ ज्ञात था कि **पानी का अपना भार होता है जो अपने से कम भार वाले बोझ को अपने ऊपर उठा रखता है!**

सितारों के झड़ने, गदला होने का वर्णन ऊपर हो चुका अब उनके बुर्ज (कंगूरे) होने का वर्णन सुनिए—

वस्समाओ जातलबुरुज। —(सूरते बुर्ज आयत १)

कसम है आसमान बरुजों वाले की।

बुरुज का अनुवाद किया है तफ़सीरे हुसैनी वाले ने—

या मनाज़िले कमर या दरहाए आसमान।

या चन्द्रमा के उतार चढ़ाव (छोटा बड़ा होना) या आसमान के दरवाज़े।

स्वामी दयानन्द पूछते हैं—

यदि—

आदि बुरुजों को बुरज कहता है तो और बुरज क्यों नहीं? बुर्ज के दो अर्थ हैं एक तो वह जिन्हें तफ़सीरे हुसैनी में मंजिल कहा है। दूसरे दरवाजे जैसे किलों के होते हैं और कुरान में कई स्थानों पर यह वर्णन आया है कि **जब जिन्न बुर्जों पर पहुँचते और आसमानों से हो रही अल्लाह मियाँ और फ़रिश्तों की परामर्श की सभाओं में**

सुनना चाहते हैं तो उन्हें मारा जाता। यहाँ आसमानों को किला और तारों को उनके दरवाजे कहा गया है वहाँ सामान्य प्रकृति ज्ञान के सर्वथा अभाव की तो पराकाष्ठा ही कर दी है। जैसा कि सूरते हजर रकूअ २ में वर्णन है—

वलकद जअलना फ़िस्समाए बुरुजन व जय्यनाहालिल नाज़िरीन वहफ़िजनाहा मिन कुल्ले शैतानिर्रजीम इल्ला मनि स्तर कस्समआ फ़अतबअहू शिहाबुम्मुवीन।

—(सूरते हजर आयत १५-१८

और हमने बनाए आसमान में बुरज और दर्शकों के लिए उन्हें सजाया (तारों के साथ) और प्रत्येक शैतान से उसको सुरक्षा प्रदान की, परन्तु जो उनने चोरी से सुन लिया, अतः उस पर आग का अंगारा खुला हुआ गिरता है।

मुज़िहुल कुरान से लिखा है—

फ़रिश्तों के परस्पर विचार विमर्श सुनने के लिए शैतान जा लगते हैं आसमान के निकट (उनके ऊपर दण्ड स्वरूप) ऊपर से अंगारे पड़ते हैं।

अल्लाह द्वारा मृतकों को जीवित करने का वर्णन चमत्कारों के अध्याय में आ चुका है। एक मृतक गाय का कोई अंग लगने से ही जी उठा। कुछ जीवितों को खड़े-खड़े मनुष्यों के चोलों को बन्दरों के चोले में डाल दिया गया। यह सब चमत्कार पुराने काल की ही विशेषता रखते थे आज इनका उपयोग नहीं।

सूरते अस सजदा में फ़रमाया है—

लहय्यलमूता। —(आयत ३८)

सचमुच मुर्दों को जीवित करने वाला है (ख़ुदा)।

कुरान के भाष्यकारों की दृष्टि में इस जीवन से पूर्व की दशा को भी जो उनकी मान्यता के अनुसार केवल अभाव की थी। कुरान की परिभाषा में उसे मृत्यु कहते हैं। तो क्या वर्तमान जीवन के बाद की दशा भी केवल अभाव की दशा होगी?

यदि ऐसा हो तो अभाव के बाद का जीवन सर्वथा नए विद्यमानों का जीवन होगा, क्योंकि दो भावों में यदि केवल अभाव का अन्तर हो जाए तो भाव की श्रृंखला न रहने से भाव दो हो जाते हैं एक नहीं

रहता। यदि यह दशा हो तो कयामत के दिन अपराधी हिसाब के लिए न बुलाए जायें, अपितु उनके स्थान पर कोई और आत्माएँ उपस्थित हो जाएँ यह कुरान का सिद्धान्त नहीं। तब कुरान के दृष्टिकोण से मौत केवल अभाव का नाम न होगा। अपितु आत्मा के शरीर से पृथक् हो जाने को मृत्यु कहते होंगे। परन्तु खड़ा फिर कबरों को होना है और **मुनकिर नकीर (कबर के फ़रिश्ते) से भी कब्र में ही काम पड़ता है तब तो शरीर का आत्मा से पृथक् होना भी मृत्यु की परिभाषा नहीं, अपितु आत्मा का कुछ काल तक कारोबार से अवकाश पाना ही मृत्यु का तात्पर्य हुआ। अब प्रश्न यह है कि उन्हें अवकाश क्यों दिया जाता है ? काम का सारा सामान उपस्थित है।** संसार का कारखाना चल रहा है और एक जीवन में सभी आत्माओं ने अपनी आध्यात्मिक उन्नति पूरी नहीं की होती है तब क्यों न उन्हें और अवसर दिया जाए? प्रत्येक दशा में आत्माओं के अस्तित्व में एक समय ऐसा आता है जब वह कोई कार्य नहीं करतीं और उसे इस्लाम की परिभाषा में मृत्यु कहा जाता है तो क्या यही बात अल्लाह मियाँ के बारे में नहीं कही जा सकत ?, **वर्तमान सृष्टि से पूर्व वह विद्यमान तो था, परन्तु कोई कार्य नहीं करता था तो उस समय उसकी क्या अवस्था थी और जो दशा एक बार आ चुकी क्या वह फिर दोबारा नहीं आयेगी ?** इसका क्या भरोसा, फिर यह किस उद्देश्य के लिए कहा जाता है कि अल्लाह मियाँ मृत्यु के चपेट में नहीं आता ?

आर्य लोग तो मृत्यु के अर्थ समझते हैं शरीर से पृथक् होना। परमात्मा शरीर है ही नहीं। इसलिए वह इससे अलग भी नहीं होता, परन्तु इस्लामी सिद्धान्त के अनुसार आत्मा शरीर से अलग तो होती नहीं उन्हीं कबरों को चालीस दिन की वर्षा से जीवित हो उठना है फिर **मृत्यु की परिभाषा हुई स्थगित होना** और अल्लाह मियाँ इस बहुलता के काल से पूर्व कुछ ऐसे ही थे और **अहमदियों के सिद्धान्त के अनुसार फिर भी जब एकत्व का काल आएगा तो ऐसे ही हो जावेंगे इन्हें अमर (मृत्यु रहित) किन अर्थों में माना जाए ?**

यह हुई जीवन के बाद की बात, यह जीवन कैसे प्रदान किया गया, सूरते नूर में कहा है—

वल्ला हो ख़लका कुल्ला दाबतिन मिन माइन फ़मिन हुमम्मान्यमशी अलाबतनिहि। —(सूरते नूर आयत ४५)

और अल्लाह ने पानी से सभी जानवर बनाये इनमें कोई कोई तो अपने पेट के सहारे चलता है (जैसे साँप), जानवरों के शरीर में केवल पानी नहीं होता अन्य तत्त्व भी होते हैं यह इसी भूल का एक और रूप है जिसके अनुसार मानव को मिट्टी से उत्पन्न हुआ कहा जाता है।

कुरान शरीफ़ में और उसके भाष्यों में चित्र विचित्र उत्पत्तियों के तो कई नमूने हैं जैसे फ़रिश्ते बकरे के रूप में हैं जिनके पाँवों से घुटनों तक का अन्तर एक आकाश से दूसरे आकाश तक का अन्तर है। जिन्न और शैतान कि आग के ज्वलन्त रूप हैं। निम्न में एक और रचना का वर्णन किया जाएगा जो इन सबको भी मात कर देती है।

कालू या जुलकरनैने इन्ना याजूजा व माजूजा मुफ़्सिदूना फ़िल अरज़े। —(सूरते कहफ़ आयत ९४)

कहा ज़लकरनैन याजूज माजूज दंगा करने वाले हैं पृथ्वी पर।

तफ़सीरे हुसैनी में लिखा है—

दर ऐनुलमआनी आवुरदा अन्द कि आदम अलैअस्सलाम रा अहतलाम शुद व मनिए ओ बख़ाक आलूदा गश्त। आदम अज़ा हाल अन्दोहनाक गश्त। हक्के ताला ईं दो कौम रा अज़ां ख़ाक आलूदा मनी अबूलबशर बया फ़रीद।

ऐनुलमआनी में उद्धृत है कि **आदम को अहतलाम (स्वप्न-दोष) हुआ और उसका वीर्य मिट्टी में मिल गया।** आदम इस बात से दु:खी हुए। हक्केताला (ख़ुदा) ने इन दोनों जातियों को इस मिट्टी मिले वीर्य से उत्पन्न किया।

आगे फिर लिखा है—

दर हदीस आमदा कि सिनफ़े अज़ ऐशां बमिस्ले राजरा अरज़न्द व आं दरख्ते अस्त दर विलायत शाम तूले ओ सदा सद बीस्त गज़ अरज़ मसावी ओ व सिनफ़े कि अज़ यक गोश फ़राश साज़न्द व अज़दीगर गोश लिहाफ़ मे साज़न्द।

और हदीस में उद्धृत है कि इनकी एक शाखा अर पेड़ की भान्ति होती है और वह एक पेड़ है जो विलायत शाम में होता है।

लम्बाई उसकी १२० गज़ होती है व और चौड़ाई भी उतनी ही होती है और एक प्रकार की शाख वह है कि एक कान से बिछौना बनाती है और दूसरे कान से लिहाफ़ (रज़ाई)।

यह है कुरान वालों का पशु विज्ञान, यह जानवर इस समय तो कहीं है ही नहीं यदि कभी था भी तो उसके पैदा करने का उद्देश्य क्या यही था कि वे फ़साद ही करें?

इसमें इन बेचारों का तो कोई अपराध ही नहीं, क्योंकि वे तो केवल अभाव में आए और इस उपद्रव का निर्माता कौन हुआ? अभाव से उत्पत्ति का दार्शनिक परिणाम अत्यन्त भयानक है। अस्तु वह तो जो हुआ सो हुआ इस प्रकार के जीव का पता पशु जाति के विज्ञान से ही दो या यह केवल काल्पनिक कहानी है? जो ईश्वरीय ज्ञान में आ गई।

इल्हाम के उतरने का एक उद्देश्य भ्रमों का निवारण करना होता है। हम ऐसे कुछ बौद्धिक भ्रम भ्रान्तिओं का वर्णन तो इस अध्याय में कर ही चुके हैं। जो स्वयं कुरान में सच्चाइयों की भाँति वर्णित हुए हैं। **कुछ निश्चित अवधि की पुण्याई भ्रम पालक सम्प्रदायों की विशेषता होती है, इस्लाम भी इस पुण्याई से रिक्त नहीं है**। इसीलिए सूरते कदर में लैलतुलकदर (जिस रात को कुरान उतारा) की महानता वर्णन की है—

इन्ना अंजलनाहो फ़ीलैलतिलकदरे....वमाअदरका मा लैलतलकदरे.....ख़ैरुन मिनअलफ़ेशहरिन तनज्जोलमलाइकतो व रुहो फ़ीहा बिइजने रब्बाहिममिन कुल्ले अमरिन।

—(सूरते कदर आयत १, २, ५)

सचमुच हमने उतारा कुरान **लैलतुकदर (कीमती रात)** में और क्या जाने तू क्या है लैलतुलकदर में, उतरते हैं फ़रिश्ते और आत्माएँ उसमें साथ आदेश परवरदिगार के अपने हर काम के लिए।

सारा कुरान एक ही समय में तो उतरा नहीं, कभी यह आयत कभी वह आयत, फिर यह क्यों कि उतरने के इन सभी कालों में से लैलतुलकदर को विशेषतया पुण्याई के लिए चुन लिया गया है। क्या लैलतुलकदर में उतरे कुरान के अंश विशेषतया अन्य अंशों की तुलना में अधिक महत्त्व के है? इस महत्त्व का उद्धरण हमें कहीं

नहीं मिला। मौलाना सनाउल्ला ने इन आयतों की एक और व्याख्या कर डाली है। वह फ़रमाते हैं कि यह आयतें उतरी ही लैलतुलकदर की विशेषता में है। कुरान के किसी भाग के उतरने का इस विशेषता से सम्बन्ध नहीं तो फिर इस रात की विशेषता क्या है। कहा है—

खैरुन मिनअलफाशहरिन। —(सूरते कदर आयत ४)

यह रात हज़ार महीनों से उत्तम है।

वह किस बात में? **फ़रिश्ते और आत्मा तो प्रति रात्रि ईश्वरीय कारोबार के लिए उतरते होंगे। यदि ईश्वर को उनकी आवश्यकता है तो सदा है और नहीं तो उस रात भी नहीं**। फिर यह क्योंकि एक रात को पुण्याई भरी बना दिया है और वह एक ऐसी भ्रम की आधारशिला है जो बुद्धिजीवियों के लिए एक रहस्य ही है। **दिन और रातें सभी पवित्र हैं हमारे अपने कर्म इन्हें अच्छा व बुरा बनाते हैं।**

एक फ़रिशता भी अद्वितीय—फ़रिश्तों का वर्णन हम ऊपर कर चुके हैं। **कुरान में कहीं-कहीं आत्मा का वर्णन हुआ है कि वह आसमान से भूमि पर आता है। यह आत्मा (रूहु) क्या चीज़ है? कुरान के भाष्यकारों ने इसे भी फ़रिश्ता माना है। तब इसका नाम फ़रिश्तों के अतिरिक्त क्यों लिया जाता है**? वह लैलतुलकदर में आता है। हज़रत मरियम को हज़रत ईसा की उत्पत्ति का समाचार देने आया था। ईसाइयों की तसलीस में **रुहुल कुद्दस (पवित्रात्मा)** सम्मिलित है। सम्भव है इसका प्रवेश ही यहाँ फ़रिश्तों में किया हो, ईसाई सिद्धान्त के अनुसार वह भी पूजनीय है। यहाँ भी यह फ़रिश्तों में विशेषतया महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। फ़रिश्ता अकेला है उसकी समता का कोई नहीं। वह भी एक है। उसका कोई समान नहीं ऐसा कहा जा सकता है। **तो क्या वह अद्वितीय होने में अल्लामियाँ की समान कोटि में न हो जाएगा**? इसका अस्तित्व स्वीकार करने की दार्शनिक आवश्यकता क्या है? यह रहस्य किसी भाष्यकार ने स्पष्ट नहीं किया। यह काल्पनिक सत्ता है इस्लाम की कल्पनाओं का अंग है। कल्पनाओं का औचित्य से क्या सम्बन्ध? **हम इसकी आलोचना इसलिए करते हैं कि यह एक ईश्वरीय पुस्तक में वर्णित है। ईश्वरीय ज्ञान व मनघड़न्त कल्पना दो परस्पर विरोधी बाते हैं।**

अल्लाहमियाँ का घर

हम ऊपर आदम के स्वर्ग से निकाले जाने की कहानी का वर्णन कर चुके हैं। वहाँ लिखा है—

फ़अख़्रर मिन्हा। —(सूरते स्वाद आयत ७७)

सो निकल इन आसमानों से।

तो दण्ड किसे दिया ?—आसमानों से निकल जाने के क्या अर्थ ? क्या आसमानों पर अल्लाह मियाँ का विशेष अधिकार है और अन्य स्थानों पर उस प्रकार का अधिकार नहीं ? या अल्लाह ! तू तो अपने राज्य से किसी को निकाल देना भी चाहे तो न निकाल सके[1]। जब तक कि उसे सर्वथा अभाव में न कर दे और यदि उसका सर्वथा अभाव कर दिया तो दण्ड किसे दिया ? कहा जा सकता है कि यह आदेश इसी प्रकार दिया गया जैसे कोई राजा अपने किसी क्रोध के पात्र से कहे मेरे सामने से चला जा। **तो क्या आदम आसमानों पर अल्लाह मियाँ के सन्मुख था और ज़मीन पर नहीं** ? आसमान अल्लाहमियाँ की बैठक हुई न ? और ज़मीन केवल रियासत ? नहीं ज़मीन में भी अल्लाहमियाँ की कई जगहें विशेष है। फ़रमाया है—

वइज़्ा जअलनाल बैता मशाबतन ल्लिासैव अमनन वत्तख़िज़ू मिन मकामे इब्राहीमा मुसल्लन[2]। —(सूरते बकर आयत १२५)

हमने जब ऐसा घर बनाया जो पुण्य स्थान था जिसमें लोगों को सुरक्षा थी, अतः इस इब्राहीम के स्थान को नमाज़ के लिए ग्रहण करो।

यह काबा की पुण्याई बताई है। सारी भूमि पर परमात्मा का घर है फिर कारण क्या है एक विशेष स्थान को पुण्य का स्थान निर्धारित किया जाए मुसलमानों व ईसाइयों के सलीब के युद्ध इसी कारण

---

१. यह वैदिक सिद्धान्त सर सैयद ने भी स्वाकार किया है। —'जिज्ञासु'

२. अधिकांश तफ़सिरों में इस आयत की संख्या १२५ है। —'जिज्ञासु'

हुए और मक्का के मुसलमानों व ग़ैर मुसलमानों में भी केवल एक मन्दिर के लिए झगड़ा रहा। मकान क्या और नहीं बनाया जा सकता था। अल्लाहमियाँ ने कहा ही तो था—

फएनमातवल्लू फसम्मावजल्दुलाहे इन्नल्लाहा वासिउन अलीम।

—(सूरते बकर आयत ११५)

सो जिस ओर तुम मुख करो, उधर ही मुख है अल्लाह का। निस्सन्देह अल्लाह समाने वाला है जानने वाला है।

इस पर मूज़िहुल कुरान में लिखा है—

यह भी यहूदियों व ईसाइयों का विवाद था कि प्रत्येक अपने किबला (पूजा-स्थल) को श्रेष्ठ बताता था। अल्लाह ताला ने फ़रमाया कि अल्लाह विशेषतया एक दिशा में नहीं है जिस ओर मुँह करो वह आकृष्ट होता है।

इस समय तक यहूद से सुलह (मित्रता) थी और हज़रत मुहम्मद और उनके अनुयायी बैतुल मुकद्दस (पवित्र घर) की ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ते थे, परन्तु बाद में आयत उतरी—

कद तरातकल्लुबा वजहुका फ़िस्समाए फ़लनुवल्लि यन्नका किबलतन तरज़ाहा फ़वल्ले वजुहका शतरल मस्जिदिल हरामे, व हैसु मा कुन्तुम वल्लू वजूहुकुम शतरहू।

—(सूरते बकर आयत १४४)

वास्तव में हम देखते हैं तेरे मुँह का आसमान में फिरना अतः हम फेरेंगे तुझको इस किबले (की ओर) को कि तू पसन्द करे उसको सो फेरो मुँह **मस्जिदुल हराम** के और जहाँ कहीं तुम हो, अतः फेरो मुँह अपनी ओर। **अब आवश्यक हुआ कि नमाज़ का रुख (दिशा) उस ओर हो फिर वह प्रत्येक दिशा में अल्ला ताला का रूप है इसका क्या अर्थ हुआ ?**

नमाज़ ही तो वास्तविक पूजा है। यदि इसमें मुँह काबे की ओर करना ज़रूरी है तो अल्लाह का रुख उधर ही हुआ। और नबी का मुँह आसमान की ओर फिरने से जो किबला (ख़ुदा का पूजा-स्थल) बदला गया। क्या इससे यह प्रकट नहीं कि ख़ुदा आसमान ही में है और उसका एक तीर्थ स्थल ज़मीन में स्थापित हुआ लीजिए स्वयं अल्ला फ़रमाता है—

व तहिहर वैती लित्ताइफ़ीना वल काइमिना व यजकुरु इस्मल्लाहे.....सुम्माल यकजू अतफसहुम वलयूफू नुजूडहुम वलयत्तवफ़्फ़ू बिलबैतेल अतीक। —(सूरते हज २६, २७, २९)

और पवित्र बना मेरा घर उसके परिक्रमा करने वालों के और खड़े रहने वालों के लिए.... और उसमें स्मरण करें अल्लाह को फिर दूर करें बुराईयाँ अपनी और पूरी करें नज़्रे (मन्नतें) और परिक्रमा करें पुराने घर की।

लीजिए इसे अल्लाह ने अपना घर कह ही दिया। तभी तो वहाँ जाना (यात्रा) आवश्यक है उसकी परिक्रमा आवश्यक है। **एक पत्थर के टुकड़े को चूमना आवश्यक है। कोई पूछे कि यह मूर्त्ति पूजा नहीं तो और क्या है?** किसी घर को अल्लाह का विशेष मानना उसकी परिक्रमा करना, पत्थर को चूमना यह विचित्र तौहीद (एकेश्वरवाद) है। भेंट चढ़ाने पर तफ़सीरे जलालैन ने लिखा है—

अर्थात् कुर्बानी (जानवर की हत्या बलि देना) और निर्धारित पशु जिसके बलि देने की मिन्नत मानी है उसको वध करें।

विचारे पशुओं ने न जाने क्या पाप किया है उन पर तो फ़रमाया है—

लकुम फ़ीहा मनाफ़िओ इला अजलिन मुसम्मन सुम्मा मुहिल्लुहा इलल बैतिल अतीक। —(सूरते हजर रकूअ ४)

तुमको चौपायों में फ़ायदे हैं एक स्थिर वचन तक फिर उनको पहुँचना उस पुराने घर में। बार्डर पर लिखा है—

फिर उनके वध करने का स्थान बैतुल्ला के पास है।

पशुओं को बनाया ही क्यों?—पशु वध करना भी क्या पूजा का भाग है? अहले इस्लाम का विश्वास है कि **अल्लाह की राह में मरने वाले पशु का जीवनोद्देश्य पूरा हो जाता है। हमें आश्चर्य है कि अल्लाह ने तो उन्हें जीवन प्रदान किया है और तुम उससे वंचित करते हो और फिर कहते हो कि अल्लाह का उद्देश्य पूरा करते हैं। यही उद्देश्य था तो उत्पन्न क्यों किया था? वधशाला और ख़ुदा का घर!**

सूरते **जिन्न** में लिखा है—

इन्नल मस्जिदा लिल्लाहे फ़लातदऊम अल्लाहे अहदन।

—(सूरते जिन्न आयत-१८)

वास्तव में मस्जिदें अल्लाह के लिए हैं। अतः अल्लाह के साथ और किसी को मत पुकारो।

परन्तु यहाँ पुकारना तो अल्लाह के साथ रसूल का भी बना हुआ है। इस पर विस्तृत चर्चा शिरक के अध्याय में कर चुके हैं। अल्लाह के लिए एक घर तो विशिष्ट किया ही था अब प्रत्येक मस्जिद अल्लाह के लिए एक विशिष्ट कर दी। यदि अल्लाह के घर[1] के अर्थ यह होते कि यह संसार के रचाने वाले की सम्पत्ति है इसमें जो व्यक्ति भी चाहे आराम पा सकता है तो कोई हानि नहीं थी, परन्तु यहाँ तो ग़ैर मुसलमानों के सम्बन्ध में आदेश है—

इन्नमल मूशरिकूना नलसुन वलातकरिबुल मस्जिदल हराम।

वास्तव में मुशरिक लोग पलीद (गन्दे) हैं सो मस्जिदल हराम के निकट न हों।

गन्दे कहकर उनके मस्जिद के निकट जाने से भी इन्कार कर दिया है। यही नहीं जहाँ एक बार मस्जिद बन गई वह भूमि अब किसी और काम नहीं आएगी। चाहे रास्ते में ही किसी अनपढ़ ने बेढब-सी दीवार खींच दी हो वह हटाई न जा सकेगी, क्योंकि अल्लाह की है। **लोगों को अपनी इमारतों के मुकाबिले में इंच इंच पर लड़ते हुए देखा है यहाँ वही हालत अल्लाहमियाँ की हो रही है।** पड़ोसी का घर खराब होता है, हो जाए। किसी सड़क के चौड़ा करने में रुकावट आ रही है आए। **अल्लामियाँ का घर अल्लाहमियाँ की प्रजा का घर नहीं बन सकता। यह स्पष्ट ही मूर्त्ति पूजा नहीं तो क्या है?**

---

१. प्रश्न तो यह है कि अल्लाह को घर की आवश्यकता ही क्या है? वह सर्वत्र है। एकत्र होता तो घर की आवश्यकता पड़ सकती थी। जब सब मस्जिदें उसका घर हो गईं तो **'बैत अल्लाह'** की विशिष्टता क्या रही? सच्च तो यह हैं अज्ञान के कारण मनुष्य ईश्वर का स्वरूप अपनी कल्पना के अनुसार—अपने जैसा ही घड़ता है। —'जिज्ञासु'

कुरान में नारी का रूप

फिर मानव मात्र का अर्थ ही कुछ नहीं—संसार की जनसंख्या की आधी स्त्रियाँ हैं और किसी मत का यह दावा कि वह मानव मात्र के लिए कल्याण करने आया है इस कसौटी पर परखा जाना आवश्यक है कि वह मानव समाज के इस अर्ध भाग को सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक अधिकार क्या देता है। **कुरान में कुंवारा रहना मना है। बिना विवाह के कोई मनुष्य रह नहीं सकता**। अल्प, व्यस्क, बच्चा तो होता ही माँ-बाप के हाथ का खिलौना है। **वयस्क होने पर मुसलमान स्त्रियों को यह आदेश है**—

व करना फी बयूतिकुन्ना। —(सूरते अहज़ाब आयत ३२)

और ठहरी रहो अपने घरों में।

यही वह आयत है जिसके आधार पर परदा प्रथा खड़ी की गई है। इससे शारीरिक, मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक सब प्रकार की हानियाँ होती हैं और हो रही हैं। स्वयं इस्लामी देशों में इस प्रथा के विरुद्ध कड़ा आन्दोलन किया जा रहा है। कानून बन रहे हैं जिससे परदे को अनावश्यक ही नहीं, अनूचित घोषित किया जा रहा है। परदा इस बात का प्रमाण है कि स्त्री अपनी स्वतन्त्र सत्ता नहीं रखती। वह स्वतन्त्र रह नहीं सकती। विवाह से पूर्व व बाद में दोनों दशाओं में परदे का प्रतिबन्ध बना रहता है।[१]

इस्लाम में विवाह का सम्बन्ध निरस्त किया जा सकता है, परन्तु **जहाँ पति जब चाहे तलाक दे सकता है और उसे किसी न्यायालय में जाने की आवश्यकता नहीं वहाँ स्त्रियों को न्यायालय में सिद्ध करना होता है कि उसे तलाक दिया जाना आवश्यक है**। नारी और न्यायालय तलाक देते समय पुरुष पर केवल आवश्यक है कि वह महर (विवाह के समय निश्चित राशि) अदा कर दे। इसे कुरान की परिभाषा में **अजूरहुन्ना** कहा है।

१. अब जो कट्टरपंथी पूरे विश्व में आन्दोलन चला रहे हैं इसका अन्त क्या होता है यह आने वाले युग का इतिहास बतायेगा। —'जिज्ञासु'

फ़मा अस्तमतअतमाबिहि मिन्हुन्ना फ़आतूहुन्ना अजूरहुन्ना फ़री ज़तुन।

और जिनसे तुम फ़ायदा उठाओ उन्हें उनका निर्धारित किया गया महर दे दो।

तलाक से अल्लाह रुष्ट—शादी रुपयों-पैसों का रिश्ता नहीं। यह दो शरीरों का ही नहीं दो दिलों का बन्धन है जिसकी दशा शारीरिक रूप में सन्तान, परमात्मा की पवित्र सन्तान है। और आत्मिक दशा में दो आत्माओं की दो शरीरों में एकता है। **इतना ही अच्छा है कि एक हदीस में फ़रमाया है कि ख़ुदा किसी बात से इतना रुष्ट नहीं होता जितना तलाक से।**

सन्तान हो जाने पर किसी ने तलाक दे दिया तो? फ़रमाया है—

बल बालिदातोयुरज़िअना औलादहुन्ना हौलैने कामिलीने, लिमन अरादा अन युतिम्मरज़ाअता व अललमौलूदे लहू रिज़कहुन्न व कि सवतहुन्ना बिल मारुफ़े।

—(सूरते बकर आयत २३३)

और माँऐ दूध पिलायें अपनी सन्तानों को पूरे दो वर्ष। और यदि वह (बाप) दूध पिलाने की अवधि पूरा कराना चाहे। और बाप पर (ज़रूरी है) उनका खिलाना, पिलाना और कपड़े-लत्तों का (प्रबन्ध) **रिवाज के अनुसार माँ का रिश्ता इतना ही है औलाद से, इससे बढ़कर उनकी वह क्या लगती है?**

फिर बहु विवाह की आज्ञा है। कहा है—

फ़न्किहु मताबालकुम मिनन्निसाए मसना व सलास वरूब आफ़इन ख़िफ्तुम इल्ला तअदिलू फ़वाहिदतन ओमामलकत ईमानुकुम। —(सूरते निसा आयत ३)

फिर निकाह करो जो औरतें तुम्हें अच्छी लगें। दो, तीन या चार, परन्तु यदि तुम्हें भय हो कि तुम न्याय नहीं कर सकोगे (उस दशा में) फिर एक (ही) करो जो तुम्हारे दाहिने हाथ की सम्पत्ति है। यह अधिक अच्छा है ताकि तुम सच्चे रास्ते से न उल्टा करो।

अधिक शादियों पर न्याय शर्त है। फिर कहा है—

व लन तस्ततीऊ अन तअदिलू बैनन्निसांए वलौहरसतुम।

—(सूरते निसा आयत १२९)

और तुम औरतों में न्याय नहीं कर सकते चाहे तुम लालच

करो।

मुसलमान फिर भी बहुविवाह करते हैं—ऐसी दशा में तो अहले इस्लाम को एक से अधिक विवाह करने ही नहीं चाहिए, परन्तु हो रहे हैं और उनका (हानिकारक) फल भी भुगता जा रहा है। इस हेराफेरी के द्वारा विरोध करने से तो उचित यही था कि स्पष्ट निषेध कर दिया जाता। बात यह है कि कुरान ने (अदल बिन्नसा) (स्त्रियों में न्याय) पर तो आग्रह किया है, परन्तु अदल बैना जिन्सैन (दो प्राणियों में न्याय) स्त्री व पुरुषों में न्याय को लक्ष्य नहीं बनाया है। **औरतों में न्याय का तो अर्थ यह हुआ कि मर्द शासक है औरतें उनकी कचहरी में एक पक्ष है। चाहिए था कि मर्द व औरत को परस्पर पक्ष बनाना** जैसे मर्द को यह पसन्द नहीं कि उसकी स्त्री का परपुरुष से सम्बन्ध हो, वैसे ही औरत भी सौतन के डाह से जलती है। न्याय यह है कि दोनों को एक ही विवाह पर सन्तोष करना चाहिए फिर दाहिने हाथ की सम्पत्ति, जिसके अर्थ सभी कुरान के भाष्यकारों ने बान्दियाँ किए हैं। यह दो प्राणियों में न्याय का सर्वथा विपरीत है। यह आज्ञा किसी नैतिकता के नियमानुसार उचित नहीं हो सकती।

शियाओं के मत में मुतआ (अस्थायी विवाह) भी उचित है। जो आयत हम ऊपर महर के अधिकार के दिए जाने के सम्बन्ध में प्रमाण रूप में उद्धृत कर चुके हैं। **शिया मुसलमान इस आयत से मुतआ का औचित्य ग्रहण करते हैं**। सुन्नी मुसलमान भी मानते हैं कि मुहम्मद साहेब के जीवनकाल में कुछ समय तक मुतआ प्रचलित रहा बाद में निषिद्ध हुआ और मुतआ के अर्थ हैं अस्थायी विवाह। जिसका रिवाज ईरान में अब तक पाया जाता है। विवाह और अस्थायी, फिर इस पर हलाला है, कहा है—

वत्तलाको मर्रतैने....फ़इनतल्लकहा फ़लातहिल्लु लहू मिनबादे हत्तातन्किहाज़ौजन गरहू, फ़इन तल्लकहा फ़ला जुनाहा। अलैहुमा। —(सूरते बकर आयत २२९-२३०)

तलाक दो बार दिया जा सकता है.......फिर यदि (तीसरी बार) दे दे तो उसे विहित (हलाल) नहीं उसे, उसके पश्चात् यहाँ तक कि वह निकाह करे दूसरे पुरुष से फिर जब वह भी तलाक दे दे तो फिर

कोई दोष नहीं।

तीसरे निकाह पर कहा है—

मुतआ क्या है? इसे हम एक जाने माने मौलाना के शब्दों में बताते हैं, "It means that a man settles it, under the name of muta, with a woman not having a husband and with whom marriage is not forbidden,according to the shariat, that he will take her for a wife for a fixed period of time and on payment of a fixed amount of money, and then during that period he can legitimately have sex with her.No qazi, witness or vakil is required for it and it needs not, also be made known nor even disclosed to a third person. It can all be done clandestine manner which (we are told) is the usual practice." Khomeini Iranian Revolution and the Shi'te faith P. 180

इसका सारांश यह है कि कुछ राशि देकर एक निश्चित समय के लिए किसी स्त्री से जिसका पति न हो सम्भोग किया जाता है। उस काल में उसे बीवी बनाया जाता है। यह सम्बन्ध गुप्त होता है। किसी तीसरे व्यक्ति को पता तक नहीं लगने दिया जाता। इसमें कोई काज़ी, कोई साक्षी व वकील नहीं होता। —'जिज्ञासु'

निकाह नहीं बन्ध सकता जब तक कि बीच में दूसरे पति से सम्भोग न हो चुके। (मूज़िहुल कुरान)।

इस हलाला पर संख्या का बन्धन नहीं जितनी बार तीसरा तलाक दिया जाएगा। उतनी ही बार पहले पति से निकाह करने के लिए **हलाला आवश्यक** होगा। यह कानून की बहुत बड़ी भूल है। इसकी दार्शनिक, तार्किक, सामाजिक परिणामों की कल्पना करके भी पाठक काँप उठेगा[१]।

---

१. कुर्आन व इस्लामी साहित्य के मर्मज्ञ विश्व प्रसिद्ध लेखक श्री अनवरशेख ने 'हलाला' पर एक लोकप्रिय पठनीय कहानी लिखकर विचारशील लोगों को झकझोर कर रख दिया है। सत्यान्वेषी पाठकों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिए। —'जिज्ञासु'

हलाल व हराम
(वैध व अवैध)

कुरान में कुछ आयतें खाने–पीने के सम्बन्ध में भी आई हैं—

इन्नमा हर्रमा अलैकुमुल मैतता व द्दमावलहमलख़ंज़ीरे व मा उहिल्लमा बिहीबिग़ैरिल्लाहे। —(सूरते बकर आयत १७३)

वास्तव में तुम्हारे ऊपर मृतक शरीर का (प्रयोग) हराम (निषिद्ध) किया गया है। सूअर का लहू व गोश्त भी (अवैध) है और वह भी (निषिद्ध है) जिस पर ख़ुदा के सिवाय कोई और (नाम) पुकारा जाए।

इस्लाम के लोग **'मैतता' का अर्थ करते हैं जो स्वयं मर जाएँ। शाब्दिक अर्थ तो यह है 'जो मर गया हो'** और उस पर अल्लाह मियाँ का नाम लेने का अर्थ है वध करते हुए अल्लाहो अकबर व बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ना। इधर दयालु व कृपालु अल्लाह का नाम लेना उधर मूक पशु के गले पर छुरी फेर देना कुछ तो वाणी और प्रसंग का सन्तुलन होना चाहिए।

सूरते मायदा में आया है—

हुर्रिमत अलैकुमुल मैतता व द्दमो वलहमुलख़ंज़ीरे व माउ-हिल्ला लिग़ैरिल्लाहो बिहिवल मन्ख़नकतो वल मौकूज़तोलम-तरद्दियतो व लन्नतेहतो व माअकलस्सबओ।

—(सूरते मायदा आयत ३)

हराम (निषिद्ध) किया गया तुम पर मुरदार (मृत शरीर) लहू और गोश्त सूअर का और जिसके (वध पर) अल्लाह के अतिरिक्त कुछ और पढ़ा जाए और जो घुटकर मर गया और जो लाठी व पत्थर की चोट से और जो गिरकर और जो सींग मारने से या जानवरों के खाए जाने से (मर गया हो)।

यदि यह ताज़ा मारे हुए मिल जाएँ तो उनमें और अपने हाथ से मारे हुए में फ़र्क क्या है? इसके अतिरिक्त कि उन पर दयालु

परमात्मा का नाम लेकर छुरी नहीं चलाई गई।

हिंसक जन्तुओं के स्वभाव से बचो!—हराम तो और भी कई चीजें हैं। जैसे मनुष्य का गोश्त हिंसक जीवों का गोश्त आदि–आदि, परन्तु उनका वर्णन कुरान में नहीं आया। हिंसक जीवों के मांस के निषेध के लिए तर्क यह दिया जाता है कि इससे खाने वाले में हिंसक जीवों के से गुण आते हैं। **नादिर बेग मिर्ज़ा ने इस पर अच्छा प्रश्न किया है कि इन दरिन्दों में यह गुण कैसे आए?** मांसाहार से ही तो! हम व्यर्थ ही में हिंसक बने भी जाते हैं और कहते भी हैं कि पशुओं के अवगुणों से बचना चाहिए अस्तु ये है बाद की व्याख्याएँ। **क्या यह ईश्वरी सन्देश की कमी नहीं है कि इसमें निषिद्ध वस्तुओं की सूची अत्यन्त अपूर्ण दी है। जिसे कुरान के पूर्ण ईश्वरीय ज्ञान होने का विश्वास हो वह क्या इन निषिद्ध वस्तुओं के अतिरिक्त और सब वस्तुएँ वैध समझे?**

रोज़ा भी खाने–पीने से सम्बन्ध रखता है इसका यहाँ वर्णन कर देना अनुचित न होगा। फ़रमाया है—

याअय्युहल्लज़ीना आमनू कुतिबा अलैकुमस्सियामो कमाकुतिबा अलल्लज़ीना मिनकल्लिकुमलअल्लाकुम तत्तकून।

—(सूरते बकर आयत १८३)

ऐ वह लोग! जो ईमान लाए हो तुम्हारे लिए रोज़ा निर्धारित किया जाता है जैसा तुमसे पहले वालों के लिए निर्धारित किया गया था। सम्भव है तुम परहेज़गार हो।

रोज़ा का एक लाभ तो शारीरिक है कि कभी–कभी पाचन यन्त्र को खाली रखने से पाचन शक्ति अपने कार्य में अधिक उपयोगी बन जाती है। इसके अतिरिक्त साधक लोग इन्द्रियों के ऊपर नियन्त्रण पाने के लिए उपवास कर लेते हैं। उपरोक्त आयत में **लअल्ला-कुमतत्तकून (अर्थात् सम्भव है तुम परहेज़गार बन जाओ)** का तात्पर्य यही मालूम होता है। यह कुरान का कोई नया आदेश न था, अपितु जैसे इस आयत में स्पष्ट वर्णन किया है इससे पूर्व के सम्प्रदायों में भी उपवास (रोज़े) का आदेश था। जैसे हिन्दू विभिन्न प्रकार के व्रत रखते थे **एक व्रत एक महीने का होता था इसका नाम चान्द्रायण व्रत था इसमें शनैः–शनैः भोजन घटाते व बढ़ाते थे।** दिन में एक

बार थोड़ा-सा खाकर शेष समय भूखे रहते थे। दूसरी जातियों ने इसमें कुछ-कुछ परिवर्तन कर लिया। परहेज़गारी के उद्देश्य के लिए वासनाओं पर अधिकार पाने के लिए दमन व संयम की शिक्षा थी अतएव मैथुन निषिद्ध था! साधना, इसके लिये उपवास और फिर मैथुन? यह तो दो सर्वथा विरोधी वृत्तियाँ हैं। खाने की भी सीमा थी कि हल्के व थोड़े आहार पर रहा जाए। पहले-पहले मुसलमानों में भी यह रिवाज था, परन्तु मुसलमानों में असंयम का जोर देखकर यह आयत उतरी थी—

उहिल्ला लकुमलैलतस्सियामेर्रससा इलानिसाउकुम हुन्ना लिबासुनलकुम व अन्तुम लिबासुनलहुन्ना। अलिमल्लहो इन्नकुम कुन्तुम तख़्तानूना अन्फ़सकुम फ़ताबा अलैकुम वअफ़ा अनकुम-फ़लअन बाशिरुहुन्नावब्तिग़ू माकतबल्लाहा लकुम व कुलू वअ-शरिबू हतायतबय्यनालकुम लूख़ैतुता अबयज़ो मिनल ख़ैतुल असवदे मिनलफ़जरे। —(सूरते बकर आयत १८४)

रोज़ा और संयम—हलाल (वैध) की गई हैं तुम्हारे लिए रोज़े की रात कि वासना करो अपनी बीवियों से। वे तुम्हारे परदा हैं और तुम उनके वास्ते हो। अल्लाह ने जाना कि तुम धोखा देते हो अपने आपको अतः उसने तुम पर दृष्टि डाली और क्षमा किया तुमको अतः अब मैथुन करो और जो चाहो खाओ पियो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए निर्धारित किया यहाँ तक कि प्रातःकाल हो जाए तुम्हारे लिए सफ़ेद धागा काले धागे से प्रातःकाल होने पर—

मूज़िहुल कुरान में लिखा है—

कुछ लोग इस बीच न रह सके (मैथुन के बिना) फिर हज़रत के पास प्रार्थना की। यह आयत उतरी।

ऐसे रोज़े से जिसमें सारी रात खाने-पीने की छूट हो और मानसिक वासनाओं पर इतना भी संयम न हो कि चलो यह एक महीना सही अकेले रहें (इससे) न कोई शारीरिक लाभ कल्पित है न आध्यात्मिक।

अल्लाहमियाँ की कसमें
(शपथें)

कुरान में कसमें खाना निषिद्ध है। अतएव कहा है—

कुलला तकसमू। —(सूरते नूर ५३)

कह कि कसमें मत खाओ।

परन्तु स्वयं परमात्मा स्थान-स्थान पर कसमें खाता चला जाता है।

त अल्लाह लकद अरसलना। —(सूरते नहल आयत ६३)

कसम है अल्लाह की भेजे हमने पैग़म्बर।

यह कौन है?—इस बात को ध्यान दें कि कसम खानी भी चाहिए कि नहीं। क्या यह वचन अल्लाह का विदित होता है? अल्लाह तो अपने आप को हम (बहुवचन) कह रहा है, परन्तु कसम खाते हुए कहता है कि अल्लाह मियाँ की कसम, स्पष्ट है कि **'हम' कोई और है और अल्लाह मियाँ कोई दूसरा[१]।**

वलकुरानुल हकीम।

कसम है कुराने हकीम की।

फ़ल अकसमो बिबाकि अन्नुजूम।

—(सूरते वाकिया आयत ७५)

बस कमस खाता हूँ गिरने वाले तारों की।

वस्समाओ ज़ातल बरुजे। —(सूरते बुरुज आयत १)

और कसम है आसमान बुरजों वाले की।

कुरान में इस प्रकार की कसमों की भरमार है। यह कसमें क्या हैं? ईंट की कसम, पत्थर की कसम, घोड़े के टापों की कसम, कुछ निरर्थक-सी बात प्रतीत होती है मगर यह है ईश्वरीय सन्देश (इल्हाम)

---

१. यह तो बड़ी सरल-सी बात है कि क्या अल्लाह ही अल्लाह की कसम खा रहा है? मुसलमान इस अंधविश्वास से भी छुटकारा नहीं पा सके। —'जिज्ञासु'

का भाग! **कोई साधारण व्यक्ति किसी बात में कसम खाए तो कहते हैं कि इसे अपने आप पर विश्वास नहीं। परन्तु अल्लामियाँ को कोई क्या कहे**? बड़े आदमियों को अदालत भी कसम से छूट दे देती है, परन्तु यहाँ तो अदालत की भी विवशता नहीं कि कानून के नियम का बन्धन हो और इस आज्ञापालन से बच न सकें। होगी कोई बात!

कहीं इस निरर्थक अनावश्यक कसमें खाने का नाम ही तो साहित्य सौष्ठव नहीं। कुरान मानने वालों का दावा है कुरान जैसा कोई साहित्य सौष्ठव पूर्ण नहीं।

माता-पिता से व्यवहार

जब कोई व्यक्ति नया मत स्वीकार करे जो उसके माँ-बाप के व्यवहार से विपरीत हो तो उसे अपने घर-बार के सम्बन्ध में अपने भावी व्यवहार के सम्बन्ध में निर्णय करना होता है। क्या अब भी वह माता-पिता की प्रसन्नता का पाबन्द है या स्वतन्त्र है कि जो चाहे वह माने और जो चाहे वह करे? शरीर की उत्पत्ति और लालन-पालन माता-पिता की कृपा से हुई है। उन्होंने पालन-पोषण व शिक्षा-दीक्षा देने के लिए असंख्य कष्ट उठाए हैं **उन्हें टका-सा उत्तर दे देना नैतिक आवश्यक नियमों के सर्वथा विरुद्ध है**। कुरान का आदेश इस बारे में बड़ा विचित्र है—

व वस्सैनाल इन्साना बिलवालिदैहै हसनन व इन जाहिदिका लितुशरिका बीमा लैसा बिही इलमुन फ़लातुतइहमा।

—(सूरते अनकबूत आयत ७)

और निर्देश किया हमने मनुष्य को अपने माता-पिता से सद्‌व्यवहार का और यदि झगड़ा करें तुझसे तू शरीक करे मेरे साथ उस वस्तु का जिसका तुझे ज्ञान नहीं तो मत कहा मान उनका।

शिरक माता-पिता के आदेश से भी न करना चाहिए। आर्यशास्त्रों में लिखा है कोई बुराई बुजुर्गों के कहने से भी नहीं करनी चाहिए। माँ-बाप की आज्ञा उसी समय तक पालनीय है जब वह शास्त्र के अनुसार हो। कुरान ने शिरक के बारे में बन्धन रहित कर दिया है। शेष बुरे कर्म व मिथ्या विश्वास की भी इसमें छुट्टी कर देते तो आदेश पूरा हो जाता और आर्ष शास्त्रों से तालमेल बैठ जाता।

एक और स्थान पर कहा है—

व साहिबहुमा फ़िद्दुनियाँ मारुफ़न।

—(सूरते लुकमान आयत १५)

और साथ दो संसार में उनका मर्यादा के अनुसार।

पूर्ववर्ती आदेश में अपूर्णता का दोष तो था ही, परन्तु मुसलमान उसका उतना भी पालन नहीं करते जितना इस आयत में कर्त्तव्य

बताया है। पिता मुशरिक (इस्लाम विरोधी) भी हो तो शिरक को छोड़कर उचित बातों में उसकी पिता भक्ति तो होनी ही चाहिए, परन्तु यहाँ उससे सर्वथा जहन्नमी मानकर सम्बन्ध विच्छेद किया जाता है। सम्भव है कि इसका कारण यह आयत हो—

या अय्युहल्ल ज़ीना आमनू ला तत्तख़िज़ू आबाउकुम व इख़वानकुम औलियाअ इनिस्तहिब्बुलकुफ़्रा अललईमान।

—(सूरते तौबा आयत २३)

ऐ लोगो! जो ईमान लाए, मत पकड़ो अपने बापों या भाईयों को अपना साथी (मित्र) यदि वे कुफ्र को ईमान पर पसन्द करें।

यह नैतिकता है क्या?—ईमान बौद्धिक प्रक्रिया है यदि इसमें माँ-बाप का विश्वास ईमानदारी पूर्वक है और सन्तान से पृथक् है तो उन्हें मित्र न रखना सामाजिक उत्तरदायित्व के आधारभूत नियमों की हत्या करना है। माँ-बाप का अनुचित आदेश न माना जाए यह बात तो समझ में आती है, परन्तु केवल इसलिए कि वह कुफ्र को सद् हृदय से इस्लाम पर विशेषता देते हैं, काफ़िर होने के लिए कहते भी नहीं। उनकी सेवा करना उनसे हृदयहीनता का व्यवहार करना अत्याचार है। यही दशा भाईयों की है। वे धर्म से मना करें तो मत मानो। धर्म की प्रेरणा दें तो मत मानो, परन्तु एक बौद्धिक विचार के मतभेद के कारण अपने रक्त को ठण्डा कर लो, उनसे आँख चुरा लो, अपना भाई न समझो, नैतिक रूप से अवश्य बन्धनकारक है।

हक प्रकाश पर एक दृष्टि

सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास के उत्तर में अब तक केवल मौलाना सन्नाउल्ला अमृतसरी ने **'हक प्रकाश' नामक** एक पुस्तक लिखी है। **मौलाना अहलेहदीस (सम्प्रदाय)** से सम्बन्ध रखते हैं। वे न तो सभी इस्लामी मतों के प्रतिनिधि हो सकते हैं न उनकी कल्पना कुरान के सम्बन्ध में किसी एक इस्लामी समुदाय द्वारा मान्यता प्राप्ति का गौरव है, **अतः आर्यसमाज ने उनकी पुस्तक से उपेक्षा बरती है तो आश्चर्य का स्थान नहीं**। फिर भी अपनी व्यक्तिगत सम्मत्ति से हज़रत मौलाना की पुस्तक एक मुसलमान के दृष्टिकोण से इस अध्याय की जैसी भी हो, जाँच है परख है।[१]

मौलाना के प्रति आदर भाव—मौलाना वृद्ध पुरुष हैं। हमने आर्य पण्डितों के साथ उनके शास्त्रार्थ सुने हैं। **और हमारे दिल में आपके लिए सम्मान का वही भाव है जो वयोवृद्ध आर्य पण्डितों के लिए है**। हम भारतीय लोक समाज की उस सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं जिसमें बड़ी आयु का नौकर भी चाचा कहलाता है। फिर मौलाना तो हमारे बड़े बूढ़ों के साथ एक ही प्लेटफार्म पर खड़े होते रहे हैं। आप हमारे वयोवृद्धों के समकक्ष दूसरे शब्दों में हमारे ही वयोवृद्ध महाशय हैं।[२]

कई बार हमें आपकी पुस्तक का उत्तर देने को कहा गया, परन्तु हमारा उत्तर सदा यही रहा कि यह काम मौलाना के समवयस्कों का था। हम नवयुवक इस श्वेत केश के विरुद्ध

---

१. आलोचना के प्रति कितनी उदार दृष्टि है।

२. जब कभी कोई आर्य विद्वान् अमृतसर किसी काम जाता था तो प्रायः मौलाना से भेंट करने पहुँच जाता। हमने अपने ग्रन्थ पं० रामचन्द्र देहलवी में श्री पं० शिवदत्त जी मौलवी फ़ाज़िल की शिष्टाचार के नाते मौलाना से एक भेंट की घटना दी है। यह आर्य शिष्टाचार का एक उदाहरण है।

—'जिज्ञासु'

कलम चलावें कुछ उपहास जनक-सी बात होगी। मौलाना ने अपनी पुस्तक की भूमिका समाप्त करते हुए लिखा है—

हक प्रकाश के उत्तर का साहस न होने का कारण क्या हो सकता है? यही कि आर्यसमाजियों का ज्ञान भी इस बात का निर्णय कर चुका है कि स्वामी दयानन्द के आक्षेप (आलोचना) नदी का बाँध बनाने से अधिक दृढ़ नहीं हो सकते?

मौलाना! हमारे मार्ग में यह कारण बाधक नहीं। हमारे मार्ग में बाधक है आपकी वृद्धावस्था। अच्छा होता यदि आपने अपनी पुस्तक में इसी सदाचार पद्धति का पालन किया होता। प्रथम पृष्ठ पर ही आपने फ़रमाया है—

''हम उनके गुरु को सम्मानपूर्वक स्मरण करेंगे, क्योंकि इस्लाम का हमको यही आदेश है।''

देखें! आप इस आदेश का पालन किस सीमा तक करते हैं। दूसरे ही पृष्ठ पर आपने हिन्दुओं से स्वामीजी की उग्रवाणी और अज्ञानता की शिकायत जोड़कर इस पर अप्रसन्नता व्यक्त की है। पृष्ठ ४ पर स्वामी दर्शनानन्द (स्वर्गीय) के सम्बन्ध में यह लिखकर कि कटुभाषी व दिल दुखाना जो बहुत आर्यों का स्वभाव है उनमें नहीं था। फ़रमाया है—''एक कदम चलकर ऐसे गिरे कि संसार छोड़ने से पूर्व इधर का रुख ही न किया।'' सच कहना यह सम्मान है? सम्भव है आदेश आपको धार्मिक गुरुओं इस प्रकार की आलोचना का सम्बोधन एक समूह है कौी व्यक्ति विशेष नहीं को सन्मान से स्मरण करने का हो। परन्तु आपकी सारी पुस्तक ऋषि दयानन्द की निन्दा करने की मुँह बोलती तस्वीर है। ऋषि दयानन्द की रचनाओं में पक्षपात व धार्मिक असहिष्णुता वाले लोगों की उचित रूप से, सामाजिक रूप से कटु आलोचना व फटकार की गई है। इस प्रकार की आलोचना से प्रत्येक बुद्धिमान सहमत होगा। परन्तु मौलाना ने स्थान-स्थान पर धाँधली से इन शब्दों का प्रयोग महर्षि के सम्मान में कर दिया है, पृष्ठ ७ पर सत्यार्थप्रकाश का निम्न उद्धरण देकर कि—

इससे बढ़कर झूठा मत और कौन हो सकता है।

कहा है—

अत: स्वामीजी महाराज और उनके चेलों के लिए इतना ही पर्याप्त है कि कुरान शरीफ़ के मानने वाले करोड़ों व्यक्ति हैं फिर जो तुम उसकी शिक्षा को झूठा और मिथ्या कहो तो तुमसे अधिक......कौन है?

मौलाना! ऋषि या उनके चेलों ने कभी कुरान की सभी शिक्षाओं को झूठा नहीं कहा। ऋषि फ़रमाते हैं—

मैं पुराण, जैनियों की पुस्तकों, बाइबिल व कुरान को पहले से ही बुरी दृष्टि से न देखकर उनके गुणों को स्वीकार व दोषों को अस्वीकार करता हूँ।

ऋषि झूठा उसे कहते हैं जो किसी मत को सर्वथा झूठा कहे। इस पर कौन **सदाशय** व्यक्ति सहमत नहीं होगा।

मौलाना की कुछ सद्वाणियाँ तो इसी उद्धरण के ढंग की हैं और कुछ उनकी व्यक्तिगत बौद्धिक खोज हैं। हम दोनों प्रकार के नमूनों को नीचे लिखे देते हैं—

समीक्षक जी! (ऋषि दयानन्द) के भोले-भाले बच्चों के से प्रश्न सुनकर अनायास '**बुत भी ख़ुदाई करते हैं कुदरत ख़ुदा की**' हँसी आती है।

अर्थात् मूर्त्तियाँ भी ईश्वरीय सत्ता का दावा करती हैं परमात्मा का विचित्र लीला है। खेद है ऐसे भोलेपन पर जो प्रतिक्षण लज्जित होने का कारण बने। —(पृष्ठ २६)

इसी उत्तर में शैतानी बातों का उत्तर मिलेगा। —(पृष्ठ २८)

यदि कुरानी और पुराणी अपने-अपने कथन से बहिश्ती हैं, आप तो दोनों के कथनानुसार दोज़ख़ी हैं। —(पृष्ठ २९)

सच्च है, कुछ लोग ऐसे ज़िद्दी होते हैं कि वह वक्ता के आशय के विरुद्ध उसके आशय के विपरीत अर्थ निकाल लेते हैं। उनकी बुद्धि अन्धकार में फँसकर नष्ट हो जाती है। —(पृष्ठ ४४)

जो वेद (या कुरान) बिना गुरु के पढ़ता है चोर है।

—(पृष्ठ ५६)

स्वामीजी को न्याय या समझदारी से कोई सम्बन्ध नहीं था।

—(पृष्ठ ५६-५७)

जिसका अनुवाद स्वामीजी ने किसी बुढ़िया से सुनकर ऐसे कर दिया। —(पृष्ठ ६६)

अपवित्र हृदय वाले अज्ञानियों को वास्तविक ज्ञान नहीं होता। —(पृष्ठ ६७)

आप बुद्धि व ईमानदारी से काम न लेते थे। —(पृष्ठ ८०)

न मुहक्क्कि बुद न दानिशमन्द,
चार पाए बरो किताबे चन्द।

—(पृष्ठ ८३)

अर्थात् न वे समालोचक थे न बुद्धिमान एक पशु के ऊपर कुछ पुस्तकें लदी हुई हैं।

पण्डित जी! (ऋषि दयानन्द) को आलोचना बढ़ाने का ऐसा शौक चढ़ा हुआ है कि एक ही आक्षेप को कई अवसरों पर करके मूर्खों में अपनी संख्या लिखाते हैं। —(पृष्ठ ८७)

नेशे अकरब न अज़ पए कींस्त, मुक्तज़ाए तबीअतशईं अस्त।[१]

—(पृष्ठ ९७)

मुशरिकों की सन्तान बल्कि स्वयं मुशरिक होकर भी शिरक से डरें। —(पृष्ठ ९६)

बड़ा ही पापी है वह व्यक्ति जिसका अपना घर शीशे का हो और दूसरों पर पत्थर बरसाए। —(पृष्ठ ९८)

स्वामीजी! आपने बड़ी गलती खाई कि मैदाने मुनाज़िरा को समाज मन्दिर समझ गए कि जिस प्रकार अनाप-शनाप समाज में कह देने पर कोई पूछ नहीं सकता इसी भाँति मुनाज़िरा में भी न होगी। मगर यह कभी न सुना था कि—

संभलकर पाँव रखना मैकदे में सरसती साहब,
यहाँ पगड़ी उछलती है इसे मैखाना कहते हैं।[२]

१. इस फ़ारसी पद्य का अर्थ है कि बिच्छू किसी द्वेष से डंक नहीं मारता प्रत्युत उसका स्वभाव ही ऐसा है। —'जिज्ञासु'

२. इस पद्य के अर्थ इस प्रकार से हैं—सरस्वती जी! (ऋषि दयानन्द) मदिरालय में सोच-समझकर पग धरना। यहाँ पगड़ी उछलती है। इसे मदिरालय बोलते हैं। —'जिज्ञासु'

इस पद्य के बाद किसी को सम्मानपूर्वक स्मरण करने के दावे का क्या अर्थ! मैख़ाना (मदिरागृह) की बोली इससे अच्छी क्या हो?

समाजियो! आओ हम तुम्हें स्वामीजी की नासमझी व मिथ्या भाषण बतला दें। —(पृष्ठ १०३)

ऐसे अपवित्र हृदय वाले अज्ञानियों को वास्तव में ज्ञान नहीं होता। —(पृष्ठ १०८)

आप मुसैलमा कज़्ज़ाब (झूठों के सरदार) से भी बढ़कर मुद्दइए नूबुव्वत होते। —(पृष्ठ ११०)

आपके भाई-बन्ध अरब के काफ़िर। —(पृष्ठ ११०)

चोर चोरी से जाए हेरा-फेरी से न जाए। —(पृष्ठ ११९)

यदि किसी मौलवी साहब के पास थोड़ी देर ठहरकर कुरान शरीफ़ पढ़ या सुन लेते तो ऐसे धक्के न खाते। —(पृष्ठ १२४)

कहिए अकल बड़ी कि भैंस? —(पृष्ठ १२६)

लुत्फ पुर लुत्फ है इमला में मेरे यार के यार,
हाए हुत्ती से गदहा लिखता है हुव्वज से हुमार[१]

—(पृष्ठ १३०)

बोलने वाले के उद्देश्य के विपरीत अर्थ लेकर अकल के पीछे लट्ठ लिए फिरते हो। —(पृष्ठ १३२)

पण्डित मिश्र मशालची सारे इक्को टिच्च।
औरों करें उजाला आप अन्धेरे विच्च॥

—(पृष्ठ १३७)

यह बच्चों की-सी बातें छोड़ दें। —(पृष्ठ १४०)

यह मुँह और मसूर की दाल। —(पृष्ठ १४०)

दिन में अन्धे को नज़र न आने से दिन का दोष सिद्ध नहीं होता। —(पृष्ठ १६३)

कहीं आप वही साधु तो नहीं जो मलाई समेत पिया करते हैं। —(पृष्ठ १६४)

१. उर्दू में किसी के अल्पज्ञान पर व्यंग्य कसने के लिए उसके अशुद्ध लेखन पर ये पंक्तियाँ चरितार्थ की जाती हैं। —'जिज्ञासु'

स्वामीजी को तो पानी बिलोने की आदत है।

—(पृष्ठ १७९)

हाय ऐसी समझ पर पत्थर जो इतना भी नहीं जानता।

—(पृष्ठ १७९)

स्वामीजी पक्षपात व हठ में आए हुए सृष्टि की व्यवस्था पर भी विचार नहीं करते। —(पृष्ठ १८३)

कैसा पापी लज्जाहीन है वह पुरुष जो हठ व स्वार्थवश प्रश्न करे। —(पृष्ठ १८५)

योगी और साधु होकर ऐसा धोखा देना व भ्रम फैलाना।

—(पृष्ठ १९२)

यह तो पागलों की बकवास के समान है। —(पृष्ठ १९९)

आप जैसे शत्रु को भी ईसाइयों की कासा लैसी के बावजूद।

—(पृष्ठ १९७)

देखो पागलाना बकवास। —(पृष्ठ २००)

पण्डितजी के इस लट्ठमार सवाल से। —(पृष्ठ २०९)

आगे अपनी तुकबन्दी मिला लें। —(पृष्ठ ११२)

सारा साधुपन गंगा में डुबोकर नंगे हो बैठें और आएँ बाएँ शाएँ मारनी प्रारम्भ कर दें। —(पृष्ठ २२२)

समाजियो! यदि आज़माना चाहो तो कपड़े का एक गोला बनाओ और लोहे की सीख में बाँधकर छत से लटकाओ और उस पर तेल डालकर आग लगा दो और सत्यार्थप्रकाश को हाथ में लिए रहो जब उसके जलने से चारों ओर ऊपर और नीचे रोशनी हो तो तुम जो कुछ उस समय हाथ में लिए हो उसमें झोंक दो। —(पृष्ठ २२४)

हिन्दू ज़ादा होकर ऐसी नफ़रत ग़नीमत है।

—(पृष्ठ २२५)

आज मालूम हुआ कि स्वामीजी अकेले में कैसी गुज़ारते थे। —(पृष्ठ २२७)

पण्डित! —(पृष्ठ २२७)

क्योंकि सत्यार्थप्रकाश के बनने से शैतान बेकार है।

—(पृष्ठ २२८)

पढ़े न लिखे नाम मुहम्मद फ़ाज़िल। —(पृष्ठ २३१)

मुहक्किक हज़ा (यह समालोचक स्वामी दयानन्द) हुक्का पीने वाला, विद्या विहीन, बड़ा पक्षपाती, असहिष्णु, विद्या से खाली, ज्ञान से दूर अन्दर से नास्तिक, प्रकट में आर्य, दूसरे मतों पर व्यर्थ आक्रमण करने वाला जबानदराज, देखने में साधु, गुप्त में कुछ और इधर-उधर की मिलाकर मूर्खों व अज्ञानिओं को फाँसने वाला। —(पृष्ठ २३६)

अर्बी की शब्दावली से सर्वथा अज्ञानी और कुरान के खण्डन का ठेका, आँखें चमगादड़ की और सूरज से लड़ाई।

—(पृष्ठ २३७)

मौलाना के हँसी उड़ाने के स्वभाव ने उन्हें ऋषि दयानन्द की हँसी उड़ाने और निन्दा करने पर ही सन्तुष्ट नहीं रखा। वेद भगवान् से भी यही व्यवहार किया है। इसीलिए पृष्ठ १७ पर एक वेद मन्त्र का अनुवाद उद्धृत करते हुए लिखते हैं?

ऐसी नाराज़गी आग़ा तलवार मियान में रखो।

जैसे यह परमात्मा से सम्बोधन है। इसी मन्त्र के नीचे इसके नीचे फिर एक मन्त्र के अनुवाद के बीच लिखा है।

हे महाराज! इतनी नारज़गी?

मैखाना में सब उचित है।

पृष्ठ १०२ पर—महाराज **खैर** तो है?

पृष्ठ १५७ पर—बड़े **नाराज** मालूम होते हैं।

पृष्ठ १७३—स्वामीजी **माराज**!

पृष्ठ २०५—सतबचन **माराज**!

पृष्ठ २१०—**फरमाते** हैं।[१]

भला किसी भाषा के शब्द बिगाड़ देने में भी कोई पड़प्पन है? और वह भी उस दशा में जब आप एक जाति के पवित्र

१. यहाँ जो पाँच शब्द इन पाँच पंक्तियों में हमने स्थूल अक्षरों में दिये हैं ये मौलाना ने बिगाड़कर ऐसे ही लिखे हैं। ऐसा क्यों? यह वही जानें।

—'जिज्ञासु'

धर्मग्रन्थ का वर्णन कर रहे हैं। या एक अत्यन्त पवित्र महापुरुष के सम्बन्ध में मुँह खोल रहे हैं। किसी कवि ने कहा है—

चिड़ाने मुँह लगे हो देते-देते गालियाँ साहब,
जबां बिगड़ी तो बिगड़ी थी खबर लीजे दिहन बिगड़ा।

पृष्ठ १८८ पर कुछ शेर लिखे हैं जो कहीं आपने बाज़ार जाते-जाते इश्कबाजों से सुन लिए हैं। इस बुढ़ापे में ऐसे शेरों का पढ़ना ग़नीमत है। खुद फ़रमाया है।

पीरे कि दमे अज़ इश्क ज़न्द बस ग़नीमतस्त।

इन उद्धरणों को पढ़ लेने के पश्चात् भी क्या किसी का मुँह है कि आर्यसमाजियों से इस पुस्तक के उत्तर की माँग करे? मौलाना की इन फुलझड़ियों का उत्तर क्या है? यही कि हमें शास्त्रों की आज्ञा है कि दूसरों के गुरुओं का नाम सम्मान से लो फिर सम्मान वैसा ही कर लो जैसा मौलाना ने किया है। सत्यार्थ प्रकाश के उद्धरणों के उत्तर कुरान शरीफ़ के उद्धरणों से हो सकते हैं ऐसे वचन कुरान शरीफ़ में बहुत हैं जिनमें ग़ैर इस्लामी सम्प्रदायों, उनके पूज्यों, उनके सिद्धान्तों, उनके पथ-प्रदर्शकों सबको अत्यन्त दिल दुखाने वाले रूप में स्मरण किया है[1] फिर इनका प्रयोग कोई किसी पर कर दे और **कविता पाठ और तेज़ वाक्यों की कमी औरों के पास भी नहीं है? कठिनाई है तो यही केवल कि**

(१) जैसे—

उफ़्फ़ेलकुम व लिमा ताबदूना मिनदूनिल्लाहे।
—(सूरते अम्बिया आयत ६७)

तुफ़ (फटकार) है तुमको और उस वस्तु को जिस वस्तु की तुम अल्लाह के अतिरिक्त पूजा करते हो।

वमा ताबदूना मिनदूनिल्लाहे हसबुन जहन्नमा। —(अम्बिया आयत ९८)
जिनकी पूजा करते हो ईश्वर के अतिरिक्त वे जहन्नम के पत्थर है।

फज्तनिवुर्रिजसा मिनलओसाने। —(अलहज आयत ३०)
अतः बचो अपवित्र मूर्त्तियों से।

फ़लानतुल्लाहे अललकाफ़िरीना। —(बकर आयत ८८)
अतः अल्लाह की क़ाफिरों पर लानत है।

दूसरे लोग शास्त्रार्थ स्थल को मदिरागृह (मैख़ाना) नहीं समझते।

हम मुसलमानों से केवल यह माँग करेंगे कि वे सभी जातियों के पूज्यों के सम्बन्ध में अपनी एक व्यवहार पद्धति बना लें। या तो सब सम्प्रदायों के संस्थापक सामान्य व्यक्ति समझे जाएँ और उनके साथ समालोचक वही व्यवहार करें जो दूसरे साधारण मनुष्यों से करते हैं या उन्हें उपहास या निन्दा से ऊपर समझा जाए, परन्तु यह याद रहे कि उपहास में विशेषता किसी बड़े की नहीं होगी। जो अधिकार हज़रत मुहम्मद साहब का होगा वही ऋषि दयानन्द का होगा। वही गुरु नानक साहब का। आलोचना सबकी होगी, परन्तु सभ्यता शिष्टाचार की सीमा में। रहा यह कि **इन बड़े लोगों ने अपने वचनों में समालोचना के सभी उपाय बर्ते हैं सो भी सारी पुस्तकों का एक-सा हाल है।**

इसीलिए कुरान के सम्बन्ध **मिर्ज़ा गुलाम अहमद** साहब अपनी पुस्तक **'अज़ालाए औहाम'** में लिखते हैं—

हालांकि दुश्नाम और सब दुश्तम (गाली गलौच) केवल उस आशय का नाम है जो घटना के विपरीत और मिथ्या भाषण के रूप में केवल दिल दुखाने के लिए प्रयोग किया जावे और यदि प्रत्येक कठोर व दुखदायी भाषण को उसकी कड़ुवाहट व कठोरता व दिल दुखाने के कारण गाली के अर्थों में प्रयोग कर सकते हैं **तो फिर स्वीकार करना पड़ेगा कि सारा कुरान शरीफ़ गालियों से भरा पड़ा है।** —(अज़ालाए औहाम)

सुरक्षात्मक सत्यार्थप्रकाश—यदि इन गालियों का उत्तर देना उचित होगा तो सब किताबों की और सभी सम्प्रदायों की ओर से। और अनुचित होगा तो सब पुस्तकों की और सभी सम्प्रदायों की ओर से। मौलाना सनाउल्ला का यह लिखना कि—"हमारा सुरक्षात्मक पक्ष है और पण्डिजी का आक्रामण" उनकी कटु वाणियों का बहाना नहीं हो सकता। यदि इस युक्ति का आश्रय लेना है तो कोई आर्यसमाजी यह भी कह सकता है कि सत्यार्थप्रकाश का पक्ष सुरक्षात्मक है और कुरान शरीफ़ का आक्रमण **क्या आपने वैदिक धर्मियों को मुशरिक नहीं कहा** और मुशरिकों को कुरान शरीफ़ में कटुवाणी नहीं सुनाई गईं?

मारना भी और रोना भी—हमें प्रसन्नता है कि हक प्रकाश का उत्तर किसी आर्यसमाजी ने नहीं लिखा, लिखता तो फिर अहले इस्लाम को शिकायत होती कि हमारे मज़हब की तौहीन हुई है। तमाशा है कि तौहीन की दावत भी स्वयं देते हैं और जब कोई स्वीकार करता है तो विरोध के स्वर भी ज़ोरों से उठाते हैं। **मारना भी और रोना भी यह कहाँ की वीरता है ?**

रही मौलाना की युक्तियाँ, **इनकी आधारशिला इस्लामी मान्यताओं की नई व्याख्या है**। हमने इस पुस्तक में प्रत्येक विषय पर विवेचना करते हुए प्रामाणिक कुरान भाष्यों के प्रमाण भी दे दिए हैं। जिससे अहले इस्लाम के सिद्धान्तों के बारे में सन्देह न रहे। मौलाना इन मान्यताओं को छोड़ बैठे हैं। ऋषि दयानन्द का सम्बोधन मौलाना से नहीं था। उन अहले इस्लाम से था जो कुरान के भाष्यों व **हदीस की रवायातों को मानते** थे इसलिए ऋषि के आक्षेपों का उत्तर इस्लाम के मान्य सिद्धान्तों के प्रकाश में होना चाहिए था। न कि उन शंकाओं के अनुसार नए सिद्धान्त बनाकर उन नई इस्लामी मान्यताओं की आड़ में, दबे शब्दों में मौलाना ने पुराने अनुवादों व कुरान के विरुद्ध मतभेद भी प्रकट किया है **चुनांचे शाह रफ़ीउद्दीन के अनुवाद के बारे में लिखा है—**

बवजह मुग़ायरते उर्दू व अरबी मुहाविरा के वाज़ह मतलब खेज़ नहीं। अर्थात् पुराने अर्बी व उर्दू के वाक्य प्रयोगों में अन्तर हो जाने से आशय स्पष्ट नहीं हो सका।

एक और स्थान पर फ़रमाया है—

हाँ यह बात वर्णनीय है कि स्वामीजी द्वारा उद्धृत अनुवाद यद्यपि अनुवादित कुरान में है परन्तु ज़रा-सी व्याख्या व सुधार वाँछनीय है। —(पृष्ठ २२३)

'ज़रा-सी' और स्पष्टीकरण या सुधार योग्य मौलाना की अपनी परिभाषाएँ व योजनाएँ हैं। गलत हों तो यह भाषा शास्त्रियों और उनकी समस्या है।

ऊँटनी का पत्थर से निकलना जिन लोगों ने कहा है यह उनकी सम्मति है। कुरान इसका उत्तरदायी नहीं। —(पृष्ठ १७२)

ऊँटनी माता के पेट से होती तो—हज़रत यदि ऊँटनी पत्थर

की बजाय अपनी माता के पेट से निकली होती तो इलाही आयतों में इस की विशेष गणना क्यों कर होती ? एक और स्थान पर फ़रमाते हैं—

संक्षेप यह कि कुरान शरीफ़ के मूल शब्दों और उनके अनुवाद पर कोई शंका नहीं हो सकती जो होती है वह और बातों पर होती है। —(पृष्ठ ८५)

आयतों की तफ़सीर मौलाना को स्वीकार नहीं—'यह परिभाषा योग्य' 'अनुवाद' और 'लोगों की राय' और 'अलग बातें'। सिवाय कुरान के परम्परागत अर्थों के और कुछ नहीं। **आपने इन्हें स्वीकार करने का सौभाग्य प्रदान नहीं किया।**

आधारशिला खिसका दी—क्या यह ऋषि दयानन्द का लोहा मानना नहीं ? कह दीजिए कि ऋषि की शंका मेरे लिए आधार रहित है, क्योंकि अब आपने अपने व्यक्तिगत इस्लाम के नीचे से उसकी आधारशिला खिसका दी। उस इस्लाम से ही मुँह फेर लिया जो आक्षेप योग्य था, परन्तु यह तो स्वीकार कीजिए कि ऋषि का वार था ज़ोरदार व सच्चा कि उसने आपकी मान्यता का सम्पूर्ण भवन गिरा दिया, आप प्रामाणिक भाष्यकारों से पृथक् जाकर खड़े हो जाइए और अब भी कितने मुसलमान हैं जो आपकी सुनते हैं ?

हाँ यह और बात है कि आप इस नई मान्यता को रचने में अपने आगे पीछे के वचनों में पूरा सन्तुलन नहीं बना सके और कई स्थानों पर विरोधाभास के उत्पत्तिकर्त्ता हुए अतएव सांसारिक कष्टों के सम्बन्ध में एक स्थान पर तो फ़रमाया है—

''जो कुछ पीड़ा तुमको पहुँचती है तुम्हारे कर्मों का फल है।'' —(पृष्ठ २१)

परन्तु एक और स्थान पर लिखते हैं।

नि:सन्देह परमात्मा अपनी इच्छा से......जिसे चाहे धनवान करे और जिसको चाहे निर्धन करे अत्याचार तो तब हो, किसी का उस पर अधिकार हो और न दे, जब कोई अधिकार नहीं तो फिर जिस दशा में अपनी कार्यकुशलता से अपेक्षा रखे इसी में उसका न्याय और इसी में दयालुता है। —(पृष्ठ १२६)

भला यह दोनों वचन एक साथ कैसे ठीक हो सकते हैं ? संकट

कर्मों का फल है तो कर्म उससे पूर्व होने चाहिए **और कुछ संकट ऐसे हैं जो जन्म के साथ ही उतर आते हैं वे किस कर्म के फल हैं?** पुनर्जन्म आप मानते नहीं फिर किस कर्म के फल हैं? चलो माना किसी कर्म के फल होंगे यदि प्रत्येक संकट कर्म का फल है तो फिर गरीबी अमीरी में **मशीयत (बिना अधिकार के योजना!) को व्यर्थ ही हस्तक्षेप क्यों देते हैं**। लीजिए हज़रत आप तो अपने प्रथम वचन के सर्वथा विपरीत कहने लग पड़े। लिखा है—

सांसारिक दुःख व सुख किसी अच्छे या बुरे काम के बदले में नहीं। नेकी व बदी का वास्तविक फल परलोक के जीवन पर है। —(पृष्ठ ७५)

तो जनाब! प्रत्येक संकट कर्मों का फल कैसे हुआ? जो यहाँ बिना कर्मों के संकट प्रदान करता है क्या भरोसा कि परलोक में भी उसका यह स्वभाव उसके ऊपर अधिकार न बना लेगा? वह वादा है, यह **नकद आश्वासन।**

मशीयत (ईश्वरेच्छा) की परिभाषा हज़रत मौलाना ने ऊपर कर ही दी है। लीजिए। इस पर कहा गया है—

''जो कुछ संसार में होता है। ख़ुदा की इच्छा से होता है। मशीयत उसके कानून का नाम है। कभी-कभी शाही कानूनों पर कार्य करने से यथेष्ट फल प्राप्त नहीं होता है। हिन्दुस्तान में स्वराज्य का आन्दोलन सरकारी कानून के अधीन और अनुकूल है, परन्तु क्या सरकार प्रसन्न भी है?'' —(पृष्ठ ७९)

ईश्वरीय नियमों का उल्लंघन श्रेयस्कर भी ?—''कभी कभी शाही कानून को पालने से प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती,'' शाही कानून से तात्पर्य यहाँ ख़ुदाई कानून हैं। **ख़ुदाई कानून पालन करने से प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती? यह नई बात सुनी है यह परम्परागत इस्लाम की बात नहीं। तो हज़रत को प्रसन्नता किससे होती है? नियमों को तोड़ने से**? स्वराज्य के आन्दोलन का उदाहरण भी क्या विचित्र दिया। जनाब यह आन्दोलन वैधानिक है। यदि यह आन्दोलन नियमपूर्वक चलाया जाए तो सरकारी घोषणाओं के अनुसार उसकी वास्तविक प्रसन्नता इसी में है कि भारत को स्वराज्य मिले। १९१९ की सरकारी घोषणा का निरीक्षण कीजिए। सरकार की प्रसन्नता

भारतीयों के स्वतन्त्र होने में है। हाँ कुछ राज्याधिकारी भारत वासियों को स्वावलम्बी देखना सहन नहीं कर सकते। क्या अल्लामियाँ के कानूनी **कायदे आपके विश्वास के अनुसार केवल दिखावे की घोषणाएँ हैं?** और ख़ुदा की प्रसन्नता किसी और बात में है? किसी कानून के विशेषज्ञ से पूछिए। कानून पर कार्यान्वियन होने से शासक नाराज होता है या होना चाहिए? सर्वथा नई खोज है। मौलाना की **आविष्कारक बुद्धि** की सराहना करने को जी चाहता है—

(ख़ैरूल माकिरीन) की व्याख्या की है—

ख़ैरूलमाकिरीन ग्लैडस्टोन व मुस्तफ़ा कमाल पाशा जैसे योग्य राजनीतिज्ञों (अयआन) को कहा जाता है न कि हर ऐरे ग़ैरे को। —(पृष्ठ ९३)

मौलाना को इन ''राजनीतिज्ञों'' के जीवन चरित्रों का क्या पता? राजनीतिज्ञ धोखेबाज़ी के रूप होते हैं। यदि ख़ुदा ताला भी बड़े स्तर पर ग्लैडस्टोन व मुस्तफ़ा कमाल है तो वास्तव में **ख़ैरुल माकिरीन (धोखेबाज़ों में उच्च स्तर के) हैं।**

''**कुन फ़यकुन**'' की व्याख्या की है।

''देखने में तो बच्चे के प्रसव काल में ९ मास लग जाते हैं, परन्तु वास्तव में उसकी असंख्य अवस्थाएँ होती हैं कि प्रतिक्षण परिवर्तित होती रहती हैं। और प्रत्येक क्षण ख़ुदा अपने कानून से हो जा कहता है।''[1]

दूसरे शब्दों में 'कुन' सृष्टि के आरम्भ में नहीं कहा गया, अपितु हर क्षण कहा जाता है। अब यह प्रतिक्षण की उत्पत्ति तो अभाव से नहीं **विद्यमान कारण को ही कार्य रूप देना है तो क्या प्रारम्भिक रचना भी ऐसी ही थी?**

हज़रत मौलाना ने अभाव से भाव सृष्टि की उत्पत्ति पर कुछ पृष्ठ खर्च किए हैं, परन्तु यह एक सुदीर्घ विषय है। मौलाना के युक्ति प्रयोग का निष्कर्ष यह है कि ''प्रकृति बिना किसी न किसी रूप के हो नहीं सकती'' प्रतीत यह होता है कि मौलाना प्रकृति और प्राकृतिक

---

१. प्रचलित इस्लाम की 'कुन' फ़िलास़फ़ी की यह तो सर्वथा नई व्याख्या है कि अल्लाह का ''कुन'' प्रतिक्षण होता है। एकदम हो जा कहने से सृष्टि नहीं रची गई। —'जिज्ञासु'

वस्तुओं में अन्तर नहीं कर पाए। रूप निर्मित वस्तु का होता है, अकेले परमाणु का नहीं। हम इस विषय पर पृथक् पुस्तक **जवाहिरे जावेद**[१] लिख चुके हैं। पाठक वहाँ देख लें।

ऋषि दयानन्द का प्रश्न है ख़ुदा ने शैतान क्यों उत्पन्न किया? मौलाना कहते हैं—''जैनियों को क्यों उत्पन्न किया?'' आर्यसमाज के सिद्धान्त के अनुसार जैनी हो या श्रीमान जी, **सभी आत्माएँ नित्य हैं। इनको अभाव से भाव में नहीं लाया गया? क्या आपके मत में शैतान की भी यही दशा है?**

ऋषि दयानन्द के यह पूछने पर कि हूरें इस समय क्या काम करती हैं? आप फ़रमाते हैं, कुरान की किसी आयत से दिखाइए कि वे अभी से उत्पन्न भी हो चुकी हैं। —(पृष्ठ ३१)

परन्तु जब फिर प्रश्न किया गया कि क्या पवित्र व अपवित्र लोग कयामत तक चक्र में फँसे रहेंगे। तो कुरान के प्रमाण से लिखते हैं—

कीला अदख़लल जन्नता कालाया लेता कौमीयअलिमूना बिमाग़फ़राली रब्बी व जअलनी मिनलमुकर्रिमीन।

एक नेक आदमी मुशरिको को समझाता था। उन्होंने उसको मार दिया। ख़ुदा फ़रमाता है कि उसे कहा गया कि जन्नत में दाख़िल हो जा। उसने दाखिल होकर कहा कि काश कि मेरी कौम के लोग जानें कि किस प्रकार ख़ुदा ने मुझे बख़्शा और इज़्ज़त दी।

—(पृष्ठ ४०)

जन्नत में हूरे नहीं क्या?—चक्र में रहने से बचाने के लिए एक व्यक्ति को आपने जन्नत में दाख़िल भी फ़रमा दिया है तो ज़रा यह भी फ़रमा देते कि वह जन्नत बिना हूरों के है? जन्नत है मगर है बिना सामान के? यदि सब सामान विद्यमान है तो हूरें भी विद्यमान हैं। अपने दोनों कथनों का ज़रा सन्तुलन तो कीजिए।

शफ़ाअत (सिफ़ारिश) की समस्या पर फ़रमाते हैं—

काफ़िरों को मुक्ति दिलवा दी—कुरान और नबियों के सरदार मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लेल्ला अलैहे व सल्लम की सिफ़ारिश भी क्या

१. यह पण्डित चमूपति जी की एक अत्युत्तम व अद्वितीय दार्शनिक पुस्तक है। —'जिज्ञासु'

कम है कि उनके माध्यम से बहुत से काफ़िर लोग, जो अपवित्र थे मुक्ति का मार्ग पा गए। —(पृष्ठ ६९)

क्यों? मुसलमानों यही सिफ़ारिश है? यही है तो काफ़िरों को भी सिफ़ारिश का अधिकार हो गया या नहीं? ऋषि दयानन्द के इस आक्षेप पर कि बहिश्त मानसिक चेतना का स्थान है और वहाँ सभी शरीरिक विलासिताएँ उपलब्ध हैं तो वहाँ मूत्र, पाख़ाना होने से भंगी आदि की आवश्यकता भी होगी। मौलाना को व्यंग सूझा है, लिखते हैं—

काफ़िरों से ही ख़ुदा यह काम ले ले तो कोई हानि की बात नहीं उन्हीं को इस बेगार में फँसाएँ। —(पृष्ठ २१६)

जन्नत में बेगार!—उनकी बला से ख़ुदा बेगार की परम्परा भी जन्नत में रखे और फिर यह दावा भी है कि वहाँ कोई कष्ट नहीं।[१] हज़रत यह भी तो लिख दिया होता कि यह बेगार में फँसे हुए काफ़िर अपनी दोज़ख़ की आग, थूहड़, गर्म पानी व काँटेदार झाड़ियाँ साथ लाएँगे या बहिश्त की बेगार की बदौलत इस बला से छुट्टी रहेगी? **जेलख़ाने के ख़लासियों वाली बात है।**

हूरों के बारे में लिखते हैं—

जो कई स्त्रियों से मैथुन करने की शक्ति न रखता होगा उसको कई औरतें नहीं मिलेंगी। अपितु यदि किसी को एक स्त्री से भी (आपके समान) कष्ट पहुँचेगा तो एक भी न मिलेगी।

—(पृष्ठ १९७-१९८)

बहिश्त में संयम की अनुमति—अर्थात् वहाँ संयम दमन भी सम्भव होगा। इतना ही ग़नीमत है कोई ब्रह्मचारी भी रह सकता है और मुस्लिम औरतों की प्रसन्नता का साधन क्या होगा? वे भी क्या ब्रह्मचारिणी रह सकती हैं?

जन्नत की शराब को दुनियाँ का मीठा और स्वादिष्ट दूध समझना चाहिए। —(पृष्ठ २०१)

१. बहिश्त का स्वरूप इस्लाम में यही बताया जाता है कि वहाँ कोई काम नहीं होगा। विस्तार के लिए देखें हमारा ग्रन्थ 'कुरान सत्यार्थप्रकाश के आलोक में'। —'जिज्ञासु'

दूध को शराब क्यों कहा गया ?—तो इसको दूध की शराब कहने की क्या आवश्यकता थी ? दूध को दूध नहीं कहा जा सकता था ? या अरबी भाषा इस पवित्रता से वञ्चित है ?

ग़िलमान (सुन्दर लड़कों) के सम्बन्ध में मौलाना की नई कल्पना सुनना—

यह बच्चे स्वयं इन्हीं जन्नतियों की अल्प वयस्क सन्तान होंगी। —(पृष्ठ २२७)

बहिश्ती बच्चों से बेगार!—परन्तु इनके सुपुर्द सेवा तो है प्याले लिए फिरना। अपने पुत्रों से यही काम लिया जाता है ? जन्नत के शिष्टाचार में यह भी मान लो। **उनके जन्म लेने तक यह सेवा कौन करेगा** ? या यह सन्तान क्रम-क्रम से उत्पन्न होती रहेगी ? तो वे फिर जवान होंगे या नहीं ? उनका लालन-पालन, उनकी शादी, उनकी और आवश्यकताएँ, माता-पिता पर भार तो न होंगी ? फिर उनकी सन्तानें होंगी या नहीं ? जन्नत में प्रसव पीड़ा, गर्भाधान की अवधि आदि-आदि के क्या नियम हैं ? क्या बहिश्ती भी बूढ़े होंगे ? यह सन्तानोत्पत्ति और खा-पीकर बेगार की आवश्यकता का अनुभव करना तो बताता है कि वहाँ का जीवन तो यहाँ का-सा जीवन है जिसमें पतन भी आवश्यक है। मौलवी साहब समझ लें—नहीं।

कुरान के उतारे (नाज़िल) जाने पर फ़रमाया है—

चूँकि सर्वप्रथम इसके सम्बोधित अरब लोग थे इसलिए इसलिए उस भाषा में उतरा, उन्होंने इसको समझकर दूसरे लोगों को समझा दिया यही सच्चा न्याय है। —(पृष्ठ २४)

परन्तु फिर कहा है—

ईश्वर की वाणी नित्य—कुरान मजीद ख़ुदा की **नित्य वाणी** का नाम है जैसा आप वेद के बारे में कहते हैं। —(पृष्ठ २३१)

नित्य पुस्तक के सम्बोधित लोग सर्वप्रथम अरब क्यों हुए ? इधर तो दावा यह कि कुरान जैसी और पुस्तक नहीं। इधर अरबवासियों के अतिरिक्त अन्य सब जातियों के लिए इल्हाम तक पहुँच ही माध्यम के द्वारा कर दी है **कि अरबवासी उन्हें समझा दें।** आख़िर यह समझाना अनुवादों के द्वारा ही होगा। अब या तो अनुवादों को कुरान के बराबर मानो या संसार के अन्य वासियों को भी मूल कुरान

से वंचित न करो। वास्तविक (ऐन) न्याय तो यह होगा जो आप फ़रमाते हैं, यह (ग़ैन) अवास्तविक न्याय है।[1]

मौलाना की युक्तियों के कुछ ही नमूने निवेदन किए हैं। अधिक उनकी पुस्तक में देखे जा सकते हैं। उनकी प्रत्येक युक्ति का निराकरण इस पुस्तक में हो गया है। पाठक ध्यानपूर्वक पढ़ें तो हक प्रकाश की प्रत्येक युक्ति का (जहाँ तक वह युक्तियाँ युक्तियाँ थीं) उत्तर इसमें मिलेगा।

यह मदिरालय का शिष्टाचार—मौलाना की पुस्तक का खण्डन इसलिए भी उचित नहीं समझा कि मौलाना की लेखनी में **मदिरागृह का शिष्टाचार बरता गया है** और हमारा लक्ष्य दार्शनिक विवाद में ही रहने का है। चलते-चलते एक दो बातें और भी सुन जाइए।

गोश्तख़ोरी का औचित्य युक्तियों से सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। बात सूअर की भी स्वयं चला दी है। फ़रमाया है व सर्वथा मौलवियाना रूप में फ़रमाया है—

सूअर का मांस गर्म देशों में—ऐसा ही सूअर भी अस्वास्थ्यकर है विशेषतया गरम देशों में। यह गर्म देशों की बात आश्चर्यजनक है। जब वह अस्वास्थ्यकर गर्म देशों में है **तो निषिद्ध भी गर्म देशों में होगा ?**

मौलाना से किस ने निवेदन किया था कि इस्लाम को युक्तियुक्त सिद्ध करें ? हज़रत ने पहले तो युक्तियुक्त के बहाने इस्लाम का रूप, रंग ही बदल डाला। लीजिए अब लगे हाथ कहते हैं इसका नाम कुफ्र रख लो तो हरज नहीं। लिखा है—

शेष रहा अन्य जातियों का हमें काफ़िर कहना। हम इससे असंतुष्ट नहीं काफ़िर के अर्थ अविश्वासी के हैं।

इस पर कुरान की आयत भी लिख दी—

कुफ़रना बिकुम।

हम तुम्हारे दीन को स्वीकार नहीं करते हैं।

---

१. अरबी भाषा में एक शब्द है ऐन और एक है ग़ैन। पहले का अर्थ है स्पष्ट, वास्तविक जो एकदम दिखाई दे। दूसरे का अर्थ इससे उलट समझें। वैसे इसका अर्थ आकाश में छाई घटा और अंधेरा हैं। पण्डित जी ने इनका अद्‌भुत ढंग से प्रयोग किया है। —'जिज्ञासु'

मौलाना! कुफ्र मुबारिक हो, सत्यार्थप्रकाश का जादू है कि काफ़िर कहलाने से असंतुष्ट नहीं हो। कुछ समय और बीतने दो इस उच्चकोटि की पदवी से प्रसन्न हुआ करोगे।

यह तो हुई हज़रत मौलाना की अपने मत से जानकारी या उसकी दशा पर अकारण मालामाल होने की खुशी, कहीं-कहीं मौलाना ने प्रतिवादी उत्तर भी दिये हैं। प्रतिवादी उत्तर तो वह दे जो विरोधी की मान्यताओं का जानकार भी हो। मौलाना पुराने शास्त्रार्थकर्त्ता हैं, परन्तु आर्य धर्म से जनाब कितने परिचित हैं, एक दो उद्धरणों से प्रकट हो जाएगा। ऋषि ने फ़रिश्तों का अस्तित्व मानने पर शंका की है। जनाब ने उत्तर में अथर्ववेद के दो मन्त्र प्रस्तुत किए हैं, एक में कहा है—

परमात्मा के प्रकृति के उस कोष को कौन जान सकता है? जिसकी रक्षा देवता करते हैं।

हज़रत! देवता के अर्थ है **विद्वान्**। **प्रमाण सत्यार्थप्रकाश में देख लीजिए या शतपथ ब्राह्मण में।**

(२) तैंतीस देवता उस परमात्मा के बाँटे गए कर्त्तव्यों का पालन कर रहे हैं।

सत्यार्थप्रकाश के सातवें समुल्लास के दूसरे पृष्ठ पर आपको यह वर्णन मिलेगा।

तैंतीस प्रकार के देवता हैं, अर्थात् भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा, सूरज और नक्षत्र निवास स्थान होने से यह संसार को ठहराये हैं, अतः वसु कहलाते हैं। **प्राण, अपान, व्यान, समान, नाग, कूर्म्म, कृकल, दैवदत, धनंजय** यह दस प्रकार के **सांस** और **जीव इन ग्यारह का नाम** और.....**वर्ष के बारह महीने**......**आदित्य कहलाते हैं**। इसमें शतपथ ब्राह्मण का प्रमाण भी दिया है। क्या आपके यही तैंतीस फ़रिश्ते हैं?

वेद व मनुस्मृति के रंग में रंगे—इस साधारण-सी बात से अनभिज्ञ होने से तो ज्ञात होता है कि मौलाना शास्त्रार्थ क्षेत्र के नाम से ही परिचित हैं। उसके ऊँच-नीच को नहीं जानते। आपने जिहाद की व्याख्या करते हुए वेद और मनुस्मृति के प्रमाण भी दे दिए हैं कि जैसे वहाँ युद्ध विद्या व राज्य व्यवस्था की शिक्षा दी है वैसे ही कुरान

में भी लड़ने का आदेश है। **हज़रत! वहाँ तो आत्मरक्षा उदिष्ट है। मौलाना फ़रमाते हैं कुरान में भी यही बात है। इसका प्रमाण?** कहते हैं मनु। जनाब किसी इस्लामी पुस्तक का नाम लेते, कुरान तफ़सीरे हदीस फ़िका सब मौजूद था। परन्तु वहाँ बात मिले तब न। दिल से वेद और मनु के अनुयायी हो चुके हैं! अब कुरान को उसी रंग में प्रस्तुत करते हैं। **भाई अपनी-अपनी चाल है, एक प्रकार का जानवर दूसरे प्रकार के जानवर की चाल पकड़े तो उपहास ही होता है**। हमने इस विषय के लिए एक अध्याय पृथक् नियत किया है। अतः यहाँ विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं।

संक्षेप में मौलाना के युक्ति प्रयोग को क्या कहें। इस्लाम का उन्होंने रूप ही बदल दिया। वैदिक धर्म पर भोलेपन में वह हाथ चला दिया कि वैदिक धर्मी पढ़ें और हँसें, परन्तु साथ ही कह दिया यह मदिरागृह है। तब तो हज़रत! सब ठीक ही है।

सत्यार्थप्रकाश के प्रमाणों की चमत्कारिक शुद्धता

निम्न अध्याय में हम सत्यार्थप्रकाश के उन कुरानी प्रमाणों पर विचार करेंगे जिनमें मौलाना सनाउल्ला साहब के विचार में ऋषि दयानन्द ने कुरान का प्रमाण देते हुए (ईजाद हुन्दा) आविष्कारक के रूप में काम लिया है। मौलाना को इतने बड़े महात्मा पर जिसकी **आध्यात्मिक महानता सर सैयद अहमद के निकट इस योग्य थी कि उस पर ईश्वरीय सन्देश उतरे**, यह आक्षेप लगाने से पूर्व उन मतभेदों का अनुमान लगाना चाहिए था जो आपकी सम्मति में ऋषि के दिए हुए अनुवाद और कुरान के ठीक अर्थों में हैं फिर उन परिस्थितियों पर विचार करके जिनमें वह अनुवाद किया गया था, अपने इन शब्दों पर विचार कर लेना चाहिए था जो आपने ऋषि की शान में प्रयोग किए हैं। किसी की नियत पर सन्देह करना अत्यन्त घृणित पाप है फिर ऐसे व्यक्ति की नियत (सद्भावना) पर जिसने किसी धर्म को पहले से ही बुरी दृष्टि से न देखकर उसकी अच्छाइयों को स्वीकार व दोषों को छोड़ देने के दृढ़ निश्चय से संसार के मतों की आलोचना का बीड़ा उठाया है और जैसे आप इस अध्याय में देखेंगे कि अपने शुद्ध हृदय के कारण वह उसमें सफल हुआ है।

ऋषि दयानन्द अरबी नहीं जानते थे, उर्दू लेखन पद्धति से भी परिचित न थे, उन्होंने अपने सत्यार्थप्रकाश में वर्णित व आपके गौरवशाली ग्रन्थ हक प्रकाश के अनुसार **एक मौलवी साहब (शाह रफ़ीउद्दीन) के कुरान के अनुवाद का आर्यभाषा में अनुवाद कराया**। ऋषि ने उसे पढ़ा और **मौलवी साहबान से उसकी शुद्धता कराई**, मौलवी हिन्दी वर्णमाला के लेखन से अपरिचित होते हैं उन्हें वह अनुवाद सुनाया गया होगा। हम यह देखकर आश्चर्य चकित हैं कि ऋषि दयानन्द का आर्यभाषा के सत्यार्थप्रकाश में उद्धृत कुरान अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन के अनुवाद के अधिक अनुकूल है[१]। **अपेक्षाकृत**

१. इस विषय में हमने परोपकारी में कुछ पठनीय खोजपूर्ण लेख दिये थे। —'जिज्ञासु'

उर्दू सत्यार्थप्रकाश में लिखवाए उस आर्यभाषा के उर्दू अनुवाद के। आपने शाह रफ़ीउद्दीन साहब के अनुवाद के बारे में लिखा है कि 'स्पष्ट अर्थ नहीं निकलते'। उचित यह था कि सभी आयतों का वह अनुवाद लिखते जाते ताकि पाठकों को आपका भाव समझकर आपसे सहमति हो जाती। एक दो स्थानों के अतिरिक्त आपने इस अनुवाद की शुद्धता की आवश्यकता नहीं समझी जिससे स्पष्ट है कि सामान्यतया आप इस अनुवाद से सहमत हैं[१]। इस अनुवाद को दोनों भाषाओं के जानकार किसी व्यक्ति ने नागरी अक्षरों में बदला होगा। क्या आपको इस सम्भावना का अनुमान है या नहीं कि शाह रफ़ीउद्दीन के अस्पष्ट अर्थ प्रकट करने वाले अनुवाद को आर्यभाषा में रूपान्तरित करते हुए अनुवादक से कहीं भूल भी हो सकती है ? मौलवी साहबान के लिए इसका संशोधन केवल सुनकर करना सम्भव था और चूँकि उन्हें इन 'अस्पष्ट' और 'अर्थ न बताने वाले' अनुवादों का अभ्यास होता है जिनकी आधारशिला अर्बी भाषा का हिन्दुस्तानी भाषाओं के विद्वानों के लिए अनभ्यास व अपरिचित मुहाविरा है। सम्भव है उन्होंने इसे अधिक स्पष्ट या अधिक सार्थक बनाने की आवश्यकता न समझी हो। **आपने भी तो एक दो स्थानों पर ही इस आवश्यकता को अनुभव किया है**। और वह उस समय जब समीक्षकों की शंकाएँ आपके सामने आ चुकी हैं।

ऋषि दयानन्द ने वह अनुवाद पढ़ा और इस्लामी मान्यताओं की आलोचना की, ऋषि का लेख पढ़कर यह विश्वास हुए बिना नहीं रह सकता कि या तो **इस संशोधन के मध्य में या उससे पृथक् किसी और समय में ऋषि ने कुरान के भाष्य भी सुने हैं, क्योंकि ऋषि की शंकाएँ ऐसी हैं जो कुरान पद पाठ पद्धति तक ही नहीं अपितु उनके अर्थों की गहराई तक हैं जिनका उद्घाटन तफ़सीरों में वर्णित अर्थों के साथ-साथ पढ़ने से ही होता है, पहुँचते हैं।**

इन परिस्थितियों में लिखाई गई आलोचना पर केवल शाब्दिक विचार नहीं करना चाहिए, अपितु देखना यह चाहिए कि यदि उद्धरण में लिखे गए शब्द बदल भी दिए जाएँ तो क्या शंका टिक सकती है

१. इस अनुवाद को आज भी मुसलमान विद्वान् एक उत्तम व प्रामाणिक अनुवाद मानते हैं। —'जिज्ञासु'

या नहीं? हमने आपकी पुस्तक में सत्यार्थप्रकाश के स्थान-स्थान पर उद्धरण देखे हैं, आपने यह प्रमाण उर्दू सत्यार्थप्रकाश से लिए हैं। आपके लिए न अनुवाद की कठिनाई है न मौलवियों के द्वारा संशोधन या स्पष्टीकरण की आवश्यकता है, परन्तु तनिक विचार तो कीजिए आपने इन उद्धरणों में क्या-क्या काट-छाँट से काम नहीं लिया? नमूना के लिए एक दो उदाहरण पर्याप्त होंगे।

आपकी पुस्तक के मुख पृष्ठ पर लिखा है—

''सत्यार्थप्रकाश मुतल्लिका कुरान शरीफ़ का माकूल व मकबूल जवाब।''

आपने इस पुस्तक में सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें सम्मुल्लास को वाक्य-वाक्य उद्धृत किया है फिर खोजी बनकर उत्तर दिया है, इन सभी वाक्यों से पहले दो पृष्ठ की सन्दर्भित प्रस्तावना है। इसे आप एक सिरे से दूसरे सिरे तक छोड़ गए हैं। इसका कारण? क्या वह आलोच्य विषय नहीं? **पुस्तक का उद्देश्य उसकी प्रस्तावना में वर्णित होता है**। क्या आपने पाठकों से यह न्याय किया है कि जिस पुस्तक का आप उत्तर लिखने बैठे हैं उसके लेखक के उद्देश्य से ही उन्हें अपरिचित रखा है? फिर इस बात की चर्चा तक नहीं की कि कोई भूमिका है जो हम किसी अवर्णनीय उद्देश्य से नहीं प्रकाशित कर रहे? ऋषि की पुस्तक में आप कहीं इतनी लम्बी भूल दिखा सकते हैं? यह तो हुआ आपके उत्तर का प्रारम्भ अब आगे देखिए—

(१) पृष्ठ ७४ पर आपने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका से निम्नलिखित उद्धरण दिया है—

हठधर्मी की बुद्धि अन्धकार में फँसकर नष्ट हो जाती है। सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में यह वाक्य ज्यों का त्यों दिखा दें तो **मनमाना पुरस्कार प्राप्त करें**।

सम्भवतया यही प्रमाण आपने पृष्ठ ७७ पर दिया है वह इस प्रकार है—बहुत से ऐसे हठी और दुराग्रही होते हैं कि वह वक्ता के आशय के विरुद्ध व्याख्या कर लेते हैं, विशेषतया मतों वाले लोग, क्योंकि मतों के दिली पक्षपात से उनकी बुद्धि अन्धकार में फँसकर नष्ट हो जाती है।

पृष्ठ ७८ पर फिर यही प्रमाण ऐसे लिखा गया है—

बाज़ ज़िद्दी लोग ख़िलाफ मन्शाए मुतकल्लिम के तावील करते हैं।

क्या बहुत से व बाज समानार्थक हैं? और बहुत से ऐसे...... ख़ातिर से उन.....का कायम मुकाम.....हठधर्मी है?

मौलाना इन उद्धरणों को पढ़ जाइए और निर्णय आप पर रहा कि क्या यह उद्धरण शब्दश: व अर्थपूर्वक ठीक हैं? फिर उसी कसौटी पर ऋषि दयानन्द के उद्धरणों को रखिए और प्रशंसा कीजिए कि ऋषि ने कितने शुद्ध उद्धरण प्रस्तुत किए हैं!

पृष्ठ ७० पर सत्यार्थप्रकाश का निम्नलिखित उद्धरण लिखा है—

जिस प्रकार जीव स्वतन्त्रता से काम करता है उसी प्रकार सर्वज्ञ होने से ईश्वर जानता है (और जैसे ईश्वर जानता है) उसी प्रकार जीव काम करता है, अर्थात् ईश्वर भूत-भविष्य-वर्तमान के ज्ञान में और फल देने में स्वतन्त्र है और जीव कुछ मात्रा में वर्तमान के ज्ञान में और काम करने में स्वतन्त्र है। ईश्वर का ज्ञान नित्य होने के कारण कर्म के ज्ञान की भाँति दण्ड देने का ज्ञान भी पूर्व से[१] है। उसके ये[२] दोनों ज्ञान सच्चे हैं। क्या कर्म का ज्ञान सच्चा और दण्ड का ज्ञान कभी असत्य हो सकता है? अत: इसमें कोई दोष नहीं।

उक्त उद्धरण की पहली पंक्ति में जो वाक्य हमने कोष्ठबद्ध किया है वह आपकी पुस्तक के न पाँचवें संस्करण में है न छठे संस्करण में इससे पूर्व के प्रकाशन हमारी दृष्टि में नहीं आए। यह दो उदाहरण हमने 'भण्डार में से एक मुट्ठी, रूप में प्रस्तुत किए हैं अन्यथा व्यवहार अन्य उद्धरणों के साथ भी इससे अच्छा नहीं हुआ है। आपको तो इन उद्धरणों को अपनी पुस्तक में केवल प्रतिलिपि ही कर देना था फिर भी आपके पैर लगातार फिसले हैं। ऋषि दयानन्द के उद्धरण कितने मार्गों से गुज़रे हैं फिर भी वह उतने ही शुद्ध रहे। आपको प्रशंसा करनी चाहिए थी न कि नासमझी व मिथ्या भाषण के क्षुद्र व घृणित आरोप घड़ने आपको शोभा देते थे। ऋषि दयानन्द का

१. अर्थात् अनादि। —'जिज्ञासु'

२. मौलाना के पञ्चम संस्करण में यह शब्द छपा है परन्तु पण्डित जी के ग्रन्थ में कातिब की असावधानी से छूट गया। —'जिज्ञासु'

पवित्र व्यक्तित्व इन आरोपों के प्रभाव से उच्चस्तरीय है। इसलिए आपकी कटु भाषा पढ़कर हमें हँसी आती है **क्रोध नहीं आता**। आश्चर्य इस बात का है कि आप जैसा पुराना अभ्यासी लेखक जिसे सदा लेखन के कार्य से सम्बन्ध है और जो पुस्तकों की लिखने-लिखाने व मुद्रण के सभी प्रकारों से परिचित है सत्यार्थप्रकाश के उद्धरणों के मार्ग में उत्पन्न होने वाली स्पष्ट बाधाओं को जानता हुआ भी इसमें लिखाए उद्धरणों की आश्चर्यजनक शुद्धता की प्रशंसा करने के स्थान पर अनावश्यक निन्दा क्यों करता है? अस्तु यह आपका आपके ख़ुदा से वास्ता है आइए अब आपके आक्षेपों की जाँच करें।

(२) **सूरते बकर आयत २४** के अन्तिम भाग का अनुवाद शाह रफ़ीउद्दीन ने यों किया है। **वास्ते उनके बीच उनके बीवियाँ हैं पाक की हुईं और वह बीच उनके हमेशा रहने वाले।**

इसमें सन्देह नहीं कि अरबी शब्द ख़ालिदून पुलिंग है, परन्तु एक अरबी न जानने वाले के लिए जिसने उर्दू से आर्यभाषा में इस वाक्य का अनुवाद किया होगा यह एक साथ स्त्रीलिंग व पुलिंग भाषा रहस्य के सिवाय क्या है? उर्दू लेखन पद्धति का यह भी दस्तूर रहा है कि तहतानी और याये फ़ौकानी (नीचे व ऊपर वाली य) को बिना भेदभाव के एक दूसरे के स्थान पर लिख देते हैं। उसने समझा ''सदा रहने वाली'' हो तो वाक्य समुचित और सुन्दर होगा। ऋषि ने इसे ज्यों का त्यों अपनी पुस्तक में लिख दिया है आपने खिल्ली उड़ाई—

''आपके कान में वाली (बाली) पड़ गई''।

हज़रत लेखक की भूल से हुई इस भूल से हुआ तो यही न कि हूरों को बहिश्त में सदा रहने वाली समझा गया। क्या वह हमेशा रहने वाली हैं या नहीं? सूरते कहफ़ में **आयत ३१ में बहिश्त को 'जन्नाते अदन' हमेशा रहने वाले बाग़ और सूरते दहर में आयत १९ में ग़िलमान को साफ़ 'वालिदान' मुख़ल्लिदून कहा है**। जब हूर व ग़िलमान वहाँ सदा रहते ही हैं फिर चाहे प्रमाण में संशोधन कर लो समालोचना तो रहेगी ही कि वे किस कर्म के फल स्वरूप वहाँ रहती हैं? व जन्नतियों के वहाँ जाने से पूर्व क्या करती हैं? अहले जन्नत के वहाँ सदा रहने का ऋषि ने पृथक् शंका की है।

(३) सूरते **बकर आयत १०९** से निम्नलिखित उद्धरण लिया गया है।

ऐसा न हो कि काफ़िर लोग हसद (ईष्या) करके तुम को भी ईमान से मुनहरिफ़ (पलटा खाना) कर दें, क्योंकि उनमें से ईमान वालों के बहुत से दोस्त हैं।

अब देखिए शाह रफ़ीउद्दीन का अनुवाद।

और दोस्त रखते हैं बहुत अहले किताब में से काश कि फेर दें तुमको पीछे ईमान तुम्हारे के काफ़िर हसद से।

पश्चात् वर्ती अनुवाद का सिर पैर बनाइए। तमाशा यह है कि आप ने इस अनुवाद पर एक शब्द भी नहीं लिखा। प्रत्युत इसके बाद की आयत को लिखकर दावा किया है कि—''यदि कोई समाजी दोस्त पण्डिजी का नकल किया हुआ जुमला हमें दिखा दे तो हम १००) उनको इनाम देंगे।''[१] इन दोनों अनुवादों में अन्तर **'ऐसा न हो' और 'काश कि' का है**। 'ऐसा न हो' का कुछ अर्थ है, 'काश कि' का कुछ नहीं। इस थोड़े से अन्तर ने आपकी पुस्तक के प्रथम संस्करण की अवधि में आपको यह खबर भी न होने दी कि कुरान में इस आशय की कोई आयत है। आख़िर एक आर्य महाशय ने यह आयत आपको दिखाई तो **बजाए इसके कि द्वितीय संस्करण में प्रथम संस्करण की व्यर्थ की शिष्टाचार हीन निन्दा व गाली गलौज निरस्त कर देते वह सब पुष्प वर्षा भी जो आपकी उपेक्षा व जानबूझकर की गई भूल का ही परिणाम थीं रहने दीं** और फिर इस आयत का अनुवाद किया—

बहुत से अहले किताब यहूद व नसारा चाहते हैं कि तुमको ईमान लाने के बाद महज़ अपनी ज़िद व हसद से बावजूद हक ज़ाहिर हो जाने के काफ़िर बनावें।[२]

---

१. मौलाना ने एक से अधिक बार ऋषि के द्वारा उद्धृत आयतों के अनुवाद को चुनौती देते हुए पुरस्कारों की घोषणा की। कुछ और मौलवियों को भी जोश आया। पुरस्कार किसने देना था? हर्ष का विषय तो यह है कि मौलाना ने यह स्वीकार करने का साहस दिखाया कि उनके द्वारा दिये गए आयतों के अर्थ शाह रफ़ीउद्दीन की तफ़सीर से लिए गये हैं। —'जिज्ञासु'

२. मौलाना का यह अनुवाद कुरान के किसी भी अनुवाद से मेल नहीं खाता। हम भी चुनौती देते हैं कि ये अनुवाद किसी तफ़सीर से दिखाया जावे। —'जिज्ञासु'

क्या यह शाब्दिक अनुवाद है? ऋषि ने तो भूमिका में जिसे आप न जाने किस स्वार्थवश निरस्त कर गए लिख ही दिया है कि—

मौलवी साहबान के अनुवाद का पहले खण्डन करके तत्पश्चात् इस विषय पर कलम उठावें।

शाह रफ़ीउद्दीन को अपराधी बनाते तो पता चलता—न्याय की माँग यह थी आप शाह रफ़ीउद्दीन को अपराधी घोषित करते न कि ऋषि दयानन्द के मुँह आते जिन्होंने एक अस्पष्ट रचना को कुछ अर्थ प्रदान किया। चलिए अनुवाद आपका ठीक, ऋषि की इस आयत पर शंका यह है—

देखिए! अब ख़ुदा ही उनको याद दिलाता है कि तुम्हारे ईमान को काफ़िर न गिरा दें। क्या ख़ुदा सर्वज्ञ नहीं है?

इस याद दिलाने को तो आप भी अस्वीकार न करेंगे अन्यथा इस आयत की वाक्य योजना व उद्देश्य ही कुछ नहीं रहता। रह जाता है अल्लामियाँ में सर्वज्ञता का गुण न होने का दोष इसको समझने के लिए आक्षेप संख्या ११ की ओर ध्यान दीजिए जहाँ लिखा है—

इससे सिद्ध हुआ कि ईश्वर सर्वज्ञ नहीं, अर्थात् भूत, वर्तमान व भविष्य की बातें पूरे रूप में नहीं जानता (यदि जानता) तो शैतान को पैदा ही क्यों करता?

मौलाना! इस आक्षेप को उद्धृत करते हुए फिर **आप (अगर-जानता) को न जाने क्या समझे हैं**, वह उर्दू सत्यार्थप्रकाश में लिखा है और आप के हक प्रकाश में नहीं। **इस आँखें चुराने की आदत को क्या कहा जाए?** तनिक अनुमान लगाइये। इस निरस्त से पाठकों को कितनी भ्रान्ति होती है? अस्तु, हमारे आपको इस वाक्य की ओर ध्यान दिलाने का उद्देश्य यह है कि यहाँ भी वही सर्वज्ञ न होने का दोष प्रकट किया है जो उपरोक्त आयतों पर आलोचना करते हुए वर्णन किया है। **यहाँ शैतान अहले किताब के ईमान में विघ्न डालता है वहाँ अहले किताब थे**। आपके कथनानुसार अल्लामियाँ को सब कुछ ज्ञान था, परन्तु फिर ऋषि पूछते हैं कि सर्वप्रथम शैतान को और फिर उनके अहले किताब को पैदा क्यों किया? मौलाना फिर कहीं यह न कह देना जैसे जैनियों को पैदा किया, जैनियों की आत्माएँ अभाव से भाव में नहीं आईं। वे नित्य हैं

और स्वतन्त्रकर्त्ता हैं। **शैतान और किताब आपकी मान्यता में नित्य नहीं उत्पादित हैं**। अल्लामियाँ के बनाए हुए हैं और जैसे वे हैं ऐसे ही बनाए गए हैं। फ़रमाइये! अल्लामियाँ ने ज्ञान होते हुए भी उन्हें ऐसा बनाया है या अज्ञान में? ज्ञान रखते हुए बनाया है तो ख़ुदा क्षमा करें नियत बड़ी नेक है और यदि अज्ञानवश बनाया है तो सर्वज्ञ नहीं।

लीजिए, शाह रफ़ीउद्दीन के अनुवाद के स्थान पर जो ऋषि ने उद्धृत किया है अपना अनुवाद रख लीजिए और नीचे आक्षेप यही रहने दीजिए। आक्षेप समझ में न आए तो संख्या ११ पर विचार कीजिए फिर भी कठिनाई हो तो इन पृष्ठों को देख लीजिए—

(३) सूरते बकर आयत १३० के अन्तिम भाग का अनुवाद यों हुआ है—

और हकीकत में आख़िरत में वे ही नेक हैं।

आपने इस अनुवाद का रचयिता ''किसी बुढ़िया'' को निर्धारित किया है। बूढ़े और बुढ़िया में कुछ बहुत अन्तर तो नहीं होता, ख़ैर यह हुई आपके मैखाना वाली दिल्लगी आपको शंका क्या है?

एक वचन को बहुवचन के रूप में बदलकर व्यर्थ ही पुनर्जन्म का प्रमाण दिया है।

मौलाना! इस शंका की सच्चाई को कोई बुढ़िया ही समझे एक वचन को बहुवचन बनाना कहाँ, और पुनर्जन्म कहाँ। हज़रत इब्राहीम का वर्णन है। शिष्टता से बहुवचन कर दिया है। आपने लिखा जो है—

'मुहम्मद पैदा हुआ' 'मुहम्मद कहता था' जो एक निम्नस्तर के व्यक्ति के लोगों के लिए है।

ऋषि के आक्षेप का आधार तो कोई समूह नहीं, केवल हज़रत इब्राहीम हैं। आप एक वचन लिख लीजिए। आक्षेप वही का वही रहेगी।

(४) सूरते बकर आयत २५५ का उद्धरण यों हुआ है—

जो कुछ ज़मीन और आसमान पर है सब उसी के लिए है। चाहे उसकी कुर्सी ने आसमान व ज़मीन को समा लिया है।

इस पर आप फ़रमाते हैं—

'चाहे' का शब्द नकल करके पण्डितजी ने हमारे दावे की तसदीक कर दी कि आप समझ व दयानत से काम न लेते थे।

फ़कत नकल किया है तो **दयानत (ईमानदारी)** पर हरफ़ **(प्रश्न चिह्न) क्यों?** आप अपनी नकल पर जिसके प्रमाण ऊपर दिये जा चुके हैं ग़ौर फ़रमाइए फिर किसी दूसरे पर शंकालु बनिए। मौलाना! आप 'चाहे' निरस्त कर दीजिए इससे समालोचक के आक्षेप पर क्या अन्तर आता है? **बददयानती (बेईमानी) वहाँ आती है** जहाँ किसी निराधार शंका के लिए मूलपाठ में परिवर्तन किया जाए। यहाँ शंका का आधार 'चाहे' तो है नहीं, आयत है, इसका अनुवाद चाहे के बिना रहने दीजिए।[१]

(५) **सूरते हज आयत २६ का अनुवाद किया है—**

पाक कर मेरे घर को उसके गिर्द (चारों ओर) फिरने वालों के लिए और खड़ा रहने वालों के......।

इस पर ऋषि ने शंका की है—

जब ख़ुदा का घर है........।

मौलाना फ़रमाते हैं—

स्वामीजी! ख़ुदा का घर किस लफ़्ज़ का तरजुमा है.....साधु होकर ऐसी चालाकी तो मुनासिब नहीं, कहीं आप वही साधु तो नहीं जो **बलाई (मलाई) सहित पिया करते हैं।**[२]

हज़रत! आयत में आया है—**'तहहर बैती' पाक कर मेरा घर**, इस सम्बोधन के संकेत का लक्ष्य मेरे या आपके घर की ओर नहीं है। ख़ुदा कह रहा है, ख़ुदा ही का घर होगा। मौलाना होकर यह कंजूसी कि कुरान शरीफ़ के स्पष्ट शब्दों को मलाई बनाकर पी गए? मौलाना को मलाई से काम?

१. विचारशील पाठक यहाँ ध्यान दें कि '**चाहे**' शब्द शाह साहब की तफ़सीर में स्पष्ट अंकित है। मौलाना वहाँ से इसे उद्धृत करने को नकल करने का दुर्भावना बताते हुए कैसी दुहाई दे रहे हैं। शेख़ ग़ुलाम अली एण्ड सन्ज़ लाहौर द्वारा प्रकाशित शाह जी के अनुवाद में पृष्ठ ५८ पर प्रथम पंक्ति में '**चाहे समा लिया है कुरसी उसकी ने**' कोई भी पढ़ ले। —'जिज्ञासु'

२. मौलाना व्यर्थ में व्यथित हो रहे हैं। फ़ारुकी जी 'फ़तह उलहमीद' में 'मेरा घर' शब्द पढ़िये। —'जिज्ञासु'

सूरते अहज़ाब की आयत ६८ यह है—

रब्बना आति हिम जिअफीने मिनल अज़ाबे वलअनहुमल-अनन कबीरा।

इसका अनुवाद सत्यार्थप्रकाश में यों किया गया है—

ऐ रब! हमारे दे उनको दुगना अज़ाब और लानत कर उनको बड़ी लानत।

यह आयत पूरी की पूरी दर्ज की गई है। मगर हज़रत यूँ फ़रमाते हैं—

हम समाजी भाईयों से **दादरवाही (भला बनने के लिए)** वह आयत पूरी की पूरी नकल करते हैं—

व कालू रब्बना इन्ना अतअना सादतना व कुबराअमा फ़अज़-ल्लूनस्सबीला। रब्बना आतिहिम जिअफीना मिनलअजाबे वलअ-नहुमलअनन कबीरा[१]**।**

इन्साफ़ मौलाना पर रहा। यह एक आयत है या दो, दो आयतों की पूरी आयत (एक वचन) कहकर क्या आपने दयानतदारी (ईमानदारी) का प्रमाण दिया है? या एक वचन मआज़ल्लाह तहकीरन (निन्दा रूप में) प्रयुक्त हुआ है। मौलाना! कुरान शरीफ़ के सम्बन्ध में यह चालाकी? जब आयतें ही दो हैं तो फिर पहली आयत से अलग समझा जावे, इसमें दोष क्या है?

चलो! मौलाना की ही मान लो, कहते हैं—

इस आयत में उन लोगों का ज़िक्र है जो बवजह शामते अमाल (कुकर्मों के कारण) जहन्नम में डाले जायेंगे तो उस वक्त यों कहेंगे—''ऐ हमारे मौला! हमने बुरी बातों में अपने रईसों व बड़ों की इताअत (अनुकरण) की। तो उन्होंने हमें गुमराह किया। ऐ हमारे ख़ुदा! तू उनको हमसे दुगुना अज़ाब दे और बड़ी भारी लानत व फटकार कर''।

आयतें अलग-अलग दो होने के कारण हम बाद की वर्णित आयत को दोज़ख़ियों के कलाम का हिस्सा मानने पर मजबूर नहीं

१. कुर्आन के सब संस्करणों में ये सूरते अहज़ाब की दो ही आयतें हैं। इनकी संख्या ६७ व ६८ दी गई है। —'जिज्ञासु'

किए जा सकते।

परन्तु मौलाना के लिहाज़ से इसे भी जहन्नमियों का कहा मान लेते हैं—

जहन्नम की बातचीत तो अभी भविष्य की सूरत है। कौन जाने दोज़ख़ी क्या करेंगे और क्या न करेंगे? क्या उनका कोई डेपूटेशन कुरान के रचयिता की ख़िदमत में आया था कि हम ऐसा कहेंगे? जो व्यक्ति कुरान को ईश्वरीय सन्देश न मानता हो जैसे ऋषि दयानन्द नहीं मानते थे उसके लिए यह कल्पना कुरान की अपनी ही है। कोई बात मुँह से न कही दूसरे की वाणी से कहलवा दी, मनोविज्ञान के जानकार जानते हैं कि ऐसी इच्छा वास्तव में कहने वालों की अपनी इच्छा होती है। जिसके मुँह में यह इच्छा डाली गई है वह तो इससे है ही अनजान इसलिए ऐतराज कायम है—(शंका यथास्थान है)।

मौलाना की दरियादिली (उदारता) देखो, फ़रमाया है—

समाजियो! अगर कुरान शरीफ़ की आयत का वह मतलब हो जो स्वामी जी लिखते हैं तो हम तुम्हारे गुरुकुल (मदरसा) और कॉलेज के लिए ५००) नकद देंगे। मर्दे मैदान बनो। ऐसे एक दो मकामात (स्थानों) का सबूत ही दिखावो, माना कि तुम्हें रुपये की तमअ (लालच) नहीं। अपने गुरु की इज़्ज़त तो चाहते हो। वर्ना दुनियाँ क्या समझेगी, और स्वामीजी परलोक (दूसरी जून जन्म) में तुमको क्या कहेंगे?

दूसरी जून (जन्म) के इशारे पर भी पाठक ध्यान रखें।

मौलाना! यह दुआ जहन्नमियों की न होकर यदि जन्नतियों की हो जाए तो हानि क्या है? अल्लामियाँ ने दूसरी जगह दोगुना अज़ाब देने का वादा फ़रमाया है। जैसे—

तज़अफ़ालहुल अज़ाबोयौमल कयामते।

दोगुना किया जायेगा उनके लिए अज़ाब कयामत के दिन।

जब ख़ुदा का यह कानून है तो इसको अमल में लाए जाने की किसी ने दुआ भी कर दी तो हर्ज क्या हुआ? आप अकारण लाल-पीले हुए और रुपये लुटाने लगे। न मियाँ! आर्यों की पाठशालाओं में रुपया नहीं देना।

आपकी इन दरिया दिलियों के मध्य आपका एक और वादा याद आ गया जो आपकी किताब के पृष्ठ २३० पर लिखा है। स्वामी दयानन्द ने लिखा है—

अगर हमल वगैरा बुरुजों को बुरुज कहना है तो और बुरुज क्यों नहीं? आपने इस पर तहरीर फ़रमाया है—

कुरबान ऐसी समझ पर! स्वामीजी बरुज से मुराद **सैय्यारों (सितारों) की मंजिलें हैं**........हाँ हम यह नहीं समझे, पण्डितजी क्या कहते हैं कि अगर हमल वग़ैरा.....तो और बुरुज क्यों नहीं? कोई **समाजी दोस्त** हमें इसका मतलब समझा दे तो हम मशकूर होंगे और एक नुसख़ा उसको इसी किताब का नज़र करेंगे हमें तो (बेअदबीमाफ़) दीवाने की-सी बड़ मालूम होती है।

कितने बदल गये—मौलाना यह क्या लिख गए **''बे अदबी-माफ़''** आपको तो लिखना चाहिए था **''बा अदबीमाफ़''** मगर आप हैं बड़े सयाने, मुकदमा 'वर्तमान' के दौरान में साफ़ कह गए। **मेरा कोई आर्यसमाजी दोस्त नहीं** कि शायद कोई इस समझ में न आने वाले नुकता को **ज़िहननशीं करा ही दे तो कह देंगे** भाई-दोस्त होने की शर्त भी तो है, ख़ैर किसी मौलवी साहब की बारीक समझ में यह मोटी बात आ जावे। है तो मुश्किल लेकिन फिर भी किसी मौलवी साहब की मदद लिए लेते हैं। **तफ़सीरे हुसैनी में लफ़्ज़ बरुज के दो तरजुमें किए हैं एक तो यही जो मौलाना ने दर्ज फ़रमाया है। सैयारों की मंजिलें दूसरा दरवाज़ा हाए किला? क्यों मौलाना, इन्हें भी बुरज कहते हैं न?** और आपका यह भी **ऐतिकाद है कि कुरान में यह सितारे गोया बुर्ज है जहाँ शैतान जाते हैं**। और आसमान में हो रही मशविरतों को कान लगाकर सुनते हैं वहाँ उन्हें शोलों से मारा जाता है? हवाला चाहिए तो इसी किताब के पृष्ठ **२०९ से २२४ में मुलाहज़ा फरमाइए**। कहो उस्ताद, वह हैं और कि नहीं? **दीवाने की बड़ सयाने की समझ में अब भी आई या नहीं?** आपकी किताब महफ़ूज़ है। हम आपकी दोस्ती का नहीं **अकीदतमंदी का दम भरते हैं।**

सूरते बकर की आयत २४ का तर्जुमा ज़ैल दर्ज हुआ है—

इस आग से डरो कि जिसका ईंधन इंसान हैं और पत्थर काफ़िरों

के लिए तैयार किए गए हैं।

शाह रफ़ीउद्दीन ने उसका तर्जुमा यों किया है—

पस डरो उस आग से जो ईंधन उसका आदमी हैं और पत्थर तैयार की गई है वास्ते काफ़िरों के—

इत्तिफ़ाक ऐसा है कि शाह साहब ने **फ़िअल 'हैं' आदमी के बाद दर्ज कर दिया है** और लफ़्ज़ पत्थर के बाद वक़्फ़ा का निशान (—) नहीं दिया। आर्य भाषा में तर्जुमा करने वाले ने ''है'' के बाद वक़्फ़ा समझ लिया और **पत्थर फ़ाइल (कर्त्ता) कर दिया है**। ''तैयार की गई है'' का और फाइल है भी नहीं। पत्थर की मुनासिबत से **''की गई है'' को ''किए गए हैं'' बना दिया। क्योंकि पुराने उर्दू ख़त में याये तहतानी व याए फ़ौकानी की तमीज़ न की जाती थी।**

अरबी के मुहाविरे की हिन्दुस्तानी नज़र से बेरबती इस सारी ग़लती का जो शाह रफ़उद्दीन के तर्जुमों से शुरू हुई और इस तर्जुमे के आर्य भाषा में तब्दील करने वाले के हाथों और आगे ले जाई गई, कारण बनी है। लेकिन इससे भी कुरान के असली मानों में क्या भेद हुआ है? आग का ईंधन इन्सान और पत्थर हैं इसके क्या माने? इन्सान तो चेतन है उसे तकलीफ़ होगी पत्थर को क्या तकलीफ़? मुफ़स्सिरों ने पत्थर से मुराद लिए हैं पत्थर के बुत, भला इन्हें आग में डालने के क्या माने? इन बेजानों का क्या कसूर कि उन्हीं जाहिलो ने अल्लाह का शरीक कर दिया? इससे तो पत्थर का मसरफ़ यही अच्छा है कि उनसे जहन्नमियों की सरज़निश (सिर फोड़ना) किया जाए। यदि अहले इस्लाम ''अइद्दत'' का सीग़ा (वचन) वाहिद (एक) मुअन्नस (स्त्री लिंग) से बदलकर मुज़क्कर (पुलिंग) करते तो आयत के निस्बतन (अपेक्षाकृत) माकूल (उचित) मानी बन जायेंगे और यदि मुहमिल (सन्देह जनक) बात को मुहमिल ही रखना है तो इसमें उनका अख़ितयार है।

(८) सूरते तौबा की आयत २१ का तर्जुमा शाह रफ़ीउद्दीन ने यूँ किया है—

अल्लाह नज़दीक उसके है सवाब बड़ा।

सत्यार्थप्रकाश में तर्जुमा ज्यों का त्यों दरज हुआ है। इससे पूर्व

बहिश्तियों का ज़िक्र है। **ऋषि ने समझा ज़मीर ''इस'' का इशारा उनकी तरफ़ है। उन्हें क्या मालूम अर्बी का मुहावरा ही ऐसा बेरब्त है कि उसमें अल्लाह के नज़दीक की जगह ''अल्लाह नज़दीक उसके'' भी इस्तेमाल होता है?** ऋषि ने एतराज़ इस पर यह किया है कि जो अल्लाह किसी के नज़दीक और किसी से दूर हो तो **वह महदूद है सो तो हमने बाब सोयम (तीसरे) में मुतअद्दद हवाला जात कुरान से साबित कर दिया है कि वह ऐसा है**। कुरान की यह आयत ऋषि दयानन्द के सामने थी, वह जानते थे कि कुरान का अल्लामियाँ का **तसव्वुर एक महदूद शख़्स का तसव्वुर है उसकी तरफ़ फ़रिश्ते आते जाते हैं उसके दाएँ बाएँ बहिश्त और दोज़ख़ होंगे**। उसे ऋषि ने यहाँ भी महदूद कह दिया तो इसमें नई बात क्या हुई? आप इस महदूदियत का इज़ाला करें।

सूरते नहल की आयत ५७ का अनुवाद यों किया गया है—

और मुकर्रर करते हैं वास्ते अल्लाह के बेटियाँ। पाकी है उसको और वास्ते उनके हैं जो कुछ कि चाहियें।

आर्य भाषा सत्यार्थप्रकाश में पाकी की जगह पवित्रता दर्ज है। बाकी शाह रफ़ीउद्दीन साहब के तर्जुमे की नकल है। मौलाना ने न मालूम (उन) की जगह उस कहाँ से ले लिया है कि इस पर इतना बड़ा तूफ़ान खड़ा किया है कि इधर ऋषि को बेनुकत सुनाई हैं इधर आर्य समाजियों को, कहीं तर्जुमा गलत मालूम हो तो असल किताब देख लेनी चाहिए। अन्यथा भूल का जिम्मेदार मुतरज्जम है न कि असल किताब का मुसन्निफ़, हमारे सामने तो तर्जुमा भी गलत नहीं लेकिन एहतियातन हमने आर्य भाषा के सत्यार्थप्रकाश में यह फ़िकरा देख लिया, यह हुई तर्जुमे की बात, अब एतराज़ पर आइए मौलाना लिखते हैं—

स्वामीजी समझे कि मुसलमान ख़ुदा के लिए बेटियाँ तजवीज़ करते हैं। ऋषि की समीक्षा यह है—

अल्लाह बेटियों से क्या करेगा? बेटियाँ तो किसी आदमी को चाहिए बेटे क्यों नहीं मुकर्रर किए जाते? बेटियाँ मुकर्रर की जाती हैं इसका क्या कारण?

मौलाना इन्साफ़ आप पर, फ़रमाइए, ऋषि ने बेटियों का मुकर्रर

करना मुसलमानों से कहाँ मंसूब किया है? यह तो **ख़ाह मख़ाह बिल्ली के ख़्वाब वाली बात है**। ऋषि ने लिखा ही तो है कि कुरान की ख़ूबियों को तसलीम करता हूँ मगर हाँ आपने तो इस समुल्लास की भूमिका आपकी पुस्तक में लिखी ही नहीं आप उसमें लिखे वाक्यों की ओर लोगों का ध्यान क्यों जाने देने लगे? मौलाना क्या इसमें आपको कोई हर्ज है कि ऋषि दयानन्द कहीं-कहीं मुसन्निफ़ कुरान के हम नवा हो जायें? आप सारी समीक्षा के दौरान में ऋषि दयानन्द की यह ख़ूबी देखेंगे कि कुरान के किसी सिद्धान्त का सौन्दर्य श्रेष्ठता जहाँ तक वह काबिले एतराफ़ हैं स्पष्ट स्वीकार किया है इसमें जो कमी रही उस की समीक्षा की है। यहाँ ऋषि दयानन्द और हज़रत मुहम्मद एक किश्ती के यात्री हैं। आप और कुफ्फारे अरब दूसरी किश्ती के मुसाफ़िर हैं। ऋषि दयानन्द को हर्ज नहीं। आप भी इस किश्ती में आ जाएँ।

कुरान शरीफ़ की समीक्षा में ऋषि दयानन्द ने भूमिका के अतिरिक्त जिस पर मौलाना ने किसी कारण अपना हकशफा समझ लिया है। **१५९ वाक्य (पैराग्राफ) लिखे हैं**।[१] इस सारी रचना में मौलाना सनाउल्ला साहब केवल **नौ स्थान** ऐसे प्रकट कर सके हैं जहाँ उनकी सम्मति में अनुवाद ठीक नहीं हुआ है या आगे पीछे की भाषा से असंगत हो गया है। **उनमें से हज़रत इब्राहिम के लिए सम्मान के भाव से बहुवचन प्रयोग होने पर जनाब मौलाना व्यर्थ ही गरम हुए हैं** और **सूरते हज में 'बेती' शब्द हज़रत की खोजी दृष्टि के अभाव से चूक गया है**। सूरते अहज़ाब में दोगुनी पीड़ा की बात भी व्यर्थ ही जहन्नमियों के मुँह पर डाली है। **भला दोज़ख़ी और उनके मुँह में कुरान**! फिर हमने मौलाना के लिए जहन्नम वालों को कुरान पाठ का भागी होने दिया है। **एक स्थान पर कुरान की भाषा का कुछ अर्थ ही नहीं बनता**। ऋषि ने या उनके नियुक्त अनुवादकों ने अर्थ बना दिया है। **एक दो आयतों में अरबी के असंगत मुहाविरों ने आरम्भिक अनुवादक की भाषा को रहस्यमय बना दिया है**। फिर भी हमारी सज्जनता देखो ऐसे सभी स्थानों पर हज़रत मौलाना

१. समीक्षायें १६१ आयतों की है। कुछ सामग्री भूल से पुराने संस्करणों में न छप सकी। —'जिज्ञासु'

का आदेश हमने बिना ननुनच के स्वाकीर कर लिया है। **आयतों का अनुवाद कुछ कर लें, आलोचना में कोई दोष नहीं लगता**। यह और बात है कि सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन से आपका मज़हब ही बदल गया हो। हमें हक प्रकाश में इसके कुछ लक्षण दिखाई दिए हैं अतएव जैसा हमने ऊपर निवेदन किया हिंसक पशुओं के निषेध का वर्णन करने के बाद फ़रमाया है—

''ऐसा ही सूअर भी मुज़िरे सिहत (अस्वास्थ्यकर) है ख़ुसूसन (विशेषतया) गरम मुल्कों में।''

अल्लाह ईमान बचाये—हमें फिर यह आश्चर्य हुआ कि यह गरम देशों की विशेषता क्यों मानी गई है, जब अस्वास्थ्यकर गर्म देशों में है तो निषिद्ध भी विशेषतया गर्म देशों में ही होगा। अल्लाह ईमान सलामत रखे!

कुरान नई रोशनी में अथवा चौदहवीं का चाँद

ऋषि दयानन्द का उद्देश्य मत-मतान्तरों की आलोचना से यह था कि सभी मतों के अनुयायी इस आलोचना के प्रकाश में अपनी-अपनी मान्यताओं पर गम्भीर दृष्टिपात करें और भ्रम-भ्रान्तियों व अनुचित मान्यताओं से अपने निर्दोष हृदय को शुद्ध करके सन्मार्ग को ग्रहण करें।

सत्यार्थप्रकाश के आलोचनात्मक समुल्लासों से सभी मतों ने लाभ उठाया है। **इन मतों की व्याख्याएँ महर्षि की आलोचना के पश्चात् कुछ की कुछ हो गई हैं**। इस समय हमें इस्लाम से ही काम है। ऋषि की युक्तियों का प्रभाव उनके जीवन काल में ही अत्यन्त सुदूर तक फैल चला था, **सर सैयद अहमद ख़ाँ जिनके जीवनकाल में ही मुसलमान मौलवियों ने उन पर कुफ्र के फ़तवे लगाए**। आज वर्तमान मुस्लिम समाज के एक सर्वोच्च सुधारक समझे जाते हैं। वे महर्षि के निकटस्थ लोगों में से एक थे। उनकी सेवा में उपस्थित होते और उनकी शिक्षा व ज्ञान से लाभान्वित हुआ करते। **ऋषि के सम्बन्ध में एक बार उन्होंने यह सम्मति प्रकट की थी कि ऋषि उन श्रेष्ठतम व्यक्तियों में से हैं जिनके ऊपर ईश्वरीय सन्देश उतरा करता है**। सर सैयद अहमद मुसलमान थे तथा मृत्यु पर्यन्त मुसलमान रहे। परन्तु वे प्रचलित मुस्लिम मान्यताओं से सन्तुष्ट न थे। उन्होंने कुरान शरीफ़ की एक व्याख्या लिखी है इसकी तुलना अन्य व्याख्याओं से करो। स्पष्ट ज्ञान होता है कि जैसे सत्यार्थप्रकाश के आक्षेपों से कुरानवी मान्यताओं को सुरक्षित करने का प्रयत्न किया है। कुरानवी मान्यताओं को वेद के सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने का यह प्रयत्न है। यह भाष्य इस समय अप्राप्य-सा हो रहा है। पाठक इसके उद्धरणों को मूल से मिला न सकेंगे, **परन्तु मौलाना हाली ने 'हयाते जावेद' में एक संक्षिप्त-सा विवरण उन संशोधनों का**

दिया है जो सर सैयद ने कुरान की प्रचलित तफ़सीरों में किये। हम इनमें से कुछ संशोधनों के कुछ वाक्य पाठकों को प्रस्तुत किए देते हैं। सर सैयद की व्याख्या के कुछ-कुछ परिणाम निम्नलिखित हैं—

(७) शैतान या इबलीस का लफ़्ज़ जो कुरान मजीद में आया है उससे कोई वजूद (सत्ता) खारिज मानव जाति के अतिरिक्त अभिप्रेत नहीं है, अपितु स्वयं मानव में जो वासनात्मक ज्वार व पाशविक शक्ति है वह अभिप्रेत है।

(११) **अहदे अतीक (भूतकाल) व अहदे जदीद (आधुनिक काल) की किताबों में तहरीफ़े लफ़्ज़ी (शाब्दिक परिवर्तन) वाकई नहीं हुई मगर केवल तहरीफ़े मानवी (अर्थ परिवर्तन) हुई है।**

(१५) कुरान की किसी आयत से जबर (ज़ोर से) किसी के कदर (भाग्य) पर इस्तदलाल (युक्ति प्रयोग) करना मकसदे शारिअ (व्याख्याकार के उद्देश्य) के विरुद्ध है।

(१६) **मेराज (आसमान पर जाना) व शक्के सदर (दिल फटना) दोनों रोअया (स्वप्न) में वाकय हुए हैं न कि बेदारी में।**

(१७) .....मलाइक या मलाइका (फ़रिश्ता या फ़रिश्ते) के अलफ़ाज़ जो कुरान में वारिद (प्रविष्ट) हुए हैं उनसे यह अभिप्राय नहीं है कि वह कोई जुदा मख़लूक इन्सान से बालातर है। बल्कि ख़ुदा ने जो मुख्तलिफ़ कुव्वतें अपनी कुदरते कामिला से **मादा (प्रकृति)** में वदीअत (प्रदान) की हैं। जैसे पहाड़ों की दृढ़ता पानी का सैलाब दरख्तों का झुकना बिजली की शक्ति जज़्ब (प्रवेश) व दफअ (पृथकत्व) ज़लिक (इसी प्रकार).....**इन्हीं को मलाइक व मलाइका से ताबीर (अलंकारिक रूप) किया गया है।**

(१८) आदम और मलाइका और इबलीस की कहानी जो कुरान में वर्णित की गई है यह किसी वाकए की खबर नहीं, अपितु यह एक **तमसील (उपमा)** है।

(१९) चमत्कार नूबुव्वत की साक्षी नहीं।

(२६) कुरान में आंहज़रत सलअम से किसी मौजिज़ा

(चमत्कार) सादिर होने का ज़िक्र नहीं है।

(२६) शुहदा (बलिदानी पुरुषों) की निस्बत जो कुरान में आया है कि उनको मुर्दा न समझो, अपितु वह ज़िन्दा है इससे उनका **उलूदरजात (ऊँची कोटि)** और रुहानी खुशी और दुनियाँ में मिसाले तकलीद (अनुकरण) छोड़ना मुराद है न यह कि वे दर हकीकत ज़िन्दा हैं और मिसल ज़िन्दों के खाते-पीते हैं।

(२७) सूर (नरसिंगा) का लफ़्ज़ जो कुरान में आया है केवल अलंकार है।

(२८) ख़ुदा ताला की ज़ात व सिफ़ात वअस्मा (नाम) व अफ़आल (कर्म) के मुतल्लिक जो कुछ कुरान व हदीसों में वर्णन हुआ है वह सब भौतिक रूप में अलंकार व उदाहरण रूप में वर्णन हुआ है। इसी प्रकार मआद (मृत्योपरान्त) के मुतल्लिक जो कुछ वर्णन हुआ है, जैसे बुअस व नशर (भेजा जाना फैलाया जाना) हिसाब-किताब, सरात (मार्ग) जन्नत-दोज़ख़, वगैरा-वगैरा वह भी लौकिक (मजाज़) पर महमूल (निर्भर) है न कि हकीकत पर।

(२९) कुरान में जो स्थान-स्थान पर कदीम कौमों में **बदियाँ** (बुराईयाँ) व **बदइख़लाकियां** (दुश्चरण) फैल जाने के बाद उन पर तरह-तरह के अज़ाब नाज़िल (गिरना) होना, और किसी कौम को आँधी व तूफान से किसी को टिड्डुयों और दीगर हशरात (प्रलय कर बातें) के मुस्सलत (ग्रस्त) करने से.....बरबाद करना बयान हुआ है। इसका मतलब यह नहीं कि हर हकीत उनके गुनाह व मआसी (घोर पाप) अज़ाब नाज़िल होने का बाइस (कारण) हुए थे, बल्कि **इब्तदाए आफ़रीनश (सृष्टि क्रम से) यह ख़्याल तमाम कौमों में चला आता था** कि जो हौलनाक हादसे (भीषण दुर्घटनाएँ) दुनिया में वाकय होते हैं वह इन्सानों के गुनाहों की कसरत के सबब वाकय होते हैं और **अम्बिया (ईश्वरीय दूतों) का काम यह है** कि जिन ख़्यालात पर लोग विश्वासी हुए हैं अगर वे ख़्यालात मकासिदे नूबुव्वत के मनाफ़ी नहीं हैं, बल्कि उनकी ताईद करने वाले हैं तो वह इन ख़्यालात की सिहत (शुद्धि) या गलती से कुछ तअर्रुज (बदलाव) नहीं करते, बल्कि उन्हीं खयालात के मुताबिक उनसे खिताब करते

हैं।

(३१) ख़ुदा का दीदार क्या दुनियाँ में और क्या उकबा (परलोक) में न इन ज़ाहिरी आँखों से मुमकिन है और न दिल की आँखों से।

(३२) कुरान मजीद में जो जंगे बदर व जबीन के बयान में फ़रिश्तों की मदद का जिक्र किया गया है उससे इन लड़ाइयों में फ़रिश्तों का आना साबित नहीं होता है।

(३४) **हज़रत ईसा का बिन बाप के पैदा होना कुरान की किसी आयत से साबित नहीं होता है।**

(३५) कोई अमर आदतें इलाही या कानूने तबई के ख़िलाफ़ कभी वकूअ में नहीं आता।

(३६)**......यह मुराद नहीं कि ऐसा (कुरान जैसा) फ़सीह (उत्तम लेख) तुम नहीं बना सकते....।**

(३८) कुरान से जिन्नात (भूत-प्रेत) का ऐसा वजूद कि वह हवाई आग के शोले से पैदा होते हैं और उनमें मर्द और औरत दोनों होते हैं.......वगैरा वगैरा साबित नहीं होता।

(३९) अम्बिया बनी इसराईल और कौम बनी इसराईल के किस्से जो कुरान में बयान हुए हैं उनमें जिस कदर बातें बज़ाहिर कानूने कुदरत के खिलाफ मालूम होती है वह सब दर हकीकत उनके मुताबिक बयान की गई हैं।

पाठक! देखे, यह है ऋषि के पुण्यशाली सत्संग का प्रभाव—

इस इस्लाम व प्रचलित इस्लाम का मिलान करो आकाश-पाताल का अन्तर है।[1]

यही दशा **मौलाना मौहम्मद अली के कुरान के अनुवाद की है आप आदम को व्यक्ति नहीं एक जाति मानते हैं**, फ़रिश्ते व शैतान को शक्तियाँ, भूमि व आकाश की उत्पत्ति को छह दिन नहीं

१. मौलाना हाली ने प्रचलित इस्लाम से हटकर सर सैयद अहमद ख़ाँ के नये-नये विचारों के बहुत से बिन्दू तो दे दिये, पाठक यह भी ध्यान दें कि मौलाना की अपनी 'मुसद्दसे हाली' पर भी महर्षि के वेदोक्त विचारों की गहरी व स्पष्ट छाप दिखाई देती है। —'जिज्ञासु'

छह मंजिलें (स्तर) मानते हैं। हूरो ग़िलमान को आध्यात्मिक कृपाएँ, **शक्के कमर (चाँद के टुकड़े) को अरबवासियों की शक्ति का पतन**, कयामत के रोज़ चाँद व सूरज के इकट्ठे होने को अरब व ईरानवासियों के—साम्राज्यों का पतन, **बहिश्त के बाग को इराक**, अरब व फ़ारस के बागीचे, हूरों को कहीं कहीं उत्तम नसल की स्त्रियाँ जिनसे मुसलमान विजेताओं के विवाह हुए। दोज़ख़ को पापियों की दिल की दशा आदि आदि मानते हैं।

सर सैयद ने अपेक्षाकृत अधिक हिम्मत से प्रचलित इस्लाम से अपनी मान्यताओं का सम्बन्ध हटा लिया है और प्रायः वह बातें मानीं जो ऋषि के आलोचना ने माकूल (युक्तियुक्त) निर्धारित कीं। मौलाना मुहम्मद अली की व्याख्या कुरान देखने से यह तो साफ़-साफ़ पता चलता है कि तफ़सीर लिखते समय उनके ध्यान में सत्यार्थप्रकाश का चौदहवाँ समुल्लास जरूर था। परन्तु इधर कादियानी सम्बन्धों से भी तो आपका सीमित क्षेत्र है आपने इस क्षेत्र में भी अपना कुछ कर्त्तव्यपालन किया है। उदाहरण रूप में चमत्कार उसी मात्रा में स्वीकार किया है **जितना कादियानी मुजदिद (नए नबी) साहब से सबन्धित किया जाता है**। अर्थात् भविष्य वाणियाँ। आपने अन्य अर्थों के अतिरिक्त दोज़ख़ बहिश्त के आश्वासनों को हज़रत मुहम्मद की भविष्य वाणियाँ बना दिया है कि उनसे वे सांसारिक वैभव उद्दिष्ट था जो इस्लाम के प्रचार के बाद मुसलमान विजेताओं को विजित देशों में प्राप्त हुईं। सत्यार्थप्रकाश की शिक्षाओं के आगे भी सिर झुका दिया और **चुपके-चुपके वैदिक मान्यताओं को कुरानी बुद्धिमत्ता पूर्ण मान्यताओं में स्थान दे दिया। एक बात आपने बहुत अच्छी की वह यह कि लोंडियाँ (रखैल) रखना कुरान के दृष्टिकोण से निषिद्ध बता दिया**। इन सामाजिक सुधार को कुरान की शिक्षाओं में लाने का सिहरा मौलाना के सिर है यद्यपि सत्यान्वेषी दृष्टियाँ यह अनुभव किए बिना नहीं रह सकतीं कि यह सेहरा मौलाना के सर पर ऋषि की निष्पक्ष आलोचना के पवित्र हाथों ने ही बन्धवाया है।

सम्भव है कोई साहब हमसे पूछ बैठे कि क्या इन व्याख्याओं

का आधार वास्तव में कुरान का मूल पाठ हो सकता है? इसके उत्तर में निवेदन है कि कई मनुष्यों के स्वभाव का मेल बुद्धिवाद की अपेक्षा किसी की पैरवी करने (लेख के अनुसार चलने) में अधिक होता है। वे युक्तियुक्त बात को भी स्वीकार उसी समय करते हैं जबकि वह बात उनके प्रचलित मान्यताओं में सम्मिलित कर दो।

सर सैयद अहमद व मौलाना मुहम्मद अली दोनों ने ऋषि की अधिकांश शिक्षाएँ स्वीकार कर ली हैं, परन्तु उन्हें नाम कुरानी मान्यताओं का दिया है। सम्भव है इन हज़रात के निश्चय से यह इच्छा बाहर हो, परन्तु इस बात में कोई सन्देह नहीं वास्तव में यह उपाय जन सामान्य में सुधारवादी विचारों को फैलाने को आसान बना देती है। इनसे पूर्ववर्ती किसी व्याख्याकार को यह व्याख्याएँ क्यों न सूझीं? **यह प्रश्न इस्लाम के इन सुधारकों के विचार क्षेत्र से बाहर है। कुछ हो। हमें प्रसन्नता है कि वैदिक विचारधारा समर्थक केवल कुरान पन्थी ही नहीं रहे**। स्वयं कुरान इन महाशयों के साथ ऋषि का समवाणी हो रहा है। यह और बात है कि इन भाष्यों के पश्चात् फिर यह प्रश्न किया जाए कि जातिओं की प्रचलित कहानियों को इन भ्रान्तियों भरे रूप में कुरान से सम्मिलित करने से क्या भ्रमों को यथावत बनाए नहीं रखा गया? और क्या इन मुसलमान विजेताओं की अस्थायी सफलताओं का वर्णन कर देने से कुरान अस्थायी कथानक नहीं बन गया?

मौलाना हाली फरमाते हैं—

''जो लोग सर सैयद की निस्ब्त कहते हैं कि जो अर्थ कुरान के उन्होंने लिखे हैं वे न ख़ुदा को सूझे न रसूल को सो शायद सर सैयद की कुछ व्याख्याओं की निस्ब्त यह कहना सही ही हो मगर उनकी तमाम तफसीर के बारे में ऐसा कहना सितम ज़रीफी (अत्याचार) है.......कुरान मजीद में बावजूद बेशुमार तफ़सीरों के जो गुज़स्ता तेरह सौ बरस में लिखी गईं अब तक नई तफ़सीर की गुंजाइश है (हयाते जावेद ज़मीमा-संख्य ५ सफ़ा ९०-९१)।

ज़मर ने पिछले दिनों एक किताब के मध्य में मिश्र से मुद्रित कुरान के कुछ भागों की एक ऐसी व्याख्या की चर्चा की है जिसमें

कुरान की आयतों में विज्ञान की खोजों को सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है। टरकी में मौलाना लोग इस कार्य पर नियुक्त किए गए हैं कि कुरान की व्याख्या वर्तमान काल की आवश्यकताओं के अनुसार करें।

हमारी एक भविष्यवाणी[१]—

हम भविष्यवाणी करते हैं कि कुरान की जो भी नई व्याख्या लिखी जाएगी उसके संशोधन की कसौटी महर्षि दयानन्द की आलोचना होगी, कुछ अहले इस्लाम अपनी भूल भ्रान्तियों से सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास का विरोध कर तो बैठे हैं, **परन्तु उन्हें ज्ञान नहीं कि सत्यार्थप्रकाश का चौदहवाँ समुल्लास वह यात्रियों का मार्गदर्शक शंखनाद है जो इस्लाम के काफ़िले को ठीक मान्यताओं की ओर जल्दी-जल्दी पग उठाने की प्रेरणा दे रहा है**। काफ़िले वालो! शङ्खनाद की आवाज़ सुनो और निश्चित लक्ष्य की ओर पग उठाओ।

पुराना इस्लाम जैसे अर्ध चन्द्र का प्रकाश है उसकी लौ मद्धम है, सत्य का प्रकाश इसमें कम पड़ा है। ऋषि ने लिखा ही तो है—

इसमें जो थोड़ा-सा वेद के अनुकूल है वह मुझे और सभी ज्ञान प्रेमियों को स्वीकार है।

इसके विपरीत चौदहवाँ समुल्लास सूर्य का वह प्रकाश है जो धीरे-धीरे अर्ध चन्द्र को चौदहवीं का चाँद बना रही है। ज्यों-ज्यों अर्ध चन्द्र सूरज के सामने आएगा त्यों-त्यों उसमें प्रकाश बढ़ता जाएगा यहाँ तक कि वह पूर्णिमा का चाँद बन जाएगा। सत्यार्थ के अर्थ हैं सच्चाई, प्रकाश के अर्थ हैं चमक व उजाला।

कवि ने इस पूर्ण प्रकाश को सूरज कहा है—

---

१. ऋषि दयानन्द भविष्यवाणियों को नहीं मानते। पं० चमूपतिजी ने यह भविष्यवाणी की है। काल की चाल व घटित होनेवाली घटनाएँ इसकी पुष्टि कर रही हैं। इसे आप ऐसे समझें जैसे ३×३ के ९ होने, ऊपर फेंके गये पत्थर के भूमि पर गिरने तथा गंगा के प्रवाह को देखकर कोई यह कहे कि यह पूर्व की ओर बह रही है। —'जिज्ञासु'

सत्यार्थप्रकाश आ.फ़्ताबे हक है
अक्स इसकी शुआअ का हुआ बदरे मुनीर
ऐ चश्मे कबक! जो चौदहवीं का चाँद
है तलअते महरे माह में जलवा पज़ीर

इसी प्रकाश के प्रतिबिम्ब ने चमत्कार का प्रभाव किया है, सूर्य का प्रकाश तीव्र होता है, अत्यन्त प्रकाशमान है। कुछ आँखें तीव्र प्रकाश को सहन नहीं कर पातीं वे चन्द्रमा में उसका प्रतिबिम्ब देखती हैं। परन्तु चाँद तो उसी प्रकाश से प्रकाशित है और सूरज के निकलते ही चौदहवीं का चाँद भी प्रातः का टिमटिमाता दीपक बन जाता है, मार्गगामी पथिक! यदि चाँद ने कुछ मार्ग दिखाया हो और अज्ञान की रात का अन्धकार मिटा हो तो ले अब प्रातःकाल का समय है। **संसार के सूर्य का सहारा ले।**

उस प्रभु का धन्यवाद कर जिसने तुझे रात्रि का चन्द्रमा दिया। अब सूर्य तेरा पथ-प्रदर्शक है उसके प्रकाश से लाभान्वित हो यह सब प्रभु के प्रसाद तेरे लिए हैं और भाई! आज्ञा हो तो मेरे लिए भी। परमात्मा मुझे और तुझे दोनों को सत्य के ग्रहण व पालन का सामर्थ्य प्रदान करे। ओ३म्!

—ओ३म् शम्—

पं० चमूपति और उनका साहित्य

पं० चमूपतिजी ने प्रथम विश्वयुद्ध के आरम्भ में आर्यसमाज में प्रवेश पाया। अधिक उपयुक्त तो यह होगा कि हम यह कहें कि आर्यसमाज उनमें प्रविष्ट हुआ। बहुत छोटी आयु में ही काव्य कला उनमें प्रस्फुटित हो गई। २२-२४ वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते वे देश विख्यात कवि बन गये। हिन्दी व उर्दू दोनों भाषाओं में कविता करते थे।

गद्य लिखने पर भी उनका असाधारण अधिकार था। वे सात भाषाओं के विद्वान् थे। चार भाषाओं में लिखते थे। उनकी ज्ञान प्रसूता लौह लेखनी पर बड़े-बड़े लेखक व सम्पादक मुग्ध थे। तब एम० ए० पास अंगुलियों पर गिने जाते थे। किसी लेख को लिखते समय अपने नाम के साथ एम० ए० नहीं लिखते थे। उनका कथन था कि मैं नहीं चाहता कि कोई मेरे लेख को इसलिए पढ़े कि मैं एम० ए० हूँ। यह लेख चमूपति लिखित है इसलिए लोग इसे पढ़ें। कैसा आत्म विश्वास से भरपूर वह महामानव था।

आपके साहित्य को ५-१० बार ध्यानपूर्वक पढ़नेवाला कोई भी परिश्रमी युवक एक उत्तम लेखक बन सकता है। हिन्दी में सोमसरोवर, जीवन ज्योति, योगेश्वर कृष्ण, सन्ध्या रहस्य, यास्क युग उनकी कुछ लोकप्रिय व पठनीय पुस्तकें हैं। चौदहवीं का चाँद, वैदिक स्वर्ग व अनादि तत्त्व उर्दू से अनूदित उनकी मौलिक दार्शनिक पुस्तकें हैं। विचार-वाटिका भाग पहला दूसरा उनकी लघुपुस्तकों व लेखों के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संग्रह हैं। 'कविर्मनीषी पं० चमूपति और उनका दर्शन' भी एक खोजपूर्ण संग्रह करने योग्य ग्रन्थ है।

'भारत भक्ति' उनकी राष्ट्रीय कविताओं का एक उत्तम संग्रह है। 'दयानन्द आनन्द सागर' अनूठी शैली में रचा गया यह ऋषि जीवन पर एक रसभरा काव्य है। 'हृदय की भाषा' उनकी हिन्दी कविताओं का एक अनुपम संग्रह है। Glimpses of Dayananda और Ten Commandments उनकी दो प्रसिद्ध अंग्रेज़ी पुस्तकें हैं।

और भी बहुत कुछ लिखा। जो कुछ भी लिखा अति सुन्दर, रोचक, सरस, प्रेरक व विद्वत्तापूर्ण लिखा। चमूपति प्यारे प्रभु की प्यारी देन थे।

बीसवीं सताब्दी के तीसरे दशक से पहले ही पण्डितजी के लेखों व कविताओं की हिन्दी उर्दू के पत्रों में देश भर में भारी माँग होने लगी। वे अंग्रेज़ी के भी सिद्धहस्थ लेखक थे। गुरुकुल काँगड़ी के Vedic Magazine पर सम्पादक के रूप में नाम तो आचार्य रामदेवजी का रहता था, परन्तु इस विश्व प्रसिद्ध पत्रिका का सारा सम्पादन पं० चमूपति ही करते थे। उनके पाठकों में देश के जाने-माने विचारक, नेता व साहित्यकार थे। पत्रकार शिरोमणि महाशय कृष्ण, लाला लाजपतराय, महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, महाशय खुशहालचन्द, भाई परमानन्द, डॉ० इकबाल, महरूम, 'सरशार' कैफ़ी, पं० नाथूराम, शंकर शर्मा, श्री वासवानीजी सब उनके प्रशंसक थे।

काकोरी के हुतात्मा रामप्रसादजी 'बिस्मिल' के काव्य पर उनकी छाप है। वीर 'बिस्मिल' उनके दयानन्द आनन्द सागर काव्य पर मुग्ध थे। हुतात्मा श्यामलाल उनके सोमसरोवर के दीवाने थे। आपकी 'रणचण्डी' रचना टहलसिंह नाम का एक क्रान्तिकारी कालकोठरी में गाते हुए लाहौर के कारागार को गुञ्जा दिया करता था। यह भी स्मरण रहे कि सन् १९२० तक पण्डितजी चम्पतराय नाम से ही लिखा करते थे। उर्दू कविताओं में 'सादिक' और हिन्दी में 'चातक' उपनाम था। वे एक सच्चे महात्मा थे। बड़े पवित्रात्मा थे।

—राजेन्द्र 'जिज्ञासु'